बुन्देलखण्ड के रासोकाव्य

बुन्देलखण्ड के रासोकाव्य

डॉ० श्याम बिहारी श्रीवास्तव

आराधना ब्रदर्स
१५२ सी-गोविन्द नगर, कानपुर-६

स्वामी श्याम

इन्टरनेशनल मेडीटेशन इंस्टीटयूट
वैला आफ गॉडस कुल्लू (हिमाचल प्रदेश)

अपने अध्यात्म गुरु एवं प्रेरणा स्रोत
शान्ति स्नेह के अग्रदूत
परम पूज्य स्वामी श्याम को,
आत्मिक श्रद्धा तथा सम्मान के साथ

आशीर्वाद

डॉ० श्याम बिहारी ने अपनी पी एच० डी० उपाधि हेतु बुन्देलखण्ड में बुन्देली भाषा में लिखे गये रासोकाव्यों का अनुशीलन करके अपना शोध ग्रंथ हिन्दी भाषा को मुखरित करने के लिए प्रस्तुत किया है। रासो वीर भावना के प्रतीक हैं और शौर्य गाथाओं के द्वारा हृदयों में उत्साह भर देते हैं। यह अनुपम काव्य वीरों के इतिहास को गौरवान्वित करके, पढ़ने वालों के हृदयों में शौर्यपूर्ण विचारों को उद्दीप्त करता है।

हमारा सम्पर्क लेखक के जीवन में बाल्यकाल से ही जुड़ा रहा है। समय समय पर डॉ० श्याम बिहारी की रचनाओं को पढ़ने के अवसर मुझे मिलते रहे हैं। इन्हें युद्धकाव्य के पढ़ने में रुचि रही है। इसी से अनुशीलन का शीर्षक स्वाभाविक रूप से चयन किया गया और शोध कार्य में श्रम किया गया है।

बुन्देलखण्ड के 'रासोकाव्य' में ऐतिहासिकता है। राजाओं नायकों और शूरमाओं के शौर्य का आकलन है। तत्कालीन समाज, धर्म तथा संस्कृति पर भी गहराई से दृष्टिपात किया है जो पाठकों को आनन्द देता है। पुस्तक के दसों अध्यायों में बुन्देलखण्ड के वीरों के पराक्रम शौर्य और युद्ध कौशल को सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषित किया गया है। इसी से यह कृति केवल बुन्देली भाषा भाषियों की धरोहर न होकर समग्र हिन्दी जगत के पाठकों को तुष्टि प्रदान करेगी। मेरे अनेक आशीर्वाद।

स्वामी श्याम

२३ सितम्बर १९९२

इण्टरनेशनल मेडीटेशन इन्स्टीट्यूट
कुल्लू, वैली ऑफ गॉड्स
हिमाचल प्रदेश, भारत

इस पुस्तक के बारे में

'बुन्देलखण्ड के रासो काव्य' इस अचल के गौरवपूर्ण इतिहास की अमूल्य धरोहरो का हिसाब किताब है। इस पुस्तक म जितन तत्कालीन इतिहास सम्बन्धी घटनाओ के सूत्र-सुगम्फित हैं उससे अधिक तत्कालीन सामाजिक स्वरूप मास्कृतिक आस्था और रचना धर्म की परम्परा पर विचार किया गया है।

बुन्देलखण्ड की राज सत्ताय दिल्ली-दरबार मे खटटे मीठे अनुभवो के साथ चर्चित रही और पारिवारिक-बटवारे मे उपजन वाले कलह के साथ बलिदानी मघर्ष के माग पर अनवरत चलती रही। बुन्देलखण्ड की रासो रचनाओ म सघर्ष का यही क्रम सुरक्षित है। रासो कटक, साक मूल रूप से यश गाथायें है सघर्षो के गौरव गान हैं, आन बान की मजिला पर गाडे गय मील क पत्थर है। परम्परा का पालन करत-करते कही-कही इन रासो रचनाओ मे अतिशयता हावी हो गई और कही कहीं यथार्थ प्राणवान होकर बिखरा हुआ है।

डा० श्याम बिहारी की मतक विश्लेषण क्षमता न बुन्देलखण्ड की रासो रचनाओ मे बिखर इतिहास क सूत्र रेखाकित किय हैं, सामाजिकता को उजागर किया है सास्कृतिक पक्ष का विवेचन किया है और छन्द रस, अलकार क साथ भाषा की क्षमता का भी तौला है। डा० श्याम बिहारी का तौलन का तरीका अनुशीलन का किताबी परम्परा का अध-अनुगामी न होकर तलग्राही भी है। यह बात इस किताब को पठनीय बनाय रहगी।

८ सितम्बर १९९२

—डा० सीता किशोर
हिन्दी विभाग
शासकीय गोविन्द महाविद्यालय
सेंवढा, जिला दतिया, (म० प्र०)

भूमिका

भूमिका-लेखक डा० भगवान दास गुप्त-एल० एल० बी० पी एच० डी०, डी० लिट० अखिल भारतीय इतिहास कांग्रेस के मध्ययुगीन भारतीय इतिहास के अध्यक्ष, राष्टीय अभिलेखागार नई दिल्ली के अनुदान समिति के सदस्य उत्तर प्रदेश अभिलेखागार लखनऊ के परामर्शदाता भारतीय इतिहास संशोधक मण्डल पूना श्री नटनागर शोध संस्थान सीतामऊ (मध्य प्रदेश) जीवाजी शोध संस्थान ग्वालियर आदि से सम्बन्धित रहे हैं। वे भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद दिल्ली के वरिष्ठ फेलो भी हैं। बुंदेलखण्ड के इतिहास पर उनके पाँच ग्रन्थ और अनेकों शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

रासो शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध मे भाषा विज्ञान के विद्वानों के आपसी विवाद मे न पडकर यहाँ यह बताना पर्याप्त होगा कि रासो नाम से परिचित प्रबन्ध काव्य मे किसी भी राजा या सामंत नायक का जीवन चरित्र उसके जीवन की कुछ शौर्यपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं और संघर्षों का पद्यमय तथा गीतमय वर्णन होता है। इन विशिष्टताओं के सिवा रासो काव्यों की एक अन्य विशेषता उनके कथानकों का ट्रेजिक अंश होना है जो जनमानस पर गहरा प्रभाव डालता है। मध्यकालीन खुमान रासो बीसलदेव रासो और पृथ्वीराज रासो इसके उदाहरण हैं। खुमान रासो किसी दलपति विजय कवि द्वारा नवी दसवी सदी मे चित्तौड के रावल खुमान या खुम्माण की प्रशंसा मे रचा गया। नरपति नाल्ह ने संवत १२१२ के आसपास बीसलदेव रासो की रचना की और चन्दवरदाई ने संवत १२२५-१२४८ के बीच हिंदी का प्रथम महाकाव्य पृथ्वीराज रासो लिखा। यह सभी रासो अपने-अपने नायकों के गुणों सौन्दर्य शौर्य और कृतित्व का बहुत ही अतिरंजित तथा अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करते है। वे इतिहास की कसौटी पर भी पूर्ण रूप से खरे नहीं उतरते। पर बुन्देलखण्ड के मध्यकालीन और

अ धुनिक रासाका य जिनका अध्ययन डा० श्याम विहारी न अपन इम ग्र थ म प्रस्तुत किया ह व एतिहासिक तथ्यो के उल्लेख की दप्टि म भी अप्रामाणिक नहीं कहे जा सकत।

उपरोक्त शोध ग्रथ म डा० श्याम विहारी ने परमाल रासो दलपति राव रासो, करहिया रासो, पारीछत रासो, बाघाट रासो शत्रुजीत रासो झासी को रासो लक्ष्मीबाई रासो क अतिरिक्त तीन हास्य व्यग्य के प्रतीक रासो छछू दर रासा, घूम रासो गाडर रासो तथा तीन कटक रचनाओ पारीछत की कटक भिलसाय की कटक, झाँसी को कटक का अध्ययन प्रस्तुत किया है।

अधिकाश विद्वान परिमाल रासो को पथ्वीराज रासो का ही एक अनुच्छेद मानते हैं और उसके शीषक स्वरूप उसका नाम परमाल रासो या महोबा समया दे दते हैं। अतएव परमाल रासो को कोई अलग कृति मानना उचित प्रतीत नहीं होता। केवल यही कहा जा सकता है कि यह जुझौति के चन्देल राज्य पर वहाँ के राजा परमर्दिदव या परमाल के काल म हुए पृथ्वीराज चौहान के आक्रमण का सक्षिप्त विवरण है जिसम परमाल की ओर से आल्हा ऊदल ने महत्वपूण भाग लिया था। बुन्देलखण्ड म सवमान्य जगनिक द्वारा प्रणीत आल्हखण्ड का भी इस हिस्सा माना जाता है और इसलिए यह मान्यता भी जड पकड गई है कि चदबरदाई और जगनिक समकालीन थे। इस मिलसिले मे यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि पथ्वीराज रासा म पथ्वीराज को नायक ठहराया गया है जबकि आल्हाखण्ड म पथ्वीराज चौहान के विरोधी जयचन्द के चन्देल राजा परमाल और उनके योद्धा आल्हा ऊदल के निकट सम्बन्धों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार जसे पथ्वीराज रासो और आल्हाखण्ड के कथानको के चरित नायक परस्पर विरोधी बताय गय हैं वसे ही उनके रचनाकार चदवरदाइ और जगनिक भी विरोधी खमा म खडे कर दिए गए हैं।

परमाल रासो म वर्णित पृथ्वीराज के जुझौति (बुन्देलखण्ड) क आक्रमण का उल्लेख ललितपुर क पास मदनपुर की बारादरी क शिलालेख म इस प्रकार मिलता है—

> अरुणा राजस्य पौत्रेण मोमश्वर सूनुना।
> जजाक भुक्ति देशोऽय, पथ्वीराजेन लुण्टित॥ सवत १२३९

इसमे यह ता स्पष्ट है कि पथ्वीराज न जजाक भुक्ति अथवा बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया था। तब चदला क अन्तगत बुन्दलखण्ड का नाम जजाकभुक्ति या जुझौति था। पथ्वीराज चौहान का यह आक्रमण उपरोक्त शिलालेख क अनुसार सवत १२३९ (११८२ ई) म हुआ था। इसम परमाल रासा क सवप्रमुख तथ्य

चौहान चन्देलों के बीच हुए इस भयंकर संघर्ष की ऐतिहासिकता सहज ही सिद्ध हो जाती है। किन्तु इतना अवश्य है कि परमाल रासो में परमाल की मृत्यु का इस युद्ध में जो उल्लेख किया गया है वह तब न होकर सन १२०३ ई० में कुतबुद्दीन ऐबक के आक्रमण के समय हुई थी।

दलपतराव रासो (संवत १७६४ वि०) रचनाकार जोगीदास भाण्डरी इस रासो मे दतिया के राव शुभकरण (१६४०–७८ ई०) और उनके पुत्र राव दलपत के दक्षिण में युद्धों और जाजऊ के युद्ध (२० जून १७०७ ई०) में औरंगजेब के पुत्र आजम की ओर से लडते हुए दलपतराव की मृत्यु का प्रामाणिक वर्णन है।

करहिया को रासो मे जुलाई-अगस्त सन १७६७ ई० में जवाहर सिंह जाट के आक्रमण का वर्णन है। जवाहरसिंह जाट ने भिण्ड भदावर ग्वालियर पर जो आक्रमण किया था उसी समय आतरा के पास हुए युद्ध की घटना का वर्णन करहिया को रासो मे सुरक्षित है।

शत्रुजीत रासो (१८५८ वि०) रचनाकार किशुनेश भाट इसमें दतिया के राव शत्रुजीत का महादजी सिंधिया की विधवा बाइयों की रक्षार्थ लखवा दादा के साथ महादजी के दत्तक पुत्र दौलतराव सिंधिया के फ्रांसीसी सेनानायक पेरों या पीरू के विरुद्ध युद्ध का वर्णन है। इस विवरण के प्रमुख व्यक्ति और घटनायें पूर्णरूप से ऐतिहासिक हैं।

पारीछत रासो और बाघाट रासो क्रमश श्रीधर कवि तथा प्रधान आनन्द सिंह कुडरा द्वारा और बाघाट का समय वाजूराय प्रधान द्वारा रचे गये हैं। तीनों ही में दतिया और ओरछा के बीच बाघाट को लेकर सीमा विवाद के कारण हुए युद्ध का वर्णन है। यह युद्ध संवत् १८७२–१८७३ वि० में हुआ था।

बाजूराय कृत भगवन्तसिंह रासो नवाब पुरदिल खाँ की समय में सम्राट औरंगजेब के काल में भलमा धामौना और एरछ के मुगल फौजदार पुरदिल खाँ के तथा इदुरखी के विद्रोही जमादार भगवत सिंह के बीच युद्ध का वर्णन है। यह युद्ध १६८५–८६ ई० में कभी हुआ था। बस भगवन्तसिंह के आतरा के पास मार्च १६८६ ई० में मारे जाने के उल्लेख हैं।

कल्याणसिंह कुडरा कृत झाँसी को रासो में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के सन् १८५७ ई० में अंग्रेजों से युद्ध और मृत्यु का वर्णन है। मदनेश कृत लक्ष्मीबाई रासो कुडरा के रासो के आधार पर झाँसी पर ओड़छा के नत्थे खाँ के विफल आक्रमण सम्बन्धी रचना है।

छछूंदर रासो गाडर रासो और घूस रासो सामंतो कायरता दरबारी चापलूसी और भ्रष्टाचार पर तीखे व्यंग्य हैं। ये रासो प्रबन्ध काव्यों की श्रेणी में

नही रख जा मकत । डॉ० श्याम विहारी न उ ह 'प्रतीक रासो कहा है जो रासो काव्या का नया वर्गीकरण है ।

पारीछत को कटक मिलसाय को कटक तथा झाँसी को कटक म प्रमुख रूप म सनिक अभियाना तथा छोटे-मोटे सघर्षो न चित्रण है । व्यक्ति तथा स्थानो की प्रामाणिकता क कारण य छोटी रचनायें महत्वपूण हो गइ हैं ।

फिर भी सब मिलाकर यह कहा जा मकता है कि हि"दी साहित्य के मुगल कालीन और आधुनिक बु"देलखण्ड क रासा का"या का शोधपण अध्ययन प्रस्तुत कर डॉ० श्याम बिहारा श्रीवास्तव न न कवल हि"दा क रासो काव्यो की श्रृंखला म नई कडियाँ जोडी हैं बल्कि उसम बु"देलखण्ड क यागदान को उजागर भी किया है । अतएव वे निश्चय ही बधाई क पात्र हैं

११३ खत्रयाना माग
झाँसी (उ० प्र०)–२८४००२

डॉ० भगवानदास गुप्त

अपनी ओर से

आदिकाल की वीरगाथायें पढ़ने की मुझे रुचि थी। इसी रुचि ने हिन्दी साहित्य में एम० ए० करने के उपरांत वीरकाव्यों के विषय में कुछ अधिक जानने के लिये मुझे प्रेरित किया और अध्ययन को एक दिशा प्रदान करने की दृष्टि से मैंने मात्र बुन्देलखण्ड के युद्ध विषयक साहित्य का अध्ययन प्रारम्भ किया।

डॉ० भगवानदास माहौर, शास्त्री एवं श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव दतिया द्वारा सम्पादित कुछ रासोग्रन्थ उपलब्ध हुए और उन्हीं सम्पादित रासोग्रन्थों को आधार बनाकर मैंने शोधकार्य प्रारम्भ करने का निश्चय किया। शोधकार्य का शीर्षक निश्चित करके उसे क्रम देने की दृष्टि से रूपरेखा तैयार करने में डॉ० भगवत व्रत मिश्र पूर्व प्राचार्य, शा० गोविन्द महाविद्यालय सेंवढ़ा (दतिया) डॉ० शिवशरण शर्मा, संस्कृत विभाग म० ल० बा० कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय ग्वालियर, डॉ० रतनलाल हिन्दी विभाग शास० महाविद्यालय दतिया पं० गंगाराम शास्त्री सेंवढ़ा, श्री अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव संचालक सूचना एवं प्रकाशन विभाग भोपाल एवं डॉ० सीता किशोर ने पर्याप्त सहयोग प्रदान किया।

रुचि के अनुकूल कार्य मिल जाने पर अध्ययन का नया मार्ग प्रशस्त करने का अवसर प्राप्त हुआ और मैंने डॉ० भगवत व्रत मिश्र के निर्देशन में सामग्री एकत्रित करके रूपरेखा के आधार पर अनुशीलन कार्य प्रारम्भ कर दिया। इसी बीच डॉ० भगवत व्रत मिश्र सेवा निवृत्त होकर सेंवढ़ा से अपने गृह नगर सिंगाही लखीमपुर खीरी चले गये और मार्गदर्शक परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न हो गई। ऐसी परिस्थिति में डा० हरिहर गोस्वामी हिन्दी विभाग शास० महाविद्यालय दतिया ने मार्गदर्शन की स्वीकृति देकर मुझे उपकृत किया। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

पृथ्वीराज रासो से प्रारम्भ होने वाली रासो काव्य परम्परा बुन्देलखण्ड जनपद के साहित्यकारों ने भी अपनाई और मध्यकाल में मुगलों के शासन काल के समसामयिक तथा इसके पश्चात १८वीं शताब्दी तक के रासो काव्यों की बुन्देलखण्ड में एक लम्बी परम्परा देखने को मिलती है। यद्यपि ये रासोकाव्य आकार में छोटे हैं फिर भी इनका महत्व साहित्य जगत में निर्विवाद रूप से स्थायी है। मेरे इस प्रयास के पूर्व इन रासो काव्यों पर समुचित रूप से प्रकाश नहीं डाला गया। यहाँ तक कि कुछ रासो काव्य या तो किसी राजकीय पुस्तकालय में अथवा किसी कवि के बस्ते में बंधे बंधे नष्ट होने की स्थिति में पहुँच चुके थे।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से शोध प्रबन्ध को इन अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय में 'रासो' शब्द की समीक्षा प्रस्तुत की गई है एवं पृथ्वीराज रासो से लेकर अब तक के रासो काव्यों की परम्परा संक्षिप्त परिचय सहित दी गई है।

द्वितीय अध्याय में बुन्देलखण्ड का सीमागत परिचय प्रस्तुत किया गया है तथा बुन्देलखण्ड के तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परिवेश को भी उपलब्ध रासो ग्रन्थों के आधार पर स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय में मुगल काल पूर्व के उपलब्ध रासो काव्यों पर विचार किया गया है। इस सम्बन्ध में एक मात्र रासो ग्रन्थ परिमाल रासो का नाम लिया जाता है परन्तु यह रासो ग्रन्थ मुझे उपलब्ध नहीं हो सका। इस रासो ग्रन्थ के सम्बन्ध में जो भी विचार किया गया है, वह श्री रामचरण हयारण 'मित्र' के ग्रन्थ बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य के आधार पर किया गया है परन्तु श्री हयारण जी ने जिस सामग्री का साहित्यिक अनुशीलन के लिए प्रमाण दिया है, वह सामग्री भी परम्परा से प्राप्त मौखिक ही है। अतएव मौखिक सामग्री को आधार मात्र आधार नहीं कहा जा सकता है।

चतुर्थ अध्याय में मुगलकाल के समसामयिक रासो ग्रन्थों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस समय का सब प्रमुख रासो काव्य जोगीदास भाण्डेरी का दलपतिराव रायसा है। महाराजा शुभ करण और उनके सुपुत्र महाराजा दलपतिराव ने मुगलों की अच्छी सेवा सहायता की। दोनों ही सुभट पिता-पुत्र ने मुगलों का पक्ष लेकर दक्षिण और उत्तर भारत की लड़ाइयों में भाग लेकर मुगलों को विजय दिलाई। दलपतिराव रायसा में तत्कालीन ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों का जो चित्रण किया गया है उस आधार पर इन विषयों पर अलग से शोध किया जा सकता है।

पंचम अध्याय में मुगल काल के पश्चात् अब तक प्राप्त रासो काव्य हैं। इनमें पारीछत रायसा और बाघाट रासो में दतिया नरेश पारीछत के टीकमगढ़ राज्य से हुए एक छोटे से युद्ध का विवरण है, इन रासो काव्यों में दतिया से बाघाट तक के मार्ग के गांवों का भौगोलिक उल्लेख महत्वपूर्ण है। इस काल में लिखे गये अन्य दो रासो काव्य झांसी की रानी और अंग्रेजों के युद्धों के सम्बन्ध में हैं।

षष्टम अध्याय में कटक नाम के ग्रन्थों का विवरण दिया गया है। कटक रचनायें बुन्देलखण्ड के वीर काव्य की एक विशिष्ट विधा है। इनमें राजाओं अथवा दलपतियों की सेना के प्रयाण एवं युद्धों का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय में बुन्देलखण्ड में लिखे गए हास्य रस के रासो काव्यों की

समीक्षा प्रस्तुत की गई है। य प्रतीक रासो तत्कालीन आडम्बरपूर्ण वीरता और भीरु सामन्तों पर तीव्र व्यग्य क रूप म लिख गय हैं।

अष्टम अध्याय म उपलब्ध रासो काव्यों की साहित्यिक अभिव्यक्तियों का उल्लेख किया गया है। इस अध्याय को प्रकृति चित्रण भाषा एव भाषा रस छन्द अलकार खण्डकाव्य या महाकाव्य की दृष्टि म अलग अलग शीर्षकों म बाँटा गया है।

नवम अध्याय म बुन्देली रासो काव्यों को हिन्दी साहित्य शास्त्र का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

दशम अध्याय इस शोध प्रबन्ध का उपसहार है। इस अध्याय म बुन्देलखण्ड के उपलब्ध रासो काव्यों की ऐतिहासिक एव सामाजिक धार्मिक एव सास्कृतिक और साहित्यिक उपलब्धियो की समीक्षा की गई है। इन रासो काव्यो म कथानको म तत्कालीन इतिहास की घटनाओ व तिथियो का विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा काल क क्रमानुसार विदेशी सस्कृति का भी क्षेत्र की सस्कृति पर पड़ता हुआ प्रभाव स्पष्ट होता है।

इस काय की सहायक सामग्री व जानकारियो क सकलन म श्री कामता प्रसाद सड़या व्याख्याता दतिया न पर्याप्त सहयोग प्रदान किया जो उस समय दतिया राज्य क कवि और उनका काव्य शीषक पर शोध काय कर रहे थ। श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव दतिया न पुस्तकें पत्र-पत्रिकायें तथा मौखिक जानकारियाँ देकर इस काय को गति दी मैं हृदय स आभारी हूँ।

पूज्य श्री राधारमण वैद्य पूव प्राचाय दतिया एव श्री पा० सी० जैन पूव आचाय माधव महाविद्यालय ग्वालियर न महत्वपूर्ण सुझाव देकर मुझे प्रोत्साहित किया। इस हेतु मैं कृतकृत्य हूँ।

डॉ० महावीर प्रसाद अग्रवाल रीवा डॉ० वीरेन्द्र सिंह परिहार छपरा (सिवनी) श्री नर्मदा प्रसाद गुप्त छतरपुर डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल आगरा श्री गुनसागर सत्यार्थी टीकमगढ़ डॉ० गनशीलाल बुधौलिया राठ डॉ० श्रीनारायण अग्निहोत्री उरई श्री बाबूलाल गोस्वामी दतिया डॉ० हरिशकर शर्मा प्राचाय सेंवढ़ा श्री राधाचरण झारखड़िया सेंवढ़ा श्री कैलाश नारायण पाण्डेय रढर राजवैद्य श्री प्रद्युम्न कुमार गोस्वामी तथा राज्याचाय श्री श्रीधर राव अग्निहोत्री श्री रामेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव क अमूल्य सुझावो के लिए हृदय म कृतज्ञ हूँ।

स्व० डा० अगरचद नाहटा बीकानेर, स्व० डा० श्याम सुन्दर बादल राठ, स्व० श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य आजमगढ़ स्व० श्री कृष्णानन्द गुप्त गरौठा स्व० श्री रामभित्त चतुर्वेदी रीवा एव स्व० श्री गुलाब सिंह श्रीवास्तव सेंवढ़ा, आज जीवित होते तो इस प्रयास को देखकर व कितने प्रसन्न होते। इस शोध काय के

दौरान चिट्ठी पत्री पत्र पत्रिकाओं पुस्तकों और मौखिक चर्चाओं से इन विद्वानों ने मेरी मदद की थी।

अनन्य ग्रन्थागार मेंवढ़ा के संस्थापक श्री जगदम्बा प्रसाद श्रीवास्तव, एवं उनके परिवारी जनों का भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने समय समय पर आवश्यक पाण्डुलिपियाँ देखने का मुझे अवसर प्रदान किया। डा० सीताकिशोर हिन्दी विभाग शा० गोविन्द महाविद्यालय सेंवढ़ा ने ग्रंथ मे स्थित तथ शोध प्रबन्ध को स्वरूप सवारने मे सहायता दी। वे मेरे दादा है। उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन धृष्टता होगी। डॉ० कामिनी हिन्दी विभाग शा० गोविन्द महाविद्यालय सेंवढ़ा का हठ समन्वित आग्रह मुझे कार्य करने को प्रेरित करता रहा तथा श्री शिवचरन पाठक पूर्व विधायक सेंवढ़ा की अपार अनुकम्पाओं के लिए मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। अपने मार्गदर्शक डा० हरिहर गोस्वामी के प्रति विनयावनत हूँ जिनके असीम अनुग्रह ने मुझे किसी प्रकार की असुविधा का आभास भी नहीं होने दिया।

मध्यकालीन इतिहासविद् डा० भगवान दास गुप्त झाँसी का स्नेहाशीष मेरा सम्बल बना। उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों के बहुमूल्य सुझाव देकर तथा भूमिका लिखकर इस कृति को अधिक महत्त्वपूर्ण बना दिया। डॉ० श्रीमती सुधा गुप्ता के प्रति विनत हूँ जिन्होंने सदा मुझे क्रियाशील रहने की प्रेरणा दी।

गांधी पुस्तकालय सेंवढ़ा के अध्यक्ष एवं लाइब्रेरियन महोदय का भी मैं आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने समय समय पर मुझे वांछित सन्दर्भ ग्रंथ उपलब्ध कराये।

इस अवसर पर मैं अपने स्वर्गीय पिता श्री रामसेवक श्रीवास्तव एवं स्वर्गीया माता श्रीमती सरयू देवी का पावन स्मरण अवश्य करूँगा जो मेरी साहित्यिक गतिविधियों में सदा प्रसन्न रहते थे। बड़े भैया श्री ओमप्रकाश श्रीवास्तव के प्रति श्रद्धावनत हूँ जिन्होंने कभी रीझकर कभी खीझकर मेरी शिक्षा दीक्षा पूरी कराई और मुझे कुछ लिखने लायक बनाया।

अन्त में एक स्नेह स्मरण जीवन सहचरी श्रीमती किशोरी के लिए जो अपार धैर्य के साथ साथ प्रबन्ध लेखन की अवधि में घर गृहस्थी सम्हालती रहीं और मुझ आवश्यक आवश्यकताओं के लिए भी नहीं टोका।

मुद्रक व प्रकाशक श्री कृष्णचन्द्र गुप्त जी, आराधना प्रेस [illegible] का भी मैं आभार व्यक्त करना चाहूँगा जिन्होंने स्वयं रुचि लेकर मुद्रण कार्य में शीघ्रता की।

सेंवढ़ा विजया दशमी अक्टूबर १९८९ डा० श्यामबिहारी श्रीवास्तव

क्रम

हिन्दी साहित्य में रासो काव्य परम्परा

रासो

आदिकाल के हिन्दी साहित्य में वीर गाथायें प्रमुख हैं। वीर गाथाओं के रूप में ही 'रासो' ग्रन्थों की रचनायें हुई हैं।

हिन्दी साहित्य में 'रास' या 'रासक' का अर्थ लास्य से लिया गया है जो नृत्य का एक भेद है। अतः इसी अर्थ भेद के आधार पर गीत नृत्य परक रचनायें 'रास' नाम से जानी जाती हैं। 'रासो' या रासउ में विभिन्न प्रकार के अडिल्ल, दूहा, छप्पय, कुण्डलियाँ, पद्धटिका आदि छन्द प्रयुक्त होते हैं। इस कारण ऐसी रचनायें 'रासो' के नाम से जानी जाती हैं।

'रासो' शब्द विद्वानों के लिए विवाद का विषय रहा है। इस पर किसी भी विद्वान का निश्चयात्मक एवं उपयुक्त मत प्रतीत नहीं होता। विभिन्न विद्वानों ने अनेक प्रकार से इस शब्द की व्याख्या करने का प्रयास किया है। कुछ विद्वानों ने रासो की व्युत्पत्ति 'रहस्य' शब्द के प्राकृत रूप से मानी है। श्री रामनारायण दूगड़ लिखते हैं— 'रासा या रासो शब्द 'रहस' या 'रहस्य' का प्राकृत रूप मालूम पड़ता है। इसका अर्थ गुप्त बात या भेद है। जैसे कि शिव रहस्य, देवी रहस्य आदि ग्रन्थों के नाम हैं, वैसे शुद्ध नाम 'पृथ्वीराज रहस्य' है जो कि प्राकृत में पृथ्वीराज रास, रासा या रासो हो गया।'[1]

डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल और कविराज श्यामदास के अनुसार 'रहस्य' शब्द का प्राकृत रूप 'रहस्सो' बनता है जिसका कालान्तर में उच्चारण भेद से बिगड़ता हुआ रूपान्तर रासो बन गया है। रहस्य-रहस्सो-रअस्सो-रासो[2] इसका विकास क्रम है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'रासो' की व्युत्पत्ति 'रसायण' से मानते हैं।[3] डॉ. उदयनारायण तिवारी 'रासक' शब्द से रासो का उद्भव मानते हैं।[4]

बीसलदेव रासो में 'रास' और 'रसायन' शब्द का प्रयोग काव्य के लिए हुआ है। 'नाद रसायन आरंभई', एवं 'रास रसायण सुणै सब कोई' आदि।[5]

रस को उत्पन्न करने वाला काव्य रसायन है। बीसलदेव रासो में प्रयुक्त 'रसायन' एवं 'रसिय' शब्दों से 'रासो' शब्द बना।

प्रो. ललिता प्रसाद सुकुल रसायण को रस की निष्पत्ति का आधार मानते हैं।[8]

मुंशी देवी प्रसाद के अनुसार—'रासो के मायने कथा के हैं, वह रूढ़ि शब्द है। एक वचन 'रासो' और बहुवचन 'रासा' है। मेवाड़, ढूंढाड़ और मारवाड़ में झगड़े को भी रासो कहते हैं। जैसे यदि कई आदमी झगड़ रहे हों या वाद विवाद कर रहे हों, तो तीसरा आकर पूछेगा 'काई रासो है'। लम्बी चौड़ी वार्ता को भी रासो और रसायण कहते हैं। बकवाद को भी रासा और रामायण ढूंढाण में बोलते हैं। कांई रामायण है? क्या बकवाद है? यह एक मुहावरा है। ऐसे ही रासो भी इस विषय में बोला जाता है काई रासो है?'[9]

महामहोपाध्याय डॉ. हरप्रसाद शास्त्री—'राजस्थान के भाट चारण आदि रासा (क्रीड़ा या झगड़ा) शब्द से रासो का विकास बतलाते हैं।'[8]

गार्सा-द-तासी ने रासो शब्द राजसूय से निकला बतलाया है।[9]

डॉ. ग्रियर्सन 'रासो' का रूप रासा अथवा रासो मानते हैं तथा उसकी निष्पत्ति राजादेश से हुई बतलाते हैं। इनके अनुसार—"इस रासो शब्द की निष्पत्ति 'राजादेश' से हुई है क्योंकि आदेश का रूपान्तर आयसु है।'[10]

महामहोपाध्याय डॉ. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा हिन्दी के 'रासा' शब्द को संस्कृत के 'रास' शब्द से अनुस्यूत कहते हैं। उनके मतानुसार—'मैं रासा शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के रास शब्द से मानता हूँ। रास शब्द का अर्थ विलास भी होता है (शब्द कल्पद्रुम चतुर्थ काण्ड) और विलास शब्द चरित इतिहास आदि के अर्थ में प्रचलित है।'[11]

डॉ. ओझा जी ने अपने उपर्युक्त मत में रासा का अर्थ विलास बतलाया है जबकि श्री डॉ. आर. मंकड रास शब्द की व्युत्पत्ति तो संस्कृत की 'रास' धातु से बतलाते हैं, पर इसका अर्थ उन्होंने जोर से चिल्लाना लिया है, विलास के अर्थ में नहीं।

डॉ. दशरथ शर्मा एवं डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है कि रास परम्परा की गीत नृत्य परक रचनायें ही आगे चलकर वीर रस के पद्यात्मक इतिवृत्तों में परिणत हो गईं। 'रासा प्रधानतः गानयुक्त नृत्य विशेष से क्रमशः विकसित होते होते उपरूपक और फिर उपरूपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबन्धों में परिणत हो गया।'[12]

इन गेय नाट्यों का गीत भाग कालान्तर में क्रमशः स्वतन्त्र श्रव्य अथवा

पाठ्य काव्य हो गया और इनके चरित नायकों के अनुसार इसमें युद्ध वर्णनों का समावेश हुआ।[13]

डॉ० विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी रासो शब्द को 'राजयश' शब्द से विनिश्रृत हुआ मानते हैं।[14]

साहित्याचार्य मथुरा प्रसाद दीक्षित रासो पद का जन्म राजस्व से बतलाते हैं।[15]

आचार्य सदाशिव दीक्षित रासो शब्द को रास, राजस्व, और राजयश में से किसी एक शब्द से प्रादुर्भूत हुआ बतलाते हैं।[16]

इन अभिमतों के विश्लेषण का निष्कर्ष रासो शब्द रास का विकास है। बुन्देलखण्ड में कुछ ऐसी उक्तियाँ भी पाई जाती हैं, जिनसे रासो शब्द के स्वरूप पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है जैसे "होन लगे सास बहू के राछरे"। यह 'राछरा' शब्द रासो से ही सम्बन्धित है। सास बहू के बीच होने वाले वाक्युद्ध को प्रकट करने वाला यह 'राछरा' शब्द बड़ी स्वाभाविकता से रायसा या रासो के शाब्दिक महत्त्व को प्रकट करता है। वीर काव्य परम्परा में यह रासो शब्द युद्ध सम्बन्धी कविता के लिए ही प्रयुक्त हुआ है। इसका ही बुन्देलखण्डी संस्करण राछरो है।

उपर्युक्त सभी मतों के निष्कर्षस्वरूप यह एक ऐसा काव्य है जिसमें राजाओं का यश वर्णन किया जाता है और यश वर्णन में युद्ध वर्णन स्वतः समाहित होता है।

परम्परा

रासो काव्य परम्परा हिन्दी साहित्य की एक विशिष्ट काव्यधारा रही है, जो वीरगाथा काल में उत्पन्न होकर मध्य युग तक चली आई। कहना चाहिए कि आदि काल में जन्म लेने वाली इस विधा को मध्यकाल में विशेष पोषण मिला। 'पृथ्वीराज रासो' से प्रारम्भ होने वाली यह काव्य विधा देशी राज्यों में भी मिलती है। तत्कालीन कविगण अपने आश्रयदाताओं को युद्ध की प्रेरणा देने के लिए उनके यश पौरुष आदि का अतिरंजित वर्णन इन रासो काव्यों में करते रहे हैं।

रासो काव्य परम्परा में सर्वप्रथम ग्रन्थ 'पृथ्वीराज रासो' माना जाता है। संस्कृत, जैन और बौद्ध साहित्य में 'रास', 'रासक' नाम की अनेक रचनायें लिखी गई। गुर्जर एवं राजस्थानी साहित्य में तो इसकी एक लम्बी परम्परा पाई जाती है।

यह निर्विवाद सत्य है कि संस्कृत काव्य ग्रन्थों का हिन्दी साहित्य पर बहुत प्रभाव पड़ा। संस्कृत काव्य ग्रन्थों में वीर रस पूर्ण वर्णनों की कमी नहीं है। ऋग्वेद में तथा शतपथ ब्राह्मण में युद्ध एवं वीरता सम्बन्धी सूक्त हैं। महाभारत तो वीर काव्य ही है। यहीं से सूत, मागध आदि द्वारा राजाओं की प्रशंसा का सूत्रपात हुआ जो आगे चलकर भाट, वंदीजन, चारण दुनिया आदि द्वारा अतिरंजित रूप

को प्राप्त कर गया। वीर काव्य की दृष्टि से रामायण में भी युद्ध के अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन हैं। किरातार्जुनीय में वीरातियों द्वारा वीर रस की सृष्टि बड़ी स्वाभाविक है। 'उत्तर रामचरित' में जहाँ 'एको रस करुण एव' का प्रतिपादन है वहीं चन्द्रकेतु और लव के वीर रस से भरे वाद विवाद भी है। भट्ट नारायण कृत 'वेणी संहार' में वीर रस का अत्यन्त सुन्दर परिपाक हुआ है। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी की वीर काव्य प्रवृत्ति संस्कृत साहित्य से ही विनिश्रित हुई है। डॉ. उदय नारायण तिवारी ने 'वीर काव्य' में हिन्दी की वीर काव्यधारा का उद्गम संस्कृत की वीर रस रचनाओं से माना है।

रासो परम्परा दो रूपों में मिलती है—प्रबन्ध काव्य और वीरगीत। प्रबन्ध काव्य में 'पृथ्वी राज रासो' तथा वीर गीत के रूप में वीसलदेव रासो' जैसी रचनायें हैं। जगनिक का रासो अपने मूल रूप में तो अप्राप्त है किन्तु ,आल्ह खण्ड' नाम की वीर रस रचना उसी का परिवर्तित रूप है। आल्हा ऊदल एवं पृथ्वीराज की लड़ाइयों से सम्बन्धित वीर गीतों की यह रचना हिन्दी भाषी क्षेत्र में जनमानस में गूंज रही है।

आदि काल की प्रमुख रचनायें पृथ्वीराज रासो खुमान रासो एवं वीसलदेव रासो हैं। हिन्दी साहित्य के प्रारम्भ काल की ये रचनायें वीर रस एवं शृंगार रस का मिला जुला रूप प्रस्तुत करती हैं।

जैन साहित्य में 'रास' एवं रासक नाम से अभिहित अनेक रचनायें हैं जिनमें सन्देश रासक, भरतेश्वर बाहुबलि रास बच्छूलिरास आदि प्रतिनिधि हैं।

आदि काल की बहुत सी रचनायें तो अनुपलब्ध ही हैं। संकेत सूत्रों के आधार पर सूचना मात्र मिलती है अथवा काल क्रमानुसार कुछ रचनाओं का रूप ऐसा परिवर्तित हो गया है कि उनके मूल रूप का अनुमान भी लगाना कठिन हो गया है। 'पृथ्वीराज रासो' जैसी वृहदाकार रचनाओं की ऐतिहासिकता संदिग्ध है। उसकी तिथियों घटनाओं आदि के विषय में विद्वानों में मतभेद हैं।

पृथ्वीराज रासो एवं वीसलदेव रासो को कुछ विद्वान सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दी की रचना मानते हैं। डॉ. माताप्रसाद गुप्त इन्हें १३वीं १४वीं शताब्दी का मानते हैं।[17]

यह रासो परम्परा हिन्दी के जन्म से पूर्व अपभ्रंश में वर्तमान थी तथा हिन्दी की उत्पत्ति के साथ साथ गुर्जर साहित्य में।[18]

अपभ्रंश में 'मुंजरास' तथा 'सन्देश रासक' दो रचनायें हैं। इनमें से मुंजरास अनुपलब्ध है। केवल हेमचन्द्र के सिद्ध हेम व्याकरण ग्रन्थ में तथा मेरुतुंग के प्रबन्ध चिन्तामणि में इसके कुछ छन्द उद्धृत किए गये हैं। डॉ. माता प्रसाद गुप्त 'मुंजरास' का रचना काल १०५४ वि. और ११६० वि. के बीच मानते हैं क्योंकि

मुंज का समय १००८ वि से १०५४ वि का है।[19] 'संदेश रासक' को विद्वानों ने १२०३ वि का रचना माना है।[20] पृथ्वीराज रासो की तरह 'मुंजरास' एवं 'संदेश रासक' भी प्रबन्ध रचनायें हैं। पृथ्वीराज रासो दुखान्त रचना है। बीसलदेव रासो सुखान्त रचना है एवं इसी तरह 'संदेश रासक' सुखान्त एवं 'मुंजरास' दुखान्त रचनायें हैं।

अपभ्रंश काल की एक और रचना जिनदत्त सूरि का 'उपदेश रसायन रास' है। यह भक्ति परक धार्मिक रचना है। डा माता प्रसाद गुप्त जिनदत्त सूरि का स्वर्गवास सं. १२६५ वि में मानते हैं।[21] अतः यह रचना सं. १२६५ वि से कुछ पूर्व की ही होनी चाहिए। अपभ्रंश की उपर्युक्त रचनायें रासो काव्य की मुख्य प्रवृत्तियों की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं करती।[22]

गुर्जर साहित्य में लिखी रासो रचनायें आकार में छोटी हैं। इनके रचयिता जैन कवि थे और उन्होंने इनकी रचना जैन धर्म सिद्धान्तों के अनुसार की।

सर्वप्रथम 'शालिभद्र सूरि की 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' एवं 'बुद्धि रास' रचनायें उपलब्ध होती हैं। भरतेश्वर बाहुबलि रास' राजसत्ता के लिए हुआ भरतेश्वर एवं बाहुबलि का संघर्ष है जो जैन तीर्थंकर स्वामी ऋषभदेव के पुत्र थे। इसकी रचना वीर रस में हुई है। बुद्धि रास' शान्त रस में लिखा गया उपदेश परक ग्रन्थ है।

रास परक रचनायें

१ उपदेश रसायन रास–यह अपभ्रंश की रचना है एवं गुर्जर प्रदेश में लिखी गई है। इसके रचयिता श्री जिनदत्त सूरि हैं। कवि की एक और कृति 'कालस्वरूप कुलक' १२०० वि की घटना का संकेत करती है[23] इससे यह माना जाता है कि कवि की कृतियाँ १२०० वि के आसपास की रही होंगी। यह 'अपभ्रंश काव्य त्रयी' में प्रकाशित है और दूसरा डॉ दशरथ ओझा और डा दशरथ शर्मा के सम्पादन में रास और रासान्वयी काव्य में प्रकाशित किया गया है। दोनों प्रकाशनों में अन्तर केवल इतना है कि प्रथम संस्करण में ३२ छन्द और दूसरे संस्करण में ८० छन्द हैं। दोनों में पाठान्तर पाया जाता है।

२ भरतेश्वर बाहुबलि रास–शालिभद्र सूरि द्वारा लिखित इस रचना के दो संस्करण मिलते हैं। पहला प्राच्य विद्या मन्दिर बड़ौदा में प्रकाशित किया गया है तथा दूसरा 'रास' और रासान्वयी काव्य में प्रकाशित हुआ है। कृति में रचनाकाल सं. १२४१ वि दिया हुआ है। इसकी छन्द संख्या २०३ है। इसमें जैन तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्रों भरतेश्वर और बाहुबलि में राजगद्दी के लिए हुए संघर्ष का वर्णन है।[24]

३ बुद्धि रास–यह सं १२४१ के आसपास की रचना है। इसके रचयिता शालिभद्र सूरि हैं। कुछ छन्द संख्या ६३ है। यह उपदेशपरक रचना है। यह भी रास और रासान्वयी काव्य में प्रकाशित है।[25]

४ जीवदया रास–यह रचना जालौर पश्चिमी राजस्थान की है। रास और रासान्वयी काव्य में संकलित है। इसके रचयिता कवि आसगु हैं। सं १२५७ वि में रचित इस रचना में कुल ५३ छन्द हैं।[26]

५ चन्दन बाला रास–जीवदया रास के रचनाकार आसगु की यह दूसरा रचना है। यह भी १२५७ वि के आसपास की रचना है।[27] कुल छन्द संख्या ३५ है। यह श्री अगरचन्द नाहटा द्वारा सम्पादित राजस्थान भारती में प्रकाशित है।

६ रेवतगिरि रास–यह सोरठ प्रदेश की रचना है। रचनाकार श्री विजय सेन सूरि हैं। यह सं १२८८ वि के आसपास की रचना मानी जाती है। इसकी छन्द संख्या ७२ है। यह 'प्राचीन गुर्जर काव्य' में प्रकाशित है।[28]

७ नेमि जिणंद रास या आबू रास–यह गुर्जर प्रदेश की रचना है। रचनाकार पाल्हण एवं रचना काल सं १२०८ वि है। छन्द संख्या ५५ है।[29]

८ नेमिनाथ रास–इसके रचयिता सुमति गणि माने जाते हैं। कवि की एक अन्य कृति गणधर सार्ध शतक वृत्ति सं १२९५ की है। अतः यह रचना इस तिथि के आसपास की रही होगी।[30] छन्द संख्या ५५ है।

९ गय सुकमाल रास–यह रचना दो संस्करणों में मिली है। जिनके आधार पर अनुमानतः इसकी रचना तिथि लगभग सं १३०० वि मानी गई है। इसके रचनाकार देल्हणि है। छन्द संख्या ३४ है। श्री अगरचन्द नाहटा द्वारा सम्पादित राजस्थान भारती पत्रिका में प्रकाशित है तथा दूसरा संस्करण रास और रासान्वयी काव्य में है।[31]

१० सप्त क्षेत्रिसु रास–यह रचना गुर्जर प्रदेश की है। इसकी कुल छन्द संख्या ११९ है तथा इसका रचना काल सं १३२७ वि माना जाता है।[32]

११ पेथड रास–यह गुर्जर प्रदेश की रचना है। रचनाकार मंडलीक हैं। रचनाकाल १३६० के लगभग माना गया है।[33] इसकी कुल छन्द सं ६५ है।

१२ कच्छूलि रास–यह रचना भी गुर्जर प्रदेश के अन्तर्गत है। रचना की तिथि सं १३६३ वि माना जाती है। यह रचना ३५ छन्दों में समाप्त हुई है।[34]

१३ समरा रास–यह अम्बदेव सूरि की रचना है। इसमें सं १३६१ तक की घटनाओं का उल्लेख होने से इसका रचनाकाल सं १३७१ के बाद माना गया है। यह पाटण गुजरात की रचना है।

१४ प। पडव रास–शालिभद्र सूरि द्वारा रचित यह कृति सं १४१० की

रचना है। यह भी गुजर प्रदेश की रचना है। इसमे विभिन्न छन्दो की ७८५ पक्तियाँ हैं।[35]

१५ गौतम स्वामी रास–यह स १४१२ की रचना है। इसके रचनाकार विनय प्रभ उपाध्याय है।[36]

१६ कमार पाल रास–यह गुजर प्रदेश की रचना है। रचनाकाल स १४३५ क लगभग का है। इसके रचनाकार देवप्रभ हैं।[37]

१७ कलिकाल रास–इसके रचयिता राजस्थान निवासी हीरानन्द सूरि है। यह स १४८६ की रचना है। इसकी छन्द सख्या ४८ है।[38]

१८ वीसलदेव रास–यह रचना पश्चिमी राजस्थान की है। रचना तिथि स १४०० वि के आसपास की है। इसके रचयिता नरपति नाल्ह हैं। रचना वीर गीता के रूप मे उपलब्ध है। इसमे वीसलदेव के जीवन के १२ वर्षों के कालखण्ड का वर्णन किया गया है। छन्द स ४०० से अधिक है।[39]

रासो या रासक रचनायें

१ सदेश रासक–यह अपभ्रश की रचना है। रचयिता अब्दुल रहमान हैं। यह रचना मूल स्थान या मुल्तान के क्षेत्र से सम्बन्धित है। कुल छन्द सख्या २२३ है। यह रचना विप्रलम्भ शृगार की है। इसमे विजय नगर की कोई वियोगिनी अपने पति को सदेश भेजने के लिए व्याकुल है तभी कोई पथिक आ जाता है और वह विरहिणी उसे अपने विरह जनित कष्टो को सुनाने लगती है। जब पथिक उससे पूछता है कि उसका पति किस ऋतु मे गया है तो वह उत्तर मे ग्रीष्म ऋतु से प्रारम्भ कर विभिन्न ऋतुओ के विरह जनित कष्टो का वर्णन करने लगती है। यह सब सुनकर जब पथिक चलने लगता है तभी उसका प्रवासी पति आ जाता है। यह रचना स ११०० वि के पश्चात् की है।[40]

२ मुज रास–यह अपभ्रश की रचना है। इसमे लेखक का नाम कहीं नहीं दिया गया। रचना काल के विषय मे कोई निश्चित मत नही मिलता। हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण मे मुज विषयक रचना के कुछ छन्द उद्धृत है। हेमचन्द्र की यह व्याकरण रचना स ११८० की है। मुज का शासन काल १०००–१०५४ वि माना जाता है।[41] इसलिए यह रचना १०५४–११८० वि के बीच कभी लिखी गई होगी। इसमे मुज के जीवन का एक प्रणय कथा का चित्रण है। कर्नाटक के राजा तैलप के यहाँ बन्दी के रूप मे मुज का प्रेम तैलप की विधवा पुत्री मृणालवती से हो जाता है। मुज उसको लेकर कर्नाटक से भागने का प्रस्ताव करता है किन्तु मृणालवती अपने प्रेमी को वहीं रखकर अपना प्रणय सम्बन्ध निभाना चाहती थी इसलिए उसने तैलप को भेद दे दिया जिसके परिणामस्वरूप [illegible] ने

इसका रचना काल सं० १७५५ के पश्चात का मानते हैं। इसकी छन्द संख्या ६४३ है।[56]

१६ **हम्मीर रासो**– इसके रचयिता महेश कवि है। यह रचना जोधराज कृत हम्मीर रासो से पहले की है। छन्द संख्या लगभग ३०० है इसमे रणथभौर के राणा हम्मीर का चरित्र वर्णन है।[57]

१७ **हम्मीर रासो**– यह जोधराज की कृति है। सं० १७८५ की रचना है। इसका संपादन डॉ० श्यामसुन्दर दास ने किया है एवं काशी नागरी प्रचारिणी सभा के द्वारा प्रकाशित किया गया है।[58]

१८ **खुम्माण रासो**– इसकी रचना कवि दलपति विजय ने की है। इसे खुमाण के समकालीन अर्थात सं० ७८० सं० ८६० वि० माना गया है किन्तु इसकी प्रतियों मे राणा संग्राम सिंह द्वितीय के समय १७६०–१७६० तक की घटनाओं का वर्णन मिलता है। इसलिए उपलब्ध रूप में यह सं० १७८०–१७६० से पूर्व की नहीं होनी चाहिए।[59] डा० उदयनारायण तिवारी ने श्री अगरचन्द नाहटा के एक लेख के अनुसार इसे सं० १७३०–१७६० के मध्य लिखा बताया गया है।[60] जबकि श्री रामचन्द्र शुक्ल इसे सं० ८६६– सं० ८६६ के बीच की रचना मानते हैं।[61] उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर इसे सं० १७३० से १७६० के मध्य लिखा माना जा सकता है।

१६ **रासा भगवन्तसिंह**– सदानन्द द्वारा विरचित है। इसमे भगवन्तसिंह खीची के १७६७ वि० के एक युद्ध का वर्णन है। डा० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार यह रचना सं० १७६७ के पश्चात की है। इसमे कुल १०० छन्द है।[62]

२० **करहिया को रायसो**– यह सं० १८३४ की रचना है।[63] इसके रचयिता कवि गुलाब हैं, जिनके वंशज माथुर चतुर्वेदी चतुर्भुज वैद्य आतरी जिला ग्वालियर में निवास करते थे। श्री चतुर्भुज जी के वंशज श्री रघुनन्दन चतुर्वेदी आज भी आंतरी ग्वालियर में ही निवास करते है जिनके पास इस ग्रन्थ की एक प्रति वर्तमान है। इसमें करहिया के पमारों एवं भरतपुराधीश जवाहरसिंह के बीच हुए एक युद्ध का वर्णन है।[64]

२१ **रासा भइया बहादुरसिंह का**– इस ग्रन्थ की रचना तिथि अनिश्चित है है, *परन्तु इसमें वर्णित घटना सं० १८५३ के एक युद्ध की है,* इसी के आधार पर विद्वानों ने इसका रचना काल सं० १८५३ के आसपास बतलाया है। इसके रचयिता शिवनाथ है।[65]

२२ **रायसा**– यह भी शिवनाथ की रचना है। इसमें भी रचना काल नहीं दिया गया है। उपर्युक्त रासा भइया बहादुर सिंह के आधार पर ही इसे भी सं० १८५३ के आसपास का ही माना जा सकता है इसमें धारा के जसवंतसिंह और रीवा के अजीतसिंह के मध्य हुए एक युद्ध का वर्णन है।[66]

२३ कलियुग रासो–इसमे कलियुग का वर्णन है। यह अलि रसिक गोविन्द की रचना है। इसकी रचना तिथि स० १८३५ तथा छन्द सख्या ७० है।[67]

२४ दलपतिराव रायसा– इसके रचयिता कवि जोगीदास भाण्डेरी हैं। इसमे महाराजा दलपतिराव के जीवन काल के विभिन्न युद्धो की घटनाओ का वर्णन किया गया है। कवि ने दलपति राव के अन्तिम युद्ध (जाजऊ) स० १७६४ वि० मे उसकी वीरगति के पश्चात् रायसा लिखने का सकेत दिया है।[68] इसलिये यह रचना स० १७६४ की ही मानी जानी चाहिए। रासो के अध्ययन से ऐसा लगता है कि कवि महाराजा दलपतिराव का समकालीन था। इस ग्रन्थ मे दलपतिराव के पिता शुभकर्ण का भी वृत्त वर्णित है। अत यह दो रायसा का सम्मिलित सस्करण है। इसकी कुल छन्द सख्या ३१३ है। इसका सम्पादन श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव ने किया है तथा 'कन्हैयालाल मुन्शी, हिन्दी विद्यापीठ, आगरा से भारतीय साहित्य के मुन्शी अभिनन्दन अक मे इसे प्रकाशित किया गया है।

२५ शत्रुजीत रायसा– बुन्देली भाषा के इस दूसरे रायसे के रचयिता किशुनेश भाट है। इसकी छन्द सख्या ४२६ है। इस रचना के छन्द ४२५ के अनुसार इसका रचना काल स० १८५८ वि० ठहरता है।[69] दतिया नरेश शत्रुजीत का समय स० १८१६ से० १८५८ वि तदनुसार सन् १७६२ से १८०१ तक रहा है।[70] यह रचना महाराजा शत्रुजीत सिंह के जीवन की एक अन्तिम घटना से सम्बन्धित है। इसमे ग्वालियर के सिंधिया महाराजा दौलतराय के फ्रासीसी सेनापति पीरू और शत्रुजीत सिंह के मध्य सेंवढा के निकट हुए एक युद्ध का सविस्तार वर्णन है। इसका सपादन श्री हरि मोहनलाल श्रीवास्तव ने किया, तथा इसे 'भारतीय साहित्य मे कन्हैयालाल मुन्शी हिन्दी विद्यापीठ आगरा द्वारा प्रकाशित किया गया है।

२६ गढ़ पथना रासो– रचयिता कवि चतुरानन। इसमे १८३३ वि के एक युद्ध का वर्णन किया गया है। छन्द सख्या ३१६ है। इसमे वर्णित युद्ध आधुनिक भरतपुर नगर से ३२ मील पूर्व पथना ग्राम मे वहा के वीरो और सहादत अली के मध्य लडा गया था। भरतपुर के राजा सुजानसिंह के अगरक्षक शार्दूलसिंह के पुत्रो के अदम्य उत्साह एव वीरता का वर्णन किया गया है। बाबू वृन्दावनदास अभिनन्दन ग्रन्थ मे सन् १९७५ मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद द्वारा इसका विवरण प्रकाशित किया गया।[71]

२७ पारीछत रायसा–इसके रचयिता श्रीधर कवि है। रायसो मे दतिया के वयोवृद्ध नरेश पारीछत की सेना एव टीकमगढ के राजा विक्रमाजीतसिंह के बापाट स्थित दीवान गन्धर्वसिंह के मध्य हुए युद्ध का वर्णन है। युद्ध की तिथि स० १८७३ दी गई है।[72] अतएव यह रचना स० १८७३ के पश्चात् की ही रही

होगी। इसका सम्पादन श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव के द्वारा किया गया तथा भारतीय साहित्य सन् १९५८ म कन्हैयालाल मुन्शी, हिन्दी विद्यापीठ आगरा द्वारा इसे प्रकाशित किया गया।

२८ **बाघाट रासो**– इसके रचयिता प्रधान आनन्दसिंह कुडरा है। इसम ओरछा एव दतिया राज्यो के सीमा सम्बन्धी तनाव के कारण हुए एक छोटे म युद्ध का वर्णन किया गया है। इस रचना म पद्य के साथ बुन्देली गद्य की भी सुन्दर बानगी मिलती है। बाघाट रासो मे बुन्देली बोली का प्रचलित रूप पाया जाता है। कवि द्वारा दिया गया समय जमाद सुदि १५ सवत् १८७३ विक्रमी अमल सवत् १८७२ दिया गया है।[73] इसे श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित किया गया तथा यह भारतीय साहित्य म मुद्रित है। इसे 'बाघाइट कौ राइसो' के नाम से विन्ध्य शिक्षा नाम की पत्रिका म भी प्रकाशित किया गया है।[74]

२९ **झांसी कौ रायसो**– इसके रचनाकार प्रधान कल्याणसिंह कुडरा है। इसकी छन्द सख्या लगभग २०० है। उपलब्ध पुस्तक मे छन्द गणना के लिए छन्दो पर क्रमाक नही डाले गये हैं। इसम झासी की रानी लक्ष्मीबाई तथा टेहरी (ओरछा) वाली रानी लिडई सरकार के दीवान नत्थे खा के साथ हुए युद्ध का विस्तृत वर्णन किया गया है। झांसी की रानी तथा अग्रेजो के मध्य हुए झासी कालपी, कौंच तथा ग्वालियर के युद्धो का भी वर्णन सक्षिप्त रूप म इसमे पाया जाता है। इसका रचना काल स १९२६ तदनुसार सन् १८६९ ई है।[75] अर्थात सन् १८५७ के जन आन्दोलन के कुल १२ वर्ष की समयावधि के पश्चात् की रचना है। इसे श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव दतिया ने वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी नाम से सम्पादित कर सहयोगी प्रकाशन मन्दिर लि दतिया से प्रकाशित कराया है।

३० **लक्ष्मीबाई रासो**– इसके रचयिता प० मदन मोहन द्विवेदी 'मदनेश' है। कवि की जन्मभूमि झासी है। इस रचना का सपादन डॉ० भगवानदास माहौर ने किया है। यह रचना प्रयाग साहित्य सम्मेलन की 'साहित्य महोपाध्याय' की उपाधि के लिए भी स्वीकृत हो चुकी है। इस कृति का रचनाकाल डॉ० भगवानदास माहौर ने स० १९६१ के पूर्व का माना है।[76] इसके एक भाग का समाप्ति पुष्पिका मे रचना तिथि स० १९६१ दी गई है।[76] रचना खण्डित उपलब्ध हुई है, जिसे ज्यो का त्यों प्रकाशित किया गया है। विचित्रता यह है कि इसमे कल्याणसिंह कुडरा कृत "झासी कौ रायसो" के कुछ छन्द ज्यों के त्यो कवि ने रख दिये हैं। कुल छन्द सख्या ३४८ हैं। आठवें भाग में समाप्ति पुष्पिका नहीं दी गई है जिससे स्पष्ट है कि रचना अभी पूर्ण नही है। इसका शेष हिस्सा उपलब्ध नही हो सका है। कल्याणसिंह कुडरा कृत रासो और इस रासो की कथा लगभग एक

ती ही है पर म॰ाश कृत रासो मे रानी लक्ष्मीबाई के ऐतिहासिक एव सामाजिक जावन का विशद चित्रण मिलता है।

३१ छछ दर रायसा– बुन्देली बोली म लिखी गई यह एक छोटी रचना है। छछू दर रायस की प्रेरणा का स्रोत एक लोकोक्ति को माना जा सकता है– भई गति साप छछू दर करी। इस रचना म हास्य के नाम पर जातीय द्वेष प्रभाव की झलक देखन को मिलती है। दतिया राजकीय पुस्तकालय मे मिली खण्डित प्रति स न तो सही छन्द सख्या ज्ञात हो सकी और न कवि के सम्बन्ध मे ही कुछ जानकारी उपलब्ध हो सकी। रचना की भाषा मजी हुई बुन्देली है। अवश्य ही ऐसी रचनाए दरबारी कवियो द्वारा अपने आश्रयदाता को प्रसन्न करने अथवा कायर क्षत्रियत्व पर व्यग्य के लिय लिखी गई होगी।

३१ गाडर रायसा– दूसरा महत्वपूर्ण हास्य रासो गाडर रायसा है। यह भी बुन्देली की प्रौढ रचना है। खण्डित प्रति दतिया राजकीय पुस्तकालय म प्राप्त हुई है। कुल उपलब्ध छन्द सख्या ४५ है। रचयिता का कहीं कोई नामोल्लेख नही मिला। अनुमान के आधार पर 'घूस रायसे' का लेखक "प्रथीराज ही इस रचना का भी कवि है क्योंकि जिस प्रकार के पात्र "गाडर रायसे" मे लिए गय है ठीक उसी प्रकार के नामो के पात्र 'घूस रायसे मे चुने गये हैं। पर केवल पात्रों के आधार पर दोनो का एक कवि माना जाना असगत सा है। रचना काल अज्ञात है।

३३ घूस रायसा– यह भी बुन्देली की एक छोटी सी रचना है। इसमे हास्य के साथ व्यग्य का भी पुट है। रचनाकार को काव्य शिल्प की दृष्टि से अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। छन्दो के बध, भाषा व शैली पर कवि का पूर्ण अधिकार है। उपलब्ध छन्द सख्या कुल ३१ है। प्रतिपूर्ण लगती है। यह भी दतिया राज्य पुस्तकालय का हस्तलिखित प्रतियो मे प्राप्त हुई है। रचना के एक छन्द द्वारा कवि का नाम पथीराज दिया गया है परवर्ती रचना है। रचना काल अज्ञात है।

"कटक' रचनाएँ

३४ पारीछत को कटक– यह श्री द्विज किशोर द्वारा विरचित बुन्देली की छोटी सी रचना है। यह 'बेला ताल को साको' के नाम से भी प्रसिद्ध है क्योंकि इस काव्य मे बेला ताल की लड़ाई का वर्णन है। इस रचना मे जैतपुर के महाराज परीछत के व्यक्तित्व और उनके द्वारा प्रदर्शित वीरता का वर्णन किया गया है। सन् १८५७ मे भी पहले महाराज पारीछत न अंग्रेजी शासन के विरुद्ध स्वाधीनता का बिगुल बजाया था। 'पारीछत को कटक' अधिकतर जनवाणी मे सुरक्षित रहा। सम्भवत अंग्रेजी शासन के भय म इसे लिपि बद्ध न किया जा सका होगा। लाक रागिनी म कई छन्द लुप्त होते चले गये तो ता आश्चर्य क्या ?

३५ **झांसी को कटक**— यह झांसी के तत्कालीन अम्बाडिया कवि भग्गी दाऊजी 'श्याम' द्वारा विरचित है। जो १८५७ की क्रान्ति के प्रत्यक्षदर्शी थे। डा० वृन्दावन लाल वर्मा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास "झांसी की रानी" में रानी के समकालीन कवियों में भग्गी दाऊजू का उल्लेख किया है। यह कटक डा० भगवानदास माहौर झांसी द्वारा सम्पादित 'लक्ष्मीबाई रासो' के परिशिष्ट में दिया गया है।" कटक बीच में दो स्थानों पर खण्डित है। १ से ३३ तक छन्दों के बाद ३६ से ३८ छन्द तक है। ३९वां छन्द अधूरा है फिर प्रति खण्डित है। फिर ४० से ४२ तक छन्द है। यहीं 'कटक' समाप्त हो गया है। समाप्ति पुष्पिका इस प्रकार दी गई है—

इति कटक सम्पूर्ण १ पौष सुदी १४ संवत १८५७ मु० झांसी "

अर्थात् यह सन् १८०० ई० की रचना है। कुल छन्द संख्या ४२ है। रचना में सेना, वीरों तथा युद्ध की विकरालता का यथातथ्य वर्णन किया गया है। कवि की रचना देश प्रेम एवं राष्ट्रीय चेतना का संचार करने में समर्थ है।

३६ **भिलसांय को कटक**— इसके रचनाकार कवि भरोलाल हैं। बुन्देल वैभव (सं० गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' झांसी) में कवि का जन्म स्थान श्रीनगर बताया गया है। श्रीनगर बुन्देलखण्ड के किसी साधारण ग्राम का नाम रहा होगा। सम्भव है, कवि ने और भी रचनायें लिखी हों। द्विवेदी जी के अनुसार भरोलाल का जन्म सं० १७७० में हुआ तथा इनका कविता काल सं० १८०० विक्रमी था।* इस रचना में अजयगढ़ राज्य के दीवान केशरी सिंह और बाघेल वीर रणमतसिंह के युद्ध का वर्णन दिया गया है। बाबा रणमतसिंह ने सन् १८५७ में स्वतन्त्रता संग्राम में अंग्रेजी शासन का डटकर विरोध किया था। यह रचना भी उस समय अधिक नर जनवाणी में ही सुरक्षित रही, परन्तु अजयगढ़ राज्य के एक नरेश श्री रणजोर सिंह ने 'भिलसांय को कटक' अपनी एक पुस्तक के परिशिष्ट के रूप में मुद्रित कराया है जो आज भी अजयगढ़ राज्य पुस्तकालय में सुरक्षित है। इस रचना को उपलब्ध कराने का श्रेय श्री अम्बिकाप्रसाद 'दिव्य' अजयगढ़ को है। रचना छोटी है पर भाषा, छन्द एवं विषय की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

महत्व

रास तथा रासो या रासक रचनायें प्रमुखतः दो रूपों में उपलब्ध होती हैं। (१) धार्मिक रचनायें (२) ऐतिहासिक कोटि की रचनाएं। धार्मिक रचनाओं के अन्तर्गत रास ग्रन्थों में जैन कवियों द्वारा लिखित जैन धर्म से सम्बन्धित रचनायें आती हैं। इन रचनाओं में जैन तीर्थंकरों तथा जैन धर्म के सिद्धान्तों आदि का वर्णन पाली या प्राकृत में लिखा गया है। ये रचनायें जैन धर्म के धार्मिक विश्वासों आचार एवं व्यवहारों पर प्रकाश डालती हैं तथा जैन साहित्य का भी इन रचनाओं

व द्वारा पर्याप्त सरक्षण प्राप्त हुआ है। धार्मिक रचनाओं क ही अ तगत दूसरा स्थान बौद्ध धम सम्ब घी रचना का है इस रचना मे गौतम बुद्ध के जीवन तथा बौद्ध सिद्धान्तो का विवेचन किया गया है। इसक अतिरिक्त पौराणिक आधार पर रियत पच पाण्डव रास' पाँचो पाण्डवो के सम्बन्ध म लिखा गया है। ऐतिहासिक कोटि म आने वाल रासो या रासक ग्रन्थो क वण्य विषय भी विभिन्न दिखलाई पडते हैं। कुछ रचनाओ मे शृगार रस को प्रधानता मिली है, जसे सन्देश रासक मु जरास तथा बीसलदव रास। इन ग्रन्थो का कथानक किसी न किसी प्रेमाख्यान म सम्बन्धित है। माकण रासो छछू दर रायसा, गाडर रायसा व घूम रायसा हास्य रस की रचनायें हैं, परन्तु अधिकता वीर रस की रचनाओ की ही है। युग विशेष का सस्कृति, धम इतिहास तथा राजनीति आदि का परिस्थितियों का एक लिपिबद्ध विवरण प्रस्तुत करने म इन रासो ग्रन्थो का महत्त्वपूण योगदान रहा है।

रासो काव्यो का मूल प्रतिपाद्य

१ सामाजिक—देश के अधिकाश भूभाग पर मुगल सत्ता का प्रभाव था। चपत राय और छत्रसाल जसे थोडे क्षत्रिय थे, जो सुख-वैभव का त्याग कर तथा भारी कष्ट झेलकर आजीवन मुगलो म लोहा लेते रहे। अधिकाश राजवशो म फूट एव वमनस्य था जिसस वे आपस म लडकर नष्ट होते रहत थ।

अधिकाश क्षत्रिय राजा । और सामन्तो पर मुस्लिम शासको की सप्रभुता का प्रभाव छा चुका था। अपन सीमित स्वार्थों की सुरक्षा के लिए विदशियो के प्रति अटल और असीम निष्ठा पर वे गव करत थे। साम्राज्य की रक्षा के लिए वे सुदूर दक्षिण म तथा उत्तर म बलख-बदख्शा तक भी रक्त का बहाना अपना कारा चित धम समझते थ। बुन्देला राजपूतो मे एक उल्लेखनीय विशेषता यह अवश्य रही कि व अपने रक्त सम्बन्ध पर गव करत रह। यहा मुसलमानो स ववाहिक सम्बन्ध स्थापित किय जान जस किसी भी उदाहरण का नितान्त अभाव है। बलात् धम-परिवतन की घटनायें भी नगण्य ही रही। किन्तु मधुकर शाह जैसे कुछ उदाहरण भी पाये जाते हैं जिनम मुगल दरबार क प्रति भक्ति के साथ ही स्वधम पालन क प्रति कट्टरता का अच्छा निदशन हुआ है। शुभकरन और दलपतिराव जस सामन्त किन्हा अवसरो पर मुगल सना क प्रभावशाली नायको से खुलकर मतभेद प्रकट कर सकत थे। अधिकाश अवसरो पर सम्राट उनकी आनबान का ध्यान रखते हुए उनका विरोध करने का साहस नही कर पाते थे।

बुन्देलखण्ड क सभी राज्यो म मुगलो क समान शान शौकत एव विलास प्रियता का जोर था। यह प्रभाव उनके अन्त पुरा म एक से अधिक रानियो के परिवारो म सभी कुछ स्पष्ट देखने को मिल जाता था। गृह कलह भी देखा जाता

था। सामन्ती वातावरण में राज्य-कर्मचारी विलासमय जीवन बिताते थे।[80] निम्न वर्ग की जनता की दशा सोचनीय थी। समाज के गरीब तबके के लोग सुखी न थे परन्तु किसी प्रकार निर्वाह करते जाने को ही भाग्य विधान मानते थे।[81] अधिकांश लोग राजा की नौकरी करना पसन्द करते थे, जिससे उन्हें अपेक्षाकृत अधिक सुविधायें मिल सकें। मध्यम वर्ग सुखी था। हिन्दू समाज में बाल विवाह प्रचलित था। सती प्रथा भी थी। उच्च घरानों में पर्दा प्रथा भी प्रवेश पा चुकी थी।

युद्धों के समय महँगाई हो जाती थी। रासा ग्रन्थों में कहीं कहीं इसका उल्लेख मिलता है–

'तेरह दिनानो भयौ नाज तीन रुप मर
पानी घास मिनै नाही कीनौ दष्पिनीन घेर।
करत विचार तहाँ भए हैं मुकाम तीन
डेरन पे सलमन रही चहु ओर फेर ॥'[82]

एक अन्य उदाहरण–

'मरे ऊँट अरु बाज मिले आनउन घास तह।
पानी के आगे नहिं सगाव उसास तह ॥'[83]

उपर्युक्त विवरण के अनुसार स्पष्ट होता है कि राजाओं तथा सामन्त, सरदारों का जीवन अधिकांशतः युद्धों में उलझा रहता था। सामान्य जनता के कष्टों की ओर दृष्टिपात करने का प्राय उन्हें कम ही अवसर प्राप्त होता था। राज्य कर्मचारी सुखमय जीवन व्यतीत करते हुए साधारण प्रजा के साथ मनमाना व्यवहार करते थे। समाज में विभिन्न प्रकार की प्रथायें तथा लोक रीतियाँ भी प्रचलित थीं।

२ धार्मिक–उत्तर भारत में भक्ति युग में एक लम्बी सन्त परम्परा रही है, जिसका देश के अन्य भागों पर भी स्पष्ट प्रभाव पड़ा। इस समय में अनेक सम्प्रदायों की स्थापना की गई। साधु सन्तों के वाद विवादों में झगड़े हुआ करते थे, जहाँ खण्डन मण्डन की रीतियों द्वारा अपने सम्प्रदाय को श्रेष्ठ सिद्ध किया जाता था। लोगों में अन्ध विश्वास बहुत था।

बुन्देलखण्ड में उत्तर मध्यकाल में अनेक प्रसिद्ध सन्त हुए जिन्हें राज्याश्रय भी प्राप्त था। महात्मा अक्षर अनन्य योग और वेदान्त के अच्छे ज्ञाता थे। राज योग के उनके उपदेश का ही परिणाम था कि सेवढ़ा नरेश राजा पृथ्वीसिंह ने कर्मयोग स्वीकार करते हुए वैराग्य का विचार त्याग दिया। यही पृथ्वीसिंह हिन्दी साहित्य में रतन हजारा के रचयिता 'रसनिधि' कवि के नाम से विख्यात हुए। इन्होंने अपने काव्य में प्रेम योग की एक सुन्दर धारा बहाई है। अनन्य जी एक बार किसी बात पर रुष्ट होकर वन में चले गये। राजा पृथ्वीसिंह उनसे क्षमा

मागने पहुँचे, परन्तु उन्हे एक झाडी के पास बडे आराम से लेटा हुआ देखा, तो अपना अपमान समझकर पूछा–"पाँव पसारा कब से उत्तर मिला–'हाथ समेटा तब से "।

अनन्य जी ने इसी समय से वैराग्य ले लिया, पर राजा का मन रखने के लिए वचन दिया कि वे विचरते हुए कभी-कभी दर्शन देंगे। पश्चात् बुन्देल केशरी छत्रसाल स भी उनकी भेंट हुई। महाराज छत्रसाल और अक्षर-अनन्य के बीच पत्राचार की बात प्रसिद्ध है। अनन्य जी के लिखे हुए चिट्ठे ऐतिहासिक महत्व से परिपूर्ण हैं। निर्गुण मार्गी सन्त कवियो म अनन्य का अपना स्थान है। उनकी रचना शैली थोडे म बहुत कुछ बता देती है। उदाहरण–

"आव सुगंध कुरग की नाभि कुरग न सो समुझै मनमाही।
दूध सुयाहि घरै सुरभी, न सवाद लहै सुरभीतिहिठाही ॥
जान को सार असार अजान कौं, जाने बिना सब बात वृथा हीं ॥
ईश्वर आप अनन्य भन इमिहै सबमे सब जानत नाही ॥"

स्वामी प्राणनाथ धामी (प्रणामी) सम्प्रदाय के प्रवर्तक हुए हैं जिन्होंने बुन्देल केशरी छत्रसाल को अपना शिष्य बनाते हुए आशीर्वाद दिया कि वे औरगजेब के विरुद्ध अपने अभियान म स्थाई सफलता प्राप्त करें, उनके राज्य मे सुख समृद्धि की कभी कोई कमी न हो और हिन्दुत्व की रक्षा मे उनका नाम अमर हो। सर्वसाधारण म यह विश्वास प्रचलित है कि पन्ना नगरी मे हीरो का पाया जाना स्वामी प्राणनाथ के आशीर्वाद का ही परिणाम था जिससे महाराज को अपनी लडाइयो क लिए तथा प्रजा पालन एव दान शीलता आदि कर्तव्यो के लिए धन की कमी न होने पावे। बताया जाता है कि स्वामी प्राणनाथ जी की सेवा मे दक्षिणा भेंट करते हुए छत्रसाल ने निम्नलिखित दोहा कहा–

यह टीका यह पावडो यही निछावर आय।
प्राननाथ क चरन पर छत्ता बलिबलि जाय ॥

राजा की नीति धर्म समन्वित थी। राजा लोग राज्य क कार्यों मे भी अपने धर्म गुरुओ स सलाह लेते थे। इस युग म ब्राह्मण धर्म का ही बोल बाला था। ब्राह्मणो क आशीर्वाद और प्रचार से ही राजा आन्तरिक व्यवस्था मे स्वतंत्र थे। नरेशो के व्यवहार का प्रभाव साधारण जनता पर भी विशेष रूप से व्यक्त होता था। उसमे भी धर्म भीरुता दानशीलता की प्रवृत्तियाँ बनी हुई थीं। नरेशो मे राज धर्म के अनुसार अन्य सम्प्रदायो के प्रति धार्मिक उदारता का भाव बना हुआ था।

शरणागत वत्सलता का भाव अधिकाश बुन्देला नरेशो म विद्यमान था। उनकी आपसी लडाइयो का एक बडा कारण यह भी रहा है कि वे किसी के पीछे

सपय मोल लेने म नहीं चूकते थ । छोटे म दतिया राज्य के अधिपति शत्रुजीत ने महादजी की विधवा बाईसा का पक्ष लेकर अपने से कहीं बड़े वैभव से टक्कर ली थी ।

3 राजनतिक—बुन्देला राजवश का इतिहास मुख्यत मुगलो के उत्कर्ष से ही प्रारम्भ होता है । मुगलो का तृतीय सम्राट अकबर जिस समय सिंहासन पर बठा उस समय भारत छोटे छोटे अनेक स्वतन्त्र राज्यो म विभाजित था । अकबर ने कई स्वतन्त्र राज्यो पर विजय पाते हुए मुगल साम्राज्य को सुदृढ बनाया । उसने बिखरे हुए इन राज्यो को राजनतिक एकता म बाँधकर देश म शान्ति और सुव्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया । बुन्देलखण्ड को भी उसने राजस्थान उत्तर-पश्चिम-सीमान्त प्रदेश गोडवाना आदि के साथ अपने साम्राज्य का अग बनाया । यहाँ बुन्देलखण्ड म उसने प्रत्यक्ष अधिकार जमाने की विशेष चिंता नहीं की । राजधानी आगरा का निकटवर्ती यह प्रदेश दक्षिण के उसके अभियानो के लिए महज सीधा माग था । अतएव उसने ओरछा के बुन्देला शासक से मत्री स्थापित करने में ही अपने उद्देश्य की पूर्ति देखी । मधुकर शाह और वीरसिंह देव जैसे बुन्देला नरेश सम्मान के साथ कुछ स्वतन्त्र भी बनाये रहे । कालान्तर म बुन्देलखण्ड का राज्य कई जागीरो म बट गया । स्वभावत इन छोटे राजाओ के स्वार्थ मुगलसत्ता से मिलकर चलने मे ही पूरे हो सकते थ । अत ये राज्य साम्राज्य की शक्ति पर अधिक निभर रहने लगे और इस प्रकार इनकी दासता का अध्याय प्रारम्भ हुआ । अधिकाश बुन्देला राजाओ ने मुगल साम्राज्य के प्रति वफादारी को अपना राजनीतिक धर्म मानकर उसके लिए सब करने की नीति अपनाई ।

प्रबल प्रतापी वीरसिंह देव एक अत्यन्त महत्त्वाकाक्षी योद्धा थ । बादशाह अकबर और शाहजादा सलीम मे जब मतभेद उभर कर प्रकट हुए और सलीम ने अकबर के अत्यन्त विश्वासपात्र मत्री और सनापति अबुल फजल को अपने माग की एक बडी बाधा समझा, तो सलीम को वीरसिंह देव का ही एकमात्र सहारा समझ पडा । उसने अबुल फजल को मार डालने के लिए वीरसिंह देव से सम्पर्क स्थापित किया । बुन्देलों की प्रधान गद्दी ओरछा पर अधिकार पाने की महत्वाकाक्षा लेकर वीरसिंह देव ने सहज ही यह काम कर डाला । अबुल फजल का वध करने के पश्चात् उन्होने उसका सिर काटकर जहाँगीर के पास इलाहाबाद भेज दिया । सलीम फूला न समाया । उसने अपने मित्र वीरसिंह देव को भरपूर पुरस्कार देने की नीति बना ली । परन्तु सम्राट अकबर के जीवन काल म वीरसिंह देव को उसके रोष का सामना करते हुए अनेक कठिनाइयो को झेलना पडा । सलीम जब जहाँगीर के नाम से गद्दी पर बठा, तो उसने वीरसिंह देव को पुरस्कृत करने मे कमी नहीं की । कालान्तर म वीरसिंह देव के उत्तराधिकारी सम्राट से मैत्री

के इस आन्श के नाम पर ही मुगलो के ऊपर अधिकाधिक निर्भर रहने लगे। वीरसिंह देव के बडे बेटे तथा ओरछा के राजा जुझारसिंह को साम्राज्य की दासता कुछ अखरन लगी। उन्होंने शाहजहां के शासन काल म दो बार मुगल सम्राट के विरुद्ध विद्रोह भी खडा किया परतु वे बुरी तरह परास्त हुए। सभवत इसीलिए भाग के अन्य राजाओं ने मुगलो से बनाय रखने मे ही कुशलता समझी।

शाहजहाँ मे धार्मिक कट्टरता का अश अवश्य था। तभी जुझारसिंह को विद्रोह करने की आवश्यकता पडी, परन्तु उसके बाद औरगजेब न सम्राट बनते ही अकबर के समय म चली आने वाली नीतियो को एकदम बदल दिया। कट्टर सुन्नी मुसलमान औरगजेब की हिन्दू विरोधी नीतियो न उत्तर म सिक्खो से लेकर दक्षिण मे मराठों तक क्राति की चिनगारी प्रज्ज्वलित कर दी। सिक्ख मराठा और सतनामी मुगल साम्राज्य के प्रबल वैरी बन बैठ। तभी राजा चम्पतराय और उनके पुत्र छत्रसाल नामक बुन्देला वीरो ने हिन्दुत्व की रक्षा के लिए मुगल सत्ता को उखाड फेंकने का व्रत लिया। वीर छत्रसाल तो छत्रपति शिवाजी के आदश से विशेष रूप स अनुप्राणित थे। अपन पिता चम्पतराय से भी अधिक नाम उन्होने पाया है। बुन्देलखण्ड की स्वाधीनता के लिए उनका योगदान किसी प्रकार कम नही। अपने ही वश के कुछ अन्य शासको से बुन्देल केशरी छत्रसाल को समुचित सहयोग मिल पाता तो इस मध्यवर्ती भूभाग म मुगलो की सत्ता कभी की उठ गई होती। महाराज छत्रसाल ने अपना प्रभाव क्षेत्र तो बढाया, परन्तु अपने वश के अन्य नरेशों के प्रति विशेष सख्ती नहीं बरती। यद्यपि औरगजेब के बाद मुगल साम्राज्य दिन प्रतिदिन अशक्त होता गया, तथापि ओरछा, दतिया आदि के राजघराने मुगलों के आश्रित बने रहे।

मुहम्मद खाँ बगश के आक्रमणो का सफल प्रतिरोध करने के लिए महाराजा छत्रसाल न वृद्धावस्था के अतिम दिनो म पेशवा बाजीराव से सहायता चाही। पेशवा को अपना तीसरा बेटा मानते हुए उन्होंने अपने राज्य का एक तिहाई भाग भी सौंप दिया था। फलत इस भूभाग म मराठो को पैर जमाने का अवसर मिल गया। झाँसी और ग्वालियर मराठो की, इस क्षेत्र म दो बडी राजधानियाँ स्थापित हुई। इन राज्यो से बुन्देलखण्ड के नरेशो के सम्बन्ध बनते और बिगडते रहे। कभी किसी राजा का व्यवहार मैत्रीपूर्ण होता और कभी कोई शत्रुता मानता। समय-समय पर कोई मराठा सरदार इन राज्यो पर छापा मारते रहते।

४ शृगारिक—रासो काव्यो की परम्परा मे कुछ ऐसे रासो ग्रन्थ है जिनका वर्ण्य विषय ही शृगार-परक रहा है। बीसल देव रासो एव सन्देश रासक तो पूर्णतया शृगार रचनायें ही हैं जैसा पहले रासो काव्य परम्परा म लिखा जा चुका है। बीसलदेव रासो म बीसलदेव के जीवन के १२ वर्षों के बालखण्ड का वर्णन

किया गया है। बीसलदेव अपनी रानी की पर व्यग्योक्ति पर उत्तेजित होकर लम्बी यात्रा पर चला गया और एक राजा की राजकुमारी के साथ विवाह करके भोग विलास के जीवन म निरत हो गया। इस प्रकार इस ग्रथ मे शृगार के दोनो ही पक्षो का सुदर समन्वय है। वियोग शृगार एव सयोग शृगार का अच्छा चित्रण इस काव्य ग्रथ मे किया गया है।

पृथ्वीराज रासो को पढ़ने से ज्ञात होता है कि महाराजा पृथ्वीराज चौहान ने जितनी भी लड़ाइयाँ लड़ीं उन सबका प्रमुख उद्देश्य राजकुमारियो के साथ विवाह और अपहरण ही दिखाई पडता है। इछिनी विवाह पद्मावती समया, समोगिता विवाह आदि अनको प्रमाण पृथ्वीराज रासो म पृथ्वीराज की शृगार एव विलासप्रियता की ओर सकेत करते हैं। मु जरास म मु ज और तलप की विधवा बहिन मृणालवती की प्रणय कथा शृगार का अनुपम उदाहरण ही है।

उपयु क्त विवरणो से स्पष्ट होता है कि रासो काव्यो मे वर्णित सामाजिक राजनतिक, धार्मिक एव शृगारिक प्रवृत्तियाँ विविधता स पूर्ण थी।

सन्दर्भ

१ रासो समीक्षा—श्री सदाशिव दीक्षित सस्कृत पुस्तकालय वाराणसी, पृ १०
२ वही, पृ ११
३ वीर काव्य—डा उदय नारायण तिवारी भूमिका पृ २१ म उल्लिखित।
४ वही पृ २१
५ बीसलदेव रासो—स श्री सत्यजीवन वर्मा नागरी प्रचारिणी सभा काशी पृ ४२५
६ रासो समीक्षा—श्री सदाशिव दीक्षित प १२
७ वही प १२
८ वही, पृ १२
६ वीर काव्य—डा उदयनारायण तिवारी भूमिका पृ २१
१० रासो समीक्षा—सदाशिव दीक्षित, प १३
११ वही, प १४
१२ वही, पृ १५
१३ वही, पृ १५
१४ वही, पृ १६
१५ वही, पृ १६
१६ वही, पृ १६
१७ रासो साहित्य विमर्श—डॉ० माता प्रसाद गुप्त, पृ १
१८ वही, पृ २
१६ वही, पृ १
२० वही, पृ ३
२१ वही, पृ ४
२२ वही पृ ५
२३ वही, पृ ६
२४ वही पृ ८
२५ वही प ६

२६ रासो साहित्य विमर्श—डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ ४
२७ वही पृ ४ २८ वही पृ ८
२९ वही, पृ ८ ३० वही, पृ ८
३१ रासो साहित्य विमर्श—डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ १०
३२ वही, पृ १० ३३ वही पृ १०
३४ वही, पृ १० ३५ वही, पृ १०
३६ वही पृ ११ ३७ वही पृ ११
३८ वही, पृ ११ ३९ वही पृ ११
४० वही, पृ ११ ४१ वही, पृ ११ १२
४२ वही पृ १२ ४३ वही, पृ १२ १३
४४ रासो साहित्य विमर्श—डा० माता प्रसाद गुप्त पृ १३
४५ वही, पृ १४ ४६ वही पृ १४
४७ आल्हा की ऐतिहासिकता और महत्व—स्व महेन्द्रपाल सिंह मधुकर पत्रिका वर्ष १ अंक १२ १६ मार्च १९४१, पृ ५
४८ रासो साहित्य विमर्श—डॉ० माता प्रसाद गुप्त, पृ १५
४९ वही, पृ १५ ५० वही पृ १५
५१ वही, पृ १५ ५२ वही, पृ १५
५३ वही, पृ १६ ५४ वही पृ १६
५५ वही, पृ १६ ५६ वही पृ १६
५७ वही, पृ १६ १७ ५८ वही पृ १७
५९ वही पृ १७
६० वीर काव्य—डॉ उदयनारायण तिवारी भूमिका पृ २२
६१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल पृ ४०–४१
६२ रासोसाहित्य विमर्श—डा० माता प्रसाद गुप्त पृ १७
६३ वही पृ १७
६४ हिन्दी वीर काव्य—डा० टीकमसिंह तोमर पृ ३२
६५ रासो साहित्य विमर्श—डॉ० माता प्रसाद गुप्त, पृ १७
६६ वही, पृ १८ ६७ वही, पृ १८
६८ जोगीदास का दलपतिराव रायसा—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, पृ. ४६५, ४६६
६९ शत्रुजीत रायसा किशुनेश—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, पृ १८६
७० दतिया दमन—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव पृ १२

७१ बाबू वृन्दावन अभिनन्दन ग्रन्थ—स डॉ० आनन्दस्वरूप पाठक एवं श्री कन्हैया लाल चचरीक, हिन्दी सा ग इलाहाबाद, पृ ५१६
७२ श्रीधर का पारीछत रायसा—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य सन् १६५६ पृ १२२
७३ बाघाहट को रायसौ—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव विन्ध्य शिक्षा मासिक पृ ६८
७४ वही पृ ६७ से ७८
७५ वीरांगना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी स हरिमोहनलाल श्रीवास्तव पृ ४
७६ लक्ष्मीबाई रासो—स डॉ० भगवानदास माहौर, भूमिका पृ ८०
७७ वही भाग ६ समाप्ति पुष्पिका, पृ ८६
७८ लक्ष्मीबाई रासो—स डॉ० भगवानदास माहौर परिशिष्ट २, पृ १२० से १२५ तक
७८ वही पृ १२५
८० बुन्देल वभव भाग २, श्री गौरीशंकर द्विवेदी शंकर' प ५०३ ५०४
८१ हिन्दी वीर काव्य—डॉ० टीकमसिंह तोमर, भूमिका, प १२
८२ वही, पृ १२
८३ जोगीदास का दलपतिराव रायसा—श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव भारतीय साहित्य, पृ ४२८
८४ वही पृ ४२५

अध्याय द्वितीय

बुन्देलखण्ड का क्षेत्र

विन्ध्य पर्वत श्रृंखला में घिरा हुआ क्षेत्र प्राचीन युग में चेदि कहलाता था। महात्मा बुद्ध के समय में उत्तर भारत में सोलह जनपदों में चेदि की भी गणना थी। परवर्ती वैदिक काल में यह जनपद इन्द्र एवं अग्नि की पूजा का क्षेत्र था। महाभारत काल में चेदि राज शिशुपाल ने अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त की थी। दस नदियों के जल प्रवाह के कारण यह क्षेत्र दशार्ण के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। पश्चात् यह भूभाग जुझौति, जजाक भुक्ति जाजाहोति आदि नामों से प्रसिद्ध हुआ। जजाक भुक्ति में चन्देलों का राज्य था। चन्देल वंश की स्थापना नवीं शताब्दी में ननुक ने बुन्देलखण्ड में की थी। उस समय उनकी राजधानी खजुराहो थी। ननुक के पौत्र जयशक्ति (जैजा) और विजय शक्ति महान विजेता थे। इनके नाम पर ही इस प्रदेश का नाम जजाकभुक्ति पड़ा।[1] चीनी यात्री ह्वेनसांग ने इस प्रदेश का नाम चिचिटो (जिझौति) दिया है। अलबरूनी ने 'जाजाहोति" नाम का उल्लेख किया है। जिझौति', "जुझौति, 'जाजा होति' आदि नाम 'जजाक भुक्ति' के ही रूप हैं।

विभिन्न राजाओं के शिलालेखों में इस प्रदेश का नाम जजाक भुक्ति दिया गया है। महोबे के सुप्रसिद्ध राजा परिमाल या परिमर्दि देव के समय के पृथ्वीराज सम्बन्धी मदनपुर स्थित शिलालेख में अंकित है--

'अरण राजस्य पौत्रेण श्री सोमेश्वर सूनुना।
जजाक भुक्ति दशोऽयं पृथ्वा राजेन लूनिता॥

इसका बुन्देलखण्ड नामकरण अपेक्षाकृत आधुनिक है। निश्चित रूप से यह नाम बुन्देलों की सत्ता स्थापित होने के बाद पड़ा। बुन्देलखण्ड नाम विन्ध्यलखण्ड का बिगड़ा हुआ रूप है। विन्ध्यवासिनी देवी की आराधना करने वाले गहरवार क्षत्रिय पंचम ने विन्ध्य श्रेणियों से घिरे हुए इस प्रदेश में राजसत्ता स्थापित करते हुए 'विन्ध्यला' उपाधि धारण की। विन्ध्यला शब्द से ही 'बुन्देला' नाम प्रचलित हुआ। और वह क्षेत्र जहां बुन्देला का शासन रहा बुन्देलखण्ड कहलाया।

यमुना नर्मदा चम्बल और टोंस नदियों से घिरा क्षेत्र बुन्देलखण्ड है

नाम से जाना जाता है। जनसाधारण में बुंदेलखण्ड की सीमाओं के सम्बन्ध में एक दोहा प्रचलित है।

'इत जमना उत नमदा इत चम्बल उत टौंस।
छत्रसाल सौं लरन की रही न काहू हौंस॥

स्पष्टत ये सीमायें बुंदेल केसरी छत्रसाल के राज्य की अथवा उनके प्रभाव क्षेत्र की रही होगी। रहन-सहन, आचार-व्यवहार बोली बानी आदि की दृष्टि से थोड़े हेर फेर के साथ बुंदेलखण्ड की ये सीमायें प्राचीन समय से ही हैं। बुंदेलखण्ड की उत्तरी दक्षिणी और पूर्वी सीमाओं के सम्बन्ध में अधिक विवाद नहीं है परन्तु पश्चिमी सीमा के विषय में कुछ मतभेद है। कनिंघम ने इसे बेतवा तक और दीवान मजबूत सिंह ने मालवा में काला सिंध तक माना है। चंदेल राजा धंगदेव के शासन काल में ग्वालियर का भूभाग इस प्रदेश में सम्मिलित था।

श्री प्रतिपाल सिंह जू देव ने अपने एक लेख 'बुंदेलखण्ड की सीमायें' के अन्तर्गत निम्नलिखित एक छन्द में बुंदेलखण्ड की सीमाओं का उल्लेख किया है—

उत्तर समथल भूमि, गंग जमुना सुबहति है।
प्राची दिस कमूर, सोन कोसी सुलसति है॥
दक्षिन रेवा, विन्ध्याचल तन शीतल करना।
पश्चिम में चम्बल चंचल सोहति मन हरनी॥
तिनमधि राजे गिरि, वन सरिता सहित मनोहर।
कीर्तिस्थल बुंदेलों का बुंदेल खण्ड वर॥ [1]

इसी प्रकार एक अन्य कवि ने अपनी कविता में बुंदेलखण्ड का परिचय दिया है। कविता निम्न प्रकार है।

खजुराहो देवगढ़ का दुनिया भर में बखान।
पत्थर की मूर्तियों को मानो मिल गए प्रान॥
चंदेरी ग्वालियर की ऐतिहासिक कीर्ति छटा।
तीर्थ अमरकंटक चित्रकूट बालाजी महान्॥
सोनागिरि पावा गिरि पपौरा के धर्म स्थल।
अपने धर्म संस्कृति पर हमको भारी घमण्ड।
जय जय भारत अखण्ड जय जय बुंदेलखण्ड॥'[2]

अतएव बुंदेलखण्ड की सीमायें निम्नांकित रूप में मानी जा सकती हैं।

पूर्व में टौंस और सोन नदियां अथवा बघेलखण्ड या रीवा है। यह क्षेत्र बनारस के निकट बुंदेला नाले तक चला गया है।

पश्चिम में— बेतवा, सिंध चंबल नदियां, विन्ध्याचल श्रेणी तथा मालवा ग्वालियर और भोपाल राज्य हैं। पूर्वी मालवा इसी में आता है।

उत्तर में–यमुना, गंगा नदियां अथवा इटावा कानपुर फतेहपुर इलाहाबाद और मिर्जापुर तथा बनारस के जिले हैं।

दक्षिण में– नर्मदा नदी और मालवा है।

समय समय पर ये सीमायें घटती बढ़ती रही हैं। उपर्युक्त छन्दों में छत्रसाल कालीन बुंदेलखण्ड की सीमाओं का उल्लेख है। ग्वालियर राज्य के भिण्ड, ग्वालियर गिर्द नरवर ईसागढ़ और भेलसा जिले अथवा उनके भाग और इसी प्रकार से भूपाल राज्य की उत्तरीय और पूर्वीय निजामता के भाग तथा मध्य प्रदेश के सागर दमोह जबलपुर जिले अथवा उनके भाग, रीवा की पश्चिम तहसीलों के भाग और उत्तर प्रदेश के काशी के निकट से मिर्जापुर, इलाहाबाद बांदा, हम्मीरपुर जालौन तथा झांसी जिले अथवा उनके भाग बुंदेलखण्ड के ही अंश हैं।

वर्तमान उत्तरप्रदेश के झांसी, जालौन, बांदा और हमीरपुर एवं ललितपुर तथा आज के मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ पन्ना छतरपुर सागर दमोह, होशंगाबाद, नरसिंहपुर, जबलपुर, बैतूल छिंदवाड़ा सिवनी, बालाघाट मंडला विदिशा, रायसेन, सतना गुना, शिवपुरी, दतिया ग्वालियर मुरैना एवं भिण्ड जिले बुंदेलखण्ड की अपनी सीमाओं में आते हैं इस प्रकार उत्तरप्रदेश के पांच जिले और मध्य प्रदेश के बाईस जिले कुल सत्ताइस जिलों का यह एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है।

भाषा विज्ञान की दृष्टि से भी ये सीमायें न्यायसंगत ठहरती हैं। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी भाषा का इतिहास नामक ग्रन्थ में लिखा है– बुंदेली बुंदेलखण्ड की उपभाषा है। शुद्ध रूप में यह झांसी, जालौन हमीरपुर ग्वालियर भूपाल, ओरछा सागर नरसिंहपुर सिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है। इसके कई मिश्रित रूप दतिया पन्ना, चरखारी दमोह बालाघाट तथा छिंदवाड़ा के कुछ भागों में पाये जाते हैं।

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा का यह कथन न्याय संगत है– 'मध्यकाल में बुंदेलखण्ड साहित्य का प्रसिद्ध केन्द्र रहा है, किन्तु यहां होने वाले कवियों ने भी ब्रजभाषा में ही कविता की है यद्यपि इनकी भाषा पर अपनी बुंदेली बोली का प्रभाव अधिक पाया जाता है। बुंदेली उपभाषा और ब्रजभाषा में बहुत साम्य है। सच तो यह है कि ब्रज कन्नौजी तथा बुंदेली एक ही उपभाषा के तीन प्रादेशिक रूप मात्र हैं।[6]

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के उपर्युक्त विवरण से साम्य रखता हुआ विवरण डॉ० श्यामसुंदर दास ने अपनी पुस्तक 'भाषा विज्ञान' में दिया है। वे लिखते हैं– 'यह बुंदेलखण्ड की भाषा है और ब्रजभाषा के क्षेत्र के दक्षिण में बोली जाती है। शुद्ध रूप में यह झांसी, जालौन हम्मीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा सागर,

नरसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है। इसके कई मिश्रित रूप दतिया पन्ना, चरखारी दमोह, बालाघाट तथा छिन्दवाडा के कुछ भागों में पाये जाते हैं। बुन्देली के बोलने वाले लगभग ६९ लाख हैं। मध्यकाल में बुंदेलखण्ड मे अच्छे कवि हुए है पर उनकी भाषा बृजभाषा ही रही है। उनकी बजभाषा पर कभी-कभी बुंदेली की अच्छी छाप देख पडती है।'[5]

इस प्रकार इन भाषा वैज्ञानिक विवरणों के द्वारा भी बुंदेलखण्ड के विस्तृत भूभाग की पुष्टि होती है।

राजनीतिक स्थिति -

बुंदेलखण्ड का राजनीतिक जीवन प्रारम्भ से ही उथल-पुथल से भरा रहा है एक तो छोटे छोटे रजवाड़े सामन्त सरदार आपस में लड भिडकर यहाँ की राजनीति को नये मोड देते रहे हैं दूसरे मुसलमान जातियाँ अपना प्रभुत्व जमाने के लिये प्रयत्नशील था। महोबे के परमर्दि देव और दिल्ली के चौहानों के संघर्ष में महोबे का पतन हुआ और अधिकांश उत्तरी बुन्देलखण्ड पर चौहानों का आधिपत्य भी स्थापित रहा। चौहानों का एक सामन्त बुन्देलखण्ड के परगन कोंच का शासक बनाया गया था। चौहानों और कान्यकुब्ज के जयचन्द के आपसी संघर्ष के परिणामस्वरूप ही मुहम्मद गौरी ने स्थिति का लाभ उठाकर पृथ्वीराज का अस्तित्व नष्ट करके दिल्ली पर अधिकार जमाया था। सोलहवीं शती विक्रमी में बाबर के वंशजों ने भारत के अधिकांश भूभाग पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था'। प्रारम्भ में मुगल शासकों ने हिंदुस्तानी नरेशों से अच्छे सम्बन्ध नहीं बनाये पर मुगल सम्राट अकबर के द्वारा हिंदुओं से मेलजोल बढाने की बात इतिहास प्रसिद्ध है। जिस समय आगरे की गद्दी पर अकबर आसीन था, ओरछे की गद्दी मधुकरशाह के अधीन थी। दक्षिण की ओर के अभियानों के लिए बुंदेलखण्ड से होकर ही अकबर का मार्ग उपयुक्त था। इस दृष्टि से मुगलों ने बुंदेले नरेशों से मधुर सम्बन्ध बनाये रखने मे ही अपना स्थायित्व देखा। पर बुंदेला नरेश अपनी आन पर मर मिटने वाले एवं स्वाभिमानी थे। मुगल सम्राट ने इन बुंदेला राजाओं को अपने प्रभाव में लाने के लिये इन्हें मुगल सेना में ऊँचे ऊंचे पद और मनसब दिये।

मधुकर शाह से लेकर वीरसिंह देव तक बुंदेलों के सम्बन्ध मुगलों के साथ बनते बिगड़ते रहे। कुछ बुंदेला नरेश शान शौकत का जीवन बिताने की दृष्टि से या राज्य लिप्सा के कारण मुगलों के वशवर्ती बने रहे पर कुछ ऐसे भी थे जिनका मुगलों से खुलकर विरोध रहा। ओरछाधीश रामशाह मुगलों के पक्षपाती रहे पर वीरसिंह देव अकबर के विरोधी रहे। वीरसिंह देव ने अकबर के विरुद्ध विद्रोही शाहजादा सलीम का साथ दिया था और यहाँ तक कि अकबर के प्रधान सेनापति अबुल फजल का वध शाहजादा को प्रसन्न करने के लिये किया था।[6]

बुन्देलखण्ड के नरेशों के आश्रित कवियों ने एक ओर जहाँ अपने राजा का विरुद बखान किया वहीं दूसरी ओर मुगल बादशाहों को प्रसन्न करने के लिए मुगलिया वैभव की भी खूब बढ़ा चढ़ा कर प्रशंसा की। ओरछे के कवि केशवदास ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में जहाँगीर जस चन्द्रिका' जैसे ऐतिहासिक ग्रन्थ की रचना की केशवदास द्वारा लिखित अन्य ग्रन्थ "वीरसिंह देव चरित में भी मुगल वैभव की झाँकी प्रस्तुत की गई है। दतिया राजवंश प्रारम्भ से ही मुगल शासकों के सम्पर्क में रहा। दतिया नरेश भगवानराय को मुगल दरबार में उच्च पद और पचहजारी मनसब प्राप्त था।[7] भगवान राय के पश्चात उनके पुत्र शुभकर्ण मुगलसत्ता में मनसबदार रहे।[8] शुभकर्ण के पुत्र दलपतिराव ने अपने पिता की भांति मुगलों के हित के लिये अनेकों लड़ाइयाँ लड़ी तथा उन्हें मनसब व उच्च पद प्रदान किये गये।[9] दलपति राव रायसे के अनुसार महाराजा दलपति राव मुगलों के उत्तराधिकार युद्ध में आजमशाह की ओर से युद्ध करते हुये जाजऊ के मैदान में धराशायी हुए।

पन्ना के अधिपति चम्पतिराय को भी मुगल दरबार में मनसब प्राप्त था पर कालान्तर में कुछ अनबन के कारण उन्होंने वह मनसब छोड़ दिया और आजीवन मुगलों के कट्टर शत्रु बने रहे। चम्पतिराय स्वाभिमानी व्यक्ति थे वे हिन्दुत्व के पोषक भी थे। हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए ही उन्हें मुगलों से संघर्ष करना पड़ा। मुगलों के साथ संघर्षरत स्थिति में ही चम्पतिराय स्वर्ग सिधारे। महाराजा छत्रसाल ने अपने पिता चम्पतिराय के कार्य को पूर्णता दी। चम्पतिराय की मृत्यु के पश्चात छत्रसाल ने यह देखा कि परिस्थिति अनुकूल नहीं है इसलिए छत्रसाल मुगलों के अधीन कुछ समय तक रहे। जब हिन्दू राष्ट्रीयता प्रेमी एवं हिन्दू राष्ट्रीयता के रक्षक शिवाजी से भेंट हुई तो वे भी हिन्दुत्व को मुगल प्रभाव से नष्ट होने से बचाने के लिए स्वातन्त्र्य संघर्ष में कूद पड़े। महाराजा छत्रसाल मुगल सेना में नौकरी करते हुए भी चित्त से स्वतन्त्र एवं मुगल विरोधी भावनाओं से पूर्ण रहे। शिवाजी की ऐतिहासिक भेंट ने उन्हें खुलकर मुगलों के विरोध में मैदान में ला खड़ा किया। लोहगढ़ की विजय के पश्चात् मुगलों ने महाराजा छत्रसाल को मनसब देना चाहा था पर उन्होंने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था। इस समय तक महाराजा छत्रसाल की स्थिति सुदृढ़ हो चुकी थी और मुगल कभी-कभी सहायता के लिए उनके प्रार्थी भी बने। बुन्देलखण्ड के जनमत ने एक ही नायक को समर्थन प्रदान किया जो कि सदैव मुगल विरोध में अग्रणी रहा हो। जुझारसिंह और रामशाह जैसे कुछ बुन्देला नरेश अवश्य मुगलों के दबाव में रहे थे।

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मुगल सत्ता का योग्य शासकों के अभाव में

पतन हो गया। यद्यपि दिल्ली की गद्दी पर १८५७ के विप्लव के समय तक मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर आसीन रहा था। अठारहवीं शदी में अंग्रेजी सत्ता भारत के अधिकांश भूभागों को अपनी हड़प नीति की चपेट में ले चुकी थी। बुंदेलखण्ड की दतिया रियासत मुगलों के पश्चात् अंग्रेज भक्त बन गई थी।[10] जैतपुर के महाराज पारीछत तथा झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई के द्वारा अंग्रेजो का डटकर विरोध किया गया पर अपने लोगों के ही असहयोग एवं विश्वासघात के परिणामस्वरूप झांसी का पतन हुआ और झांसी का अंग्रेजी राज्य में विलय हुआ। इधर ग्वालियर का सिंधिया राजघराना भी अंग्रेजो का मित्र हो गया था। सिंधिया राजघराने ने झांसी राज्य के विरुद्ध अंग्रेजों को सहयोग प्रदान किया। दतिया ग्वालियर की तरह ही टेहरी (ओरछा) ने भी लोभवश झांसी के विरुद्ध अंग्रेजो का साथ दिया था। पर यहाँ भी दिल्ली, महोबा और कन्नौज जैसी ही स्थिति आई। जिस प्रकार दिल्ली के पृथ्वीराज चौहान ने महोबा की शक्ति नष्ट की। कन्नौज के साथ संघर्ष करके पृथ्वीराज कुछ निर्बल बने ऐसे में ही मुहम्मद गोरी का साथ देकर जयचंद ने पृथ्वीराज को नष्ट करवाया पर मुहम्मद गोरी ने दिल्ली को हस्तगत करके कन्नौज को भी अछूता नहीं छोड़ा। इसी तरह टेहरी ने झांसी के विरुद्ध अंग्रेजों को उकसाया पर झांसी के पतन के पश्चात् अंग्रेजो की कुटिल दृष्टि से ओरछा भी नहीं बचा।

सामाजिक परिस्थिति

समस्त बुंदेलखण्ड कई छोटे छोटे राज्यों में बँटा था। इन राज्यों के राजा और जागीरदार अपने-अपने राज्यों की सुरक्षा एवं वृद्धि के लिए सदैव तत्पर रहते थे। अपनी राज्य लिप्सा के कारण ये राजे आपस में लड़ते रहते थे, जिस कारण उनमें आपसी फूट व बैर की ज्वाला हमेशा धधकती रहती थी। अधिकांश राजा मुगल सत्ता के अधीन थे और उनके अंतःपुर मुगलों के समान ही भोग विलास एवं आमोद प्रमोद की सामग्रियों से सजे रहते थे। राजाओं की तरह दरबार के अन्य कर्मचारी भी ऐसे ही विलासी जीवन का उपभोग करते थे। सामान्य जनता प्रायः कर भार से कराहती रहती थी। समाज में वर्ण व्यवस्था थी। उसके आधार पर समाज तीन वर्गों में बटा था। उच्च वर्ग में राजकुल एवं क्षत्रिय ब्राह्मण व दरबारी तथा जागीरदार आदि थे। मध्य वर्ग में राजदरबार से सम्बन्ध रखने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य आदि थे। निम्न वर्ग ग्रामीण जनता एवं गरीब मजदूर व अस्पृश्य जातियों का था। उच्च वर्ग की तरह मध्य वर्ग भी बहुत सुखी था क्योंकि इस वर्ग के लोग राजा की नौकरी कर लेते थे किन्तु निम्न वर्ग की जनता शोषित एवं दुखी थी। अभी पिछले समय तक बेगार प्रथा में बुंदेलखण्ड की देशी रियासतों की निम्नवर्गीय जनता कराहती रही है। जो लोग राज्य दरबार में

नौकरी करते थे उनके पुत्र पौत्र भी राजा के प्रति स्वामिभक्ति ही अपना कर्तव्य समझते थे। राजकवियों के द्वारा लिखे गये रासो ग्रन्थ इस प्रभाव से बचे नहीं हैं। जहाँ इन रासो ग्रन्थो में राजाओं की शान शौकत एवं ऐश्वर्य का अनुपम चित्रण किया गया है वहीं निम्न वर्ग के सम्बन्ध में भी कतिपय स्थलो पर प्रकाश पड़ता रहा है। कुछ रासो ग्रन्थों मे यथास्थान उस समय की नीची कही जाने वाली जातियों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार वह समय सामाजिक विभिन्नता का था।

धार्मिक परिस्थिति

बुन्देलखण्ड के सभी राजाओं में धर्म के प्रति प्रगाढ आस्था थी। गौ, ब्राह्मण पूजनीय थे। ब्राह्मण धर्मपूर्ण प्रश्रय प्राप्त कर रहा था। दानशीलता राजाओं का प्रधान गुण था। राजाओं की दानशीलता का रासो ग्रन्थो में विशद एवं रंजनापूर्ण वर्णन किया गया है तथा कवियो के वर्णनो में राजाओं और राज परिवारों की धार्मिक आस्था के ऊपर पूर्ण प्रकाश डाला गया है।

सत्रहवीं शताब्दी में बुन्देलखण्ड में दो महान सन्त विद्यमान थे। सेंवढा राज्यान्तर्गत महाराजा पृथ्वीसिंह 'रसनिधि' के धर्म गुरु महात्मा अक्षर अनन्य योग मार्गी सन्त थे। वे महाराजा पृथ्वीसिंह को उपदेश देते थे। महाराजा पृथ्वीसिंह 'रसनिधि' नाम से कविता भी लिखते थे। इनका एक ग्रन्थ रतन हजारा उपलब्ध है। महात्मा अक्षर अनन्य का विशाल काव्य साहित्य अनन्य ग्रन्थावली के नाम से श्री अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव सेंवढा ने सम्पादन किया है। महात्मा अक्षर अनन्य बुन्देलखण्ड की महान विभूति थे। बुन्देल केशरी महाराजा छत्रसाल से भी उनकी भेंट हुई थी तथा उनके काव्यमय पत्र व्यवहार भी प्रकाश मे आये हैं। दूसरे सन्त प्राणनाथ थे जो छत्रसाल के धर्म गुरु थे। महाराजा छत्रसाल और प्राणनाथ के मिलन को विद्वानो ने समर्थ गुरु रामदास और छत्रपति शिवाजी के मिलन जैसी घटना बतलाया है। स्वामी प्राणनाथ अन्याय और अत्याचार के शासन से जनता को मुक्त कराने के लिए एवं सर्वधर्म समन्वय की नीति से अनुप्राणित सद्धर्म की स्थापना के लिए छत्रसाल जैसे उपयुक्त पात्र को खोजते हुए बुन्देल भूमि में पधारे थे। प्राणनाथ के शिष्यो में म स लाल दास एवं चरण दास उल्लेखनीय है। अन्य सन्त गुलाब एवं जगजीवन भी मानव मात्र के कल्याण की भावनाओं से ओत प्रोत उपदेश देते थे।

इन सन्तों की वाणियों एवं उपदेशो का तत्कालीन साहित्य पर स्पष्ट प्रभाव देखा जाता है। धर्म प्राण जनता सन्तों की अमृत वाणी के आह्वान से धर्म के सद्गुणों से मोह सन के लिए राजा के ध्वज के नीचे सबल हो जाती थी। प्राणनाथ ने अपने चारो शिष्यों का सम्राट औरंगजेब को हिन्दू धर्म विरोधी दुर्नीति त्याग

देने हेतु एव नई दिशा देने हेतु भेजा था, जिन्हें औरगजेब के काजी मुल्लाओ ने बदी बना लिया था।

सास्कृतिक परिस्थिति

यह विभिन्न धर्मो एव सस्कृतियो के सक्रमण का युग था। विदेशी जातियाँ इस क्षेत्र म अपने पैर जमाने के लिए समय समय पर आक्रमण करती थीं। तत्कालीन नरेश मुगलों के आधिपत्य म थे अतएव मुगल सस्कृति से प्रभावित होना स्वाभाविक ही था। अकबर बादशाह ने हिन्दू राजाओ से बड़े मधुर सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे। वह हिन्दू धम और सस्कृति से प्रभावित था तथा उसकी धार्मिक एव सास्कृतिक विचारधारा से हिन्दू जनता प्रभावित हुए बिना न रह सकी। पर औरगजेब हिन्दू धम व सस्कृति का कट्टर विरोधी था। वह हिन्दुओ के पवित्र स्थानो को नष्ट करके मुस्लिम सस्करण कर रहा था। इस तरह एक सस्कृति दूसरी सस्कृति पर अधिक हावी थी। हिन्दू सस्कृति की रक्षा हेतु कुछ सत तत्कालीन राजाओ को प्रेरणा देते रहते थे। महाप्रभु प्राणनाथ मारवाड से विन्ध्य भूमि मे इसी सद्उद्देश्य से आये थे। वे हिन्दू और मुसलमान दोनो के धम और सस्कृति को एक ही ईश्वर के रूप मानते थे। इस सम्बन्ध म महाप्रभु का एक छन्द देखने योग्य है–

> हिन्दू कहें हम उत्तम', मुसलमान कहे हम पाक।
> ये दोना मुट्ठी एक ठौर की एक राख दूजी खाक॥'

हिन्दू मुस्लिम एकता के उस अध्याय से हिन्दू एव मुस्लिम सस्कृतियाँ एक दूसरे के निकट आई तथा इन दोनो ने भविष्य म एक होकर अग्रेजी शासन से लोहा लिया। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की सेना म अनेक मुसलमान सरदार तोपची एव सनिक थे। अग्रेजो और महारानी लक्ष्मीबाई के उस भीषण स्वातन्त्र्य युद्ध का वणन प्रधान कल्याणसिंह कुडरा ने झाँसी को राइसा म किया है। एक अन्य कवि प मदनमोहन द्विवेदी 'मदनेश' ने भी महारानी लक्ष्मीबाई के इस युद्ध से सम्बन्धित लक्ष्मीबाई रासो की रचना की थी।

स दभ

१ हिंदी साहित्य का बहत इतिहास प्रथम भाग—राजबली पाण्डेय, प्रकाशक, नागरी प्रचारिणी सभा काशी स २०१४ वि पृ ६१
२ मधुकर पत्रिका—वप २ अक १४—अप्रल १६४२, पृ २१
३ दनिक मध्यप्रदेश—दीपावली विशेषाक १६७१ श्री शिखरच द मुफलिस की रचना।
४ हिन्दी भाषा का इतिहास—डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, भूमिका भाग, प ६५
५ भाषा विज्ञान—डॉ० श्यामसुन्दर दास, नवम सस्करण स २० २४, सन् १६६७ लीडर प्रेस प्रयाग प ६१
६ हिन्दी वीर काव्य—डॉ० टीकमसिंह तोमर, प १८३
७ दतिया दशन स श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, पृ ८
८ वही प ८
८ वही, प १०
१० वही पृ १३

दी गई उपयुक्त अर्धाली से आशय पूरा नहीं निकलता। अर्धाली के 'मास' शब्द का अर्थ माह से ही लिया जायेगा पर पंक्ति में माह के नाम का उल्लेख नहीं किया गया। यदि 'ग्यारह सौ दस पांच (११९५) को 'ग्यारह सौ दस पच' अर्थात् ११५० वि. मान लें तो भी इतिहास द्वारा दी गई तिथियों और इस तिथि में पर्याप्त अंतर रहता है।

परिमाल रासो को चन्द वरदाई की रचना न माने जाने का एक कारण यह भी है कि चन्द दिल्लीश्वर पृथ्वीराज चौहान का दरबारी कवि था। वह चारण धर्म का उल्लंघन करके अपने आश्रयदाता के प्रबल शत्रु परिमाल चन्देल की प्रशंसा में 'परिमाल रासो' की रचना नहीं कर सकता था। पृथ्वीराज रासो के महोबाखण्ड को परिमाल रासो के रूप में बाबू श्यामसुन्दर दास ने सम्पादित तो किया किन्तु आज उसका प्रकाशन ही बन्द है। यदि यह चन्द की स्वतन्त्र रचना है तो इसका दुबारा प्रकाशन क्यों नहीं किया गया? अवश्य यह रचना संदिग्ध है। डॉ० टीकमसिंह तोमर ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी वीर काव्य' में परिमाल रासो के सम्बन्ध में निम्नांकित विचार प्रस्तुत किये हैं–

"साथ ही अन्य प्रमुख प्रकाशित ग्रन्थ परिमाल रासो है जिसके सम्पादक डॉ० श्यामसुन्दर दास तथा प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा काशी है। अभी तक इसे पृथ्वीराज रासो का एक अंश माना जाता है, पर उक्त विद्वान सम्पादक के मतानुसार वह एक स्वतन्त्र काव्य ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की रचना तिथि भी अनिश्चित है। एक संदिग्ध विवादास्पद रचना होने के कारण इस कृति के अध्ययन का यहाँ पर प्रश्न ही नहीं उठाया गया है। दूसरे यह वृहदाकार होने के कारण एक अलग स्वतन्त्र अध्ययन का विषय बन सकता है।"[8]

इस ग्रन्थ के प्रति विभिन्न विद्वानों के उदासीन दृष्टिकोण से स्पष्ट है कि यह ग्रन्थ मूलतः न तो परिमाल रासो है और न चन्द इसके रचयिता। जहाँ तक बाबू श्याम सुन्दर दास द्वारा सम्पादित परिमाल रासो का प्रश्न है निश्चय ही वह पृथ्वीराज रासो का महोबा खण्ड ही है। इस प्रकार इस ग्रन्थ का अध्ययन यहाँ प्रस्तुत नहीं किया जा सका।

परिमाल रासो के सम्बन्ध में जो विवरण 'बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य' पुस्तक में श्री रामचरण ह्यारण मित्र झांसी ने दिया है उसी के आधार पर उसका सामान्य परिचय निम्न प्रकार है–

'परिमाल रासो' का कथानक–महाराजा परिमाल अपने वीर सेना नायकों आल्हा और ऊदल के साथ कालिंजर की यात्रा पर जा रहे थे। मार्ग में हिरणों के एक झुण्ड को देखकर आल्हा ऊदल ने अपने घोड़े उसके पीछे डाल दिये और उस झुण्ड में से कुछ हिरणों को अपने बाणों का निशाना बनाया। महाराज

परिमाल आल्हा-ऊदल के शौर्य से प्रसन्न हुए। परन्तु महाराजा का माहिल नाम का मंत्री आल्हा ऊदल की वीरता से ईर्ष्या रखता था। कालिंजर पहुँच जाने पर माहिल ने परिमाल को आल्हा और ऊदल के विरुद्ध उकसाया। उसने महाराज से कहा कि आल्हा के पास पांच सुंदर और वेगवान जो अश्व हैं, वे महाराज के अस्तबल में बँधने योग्य हैं। अतएव आल्हा ऊदल से ये अश्व ले लिए जायें और उन्हें दूसरे दे दिये जायें। यदि वे किसी प्रकार से नहीं देते, तो उन्हें राज्य निष्कासन दे दिया जाय। महाराज के द्वारा अश्व मांगे जाने पर, आल्हा-ऊदल ने माता देवलदे से पूछा, तो उन्होंने साफ इंकार कर दिया कि ये अश्व महाराज को नहीं दिये जायेंगे, चाहे भले ही देश निकाले का दण्ड दे दिया जाय। परिमाल रासो में इस आशय का एक सुंदर छंद में वर्णन किया गया है—

"सुनत वचन देवलदे खिज्जिय।
पूत बछेरा देन न किज्जिय॥
मास छंड कनवज कहू चल्लिय।
राजा दलपागुर सा मिल्लिय॥"

घोड़े न देने के अपराध में आल्हा-ऊदल देश निष्कासन का दण्ड पाकर माता देवलदे के साथ कन्नौज की ओर प्रस्थान कर गये। मार्ग में हरसिंह और विरसिंह राजाओं के राज्य पर आक्रमण करके अतुल धनराशि लूट ली थी। कन्नौज पहुँचने पर जयचन्द के द्वारा उनका वीरोचित सम्मान किया गया तथा दरबार में ऊँचा स्थान प्रदान किया गया।

आल्हा और ऊदल के कन्नौज चले जाने के पश्चात् माहिल ने महाराज परिमाल के विरुद्ध दिल्ली के अधिपति पृथ्वीराज चौहान को भड़काना प्रारम्भ किया। राजा परिमाल इसके पहले ही एक असि 'प्रच्छालन महायज्ञ' में शस्त्र त्याग कर चुके थे अतः यह एक स्वर्ण अवसर था, कि पृथ्वीराज चौहान अपनी पुत्री बेला के ब्याह का बदला महाराज परिमाल से ले सकें। महोबे में इस समय पृथ्वीराज के सम्मुख युद्ध में टिकने वाला कोई न था।

माहिल की कूटनीति का पता जब परिमाल के ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्माजीत देव को चला तो उन्होंने भर दरबार में माहिल को बुरा भला कहा। माहिल ने क्रोध में आकर पृथ्वीराज को महोबे पर तुरंत आक्रमण कर देने के लिए एक पत्र लिखा। इस पत्र में श्रावण मास के भुजरियों के पर्व पर महोबे में कीरत सागर पर होने वाले भुजरियों के उत्सव के दिन आक्रमण करने का उल्लेख था, क्योंकि महाराज परिमाल की पुत्री चन्द्रावलि डोले में बैठकर भुजरियाँ 'सिराने' के लिए कीरत सागर पर उस दिन जायगी और पृथ्वीराज युद्ध करके चन्द्रावलि का डोला छीनकर, उसका विवाह अपने पुत्र के साथ करके बेला के विवाह का बदला ले

मवत थे। आल्हा खण्ड के अनुसार यह प्रसिद्धि है कि इस घटना के पूर्व महाराज परिमाल ने आल्हा-ऊदन के साथ दिल्ली के पृथ्वीराज चौहान को युद्ध में पराजित करके उनकी पुत्री बेला से ब्रह्माजीतदेव का विवाह करा दिया था। माहिल का पत्र मिलते ही बदले की भावना से प्रेरित होकर पृथ्वीराज चौहान ने महोबे पर आक्रमण करने की तैयारियाँ कर दीं। 'परिमाल रासो' में पृथ्वीराज की सेना के सजने तथा शूरवीर, सेनानायकों का विस्तार में वर्णन किया गया है।

पृथ्वीराज चौहान की सेना का अतिरंजित वर्णन करने के साथ-साथ कवि ने परिमाल की सेना की प्रशंसा भी की है। एक छन्द में वह लिखता है, कि पृथ्वीराज की सेना में सौ सामन्त ऐसे थे, जो एक-एक लाख सैनिकों का सामना कर सकते थे, और महाराज परिमाल की सेना में पाँच धवल ऐसे वीर थे जो एक एक सौ-सौ सामन्तों के लिए पर्याप्त था अर्थात् पृथ्वीराज की सेना से परिमाल की सेना शक्तिशाली थी। पर आल्हा ऊदल के बिना महाराज परिमाल की सेना निबल ही थी। आल्हा और ऊदल को बुलाने के लिए महोबे की महारानी मल्हना ने एक अत्यन्त करुणाजनक पत्र में महोबे की स्थिति की गम्भीरता का उल्लेख करके महोबे के दरबारी कवि जगनिक को कन्नौज भेजा। पत्र देवलदे के नाम था। जगनिक ने माता देवलदे को पत्र देने के उपरान्त आल्हा से महोबा चलने के लिए कहा, तो आल्हा ने रोषपूर्ण शब्दों में कहा कि चाहे महोबा लूट लिया जाय और महाराज परिमाल की पराजय का मुख देखना पड़े मैं महोबा नहीं जाऊँगा क्योंकि बिना किसी अपराध के महाराज परिमाल ने हम 'देश निकाला' दिया है। परिमाल रासो में आल्हा की यह उक्ति एक छन्द में निम्न प्रकार दी गई है—

'सुन जगनिक की बात आल्ह बुल्लिय तब बानिय।
लुट्टि महोबो नगर कुट्टि चन्देल गुमानिय॥
बिना चूक परिमाल कियो हम देस निकारव।
काम आव जसराज सब नद काम सुधारव॥
पदहार सन आग धरहु, चुगल चार हित कान सह।
सावत सूर सम्मुख लरहु जुध्य करहु चहु आन सह॥

उपर्युक्त छंद की अंतिम तीन पंक्तियों में आल्हा ने जगनिक से यह कहा कि महाराज परिमाल के यश की रक्षा में मेरे पिता 'दस्सराज' भी काम आये थे। इसका महाराज ने कुछ भी ध्यान न रख, चुगलखोर माहिल के कहने से हम लोगों को देश से निकाल दिया।

परन्तु माता मल्हना के करुणा भरे पत्र ने माता देवलदे का हृदय पिघला दिया। माता देवलदे ने आल्हा को अनेक उत्तेजना भरे शब्दों में समझाया। महोबे में रहते समय वहाँ की कुछ वस्तुओं से आल्हा ऊदन को मोह सा हो गया था उन्हीं

को शत्रुओं द्वारा नष्ट हो जाने की बात देवलदे ने आल्हा से कही। माता ने चुनौती सी दी कि ऐसे गाढे समय के लिये ही मैंने तुम्हें पाला पोसा है। जिस महोबे में तुमने बडी-बडी इनाम खाई, वही महोबा आज संकट में है। इसलिए आज महोबे की रक्षा करना तुम्हारा परम धर्म है।

माता देवलदे के वीर भावोत्पादक शब्दों से प्रेरित होकर आल्हा ने महोबे की रक्षा का व्रत लिया और जगनिक को आश्वासन देकर विदा कर दिया। महाराज जयचंद से आज्ञा प्राप्त कर आल्हा-ऊदल ने योगियों के वेष में महोबा पहुँचकर 'कीरत सागर' के निकट एक बाग में अपना डेरा जमाया।

उधर भुजरियों के पर्व पर पृथ्वीराज चौहान ने योजनानुसार महोबा पर आक्रमण किया और परिमाल के पुत्र सभाजीत देव द्वारा उसका सामना किया गया। सभाजीत देव की वीरगति के पश्चात ब्रह्माजीत ने पृथ्वीराज से मोर्चा लिया परन्तु वह भी पृथ्वीराज की सेना के दस हजार हाथियों के घेरे में घेर लिए गये। तब महाराज परिमाल की सेना विचलित होकर भागने लगी। चन्द ने परिमाल की सेना के विचलित होने का वर्णन एक छन्द में इस प्रकार किया है–

'विचल चमू परिमाल की समर न आयस अच।
ब्रह्माजित कुमार संग रये सूर दस पंच॥'

जिस समय पृथ्वीराज चौहान ब्रह्माजीत का वध करने को उद्यत हो रहे थे और महाराज परिमाल आतंकित हो रहे थे उसी समय आल्हा-ऊदल अपने साथियों सहित युद्ध क्षेत्र में कूद पडे। कन्नौज के राजा जयचन्द के वीर पुत्र लाखन राना ने पृथ्वीराज का मोर्चा डाटा पर वह भी पृथ्वीराज के द्वारा घेरे जाकर विवश कर दिए गए। तब वीर शिरोमणि ऊदल ने वीरतापूर्वक ब्रह्माजीत देव और लाखन दोनों को ही हाथियों के घेरे में मुक्त करा लिया।

चन्द बरदाई ने योगियों और पृथ्वीराज के बीच हुए युद्ध का स्वाभाविक वर्णन किया है। योगि वेषधारी वीर आल्हा ऊदल और उनके साथियों के सम्मुख पृथ्वीराज की सेना न ठहर सकी। आल्हा के द्वारा पृथ्वीराज को पकड लिया गया और जब आल्हा पृथ्वीराज को मारने को उद्यत हुए तब गुरु चन्द ने राजा को न मारने को कहा। कवि ने एक छन्द में इस आशय का वर्णन निम्नलिखित रूप में किया है–

"भगी फौज पीथल्ल की जोगि जान।
गयौ अश्व पेलत जहाँ चहूँ आन॥
हनौ राजपील गिरौ भूमि आयं।
पकर जोगि हत सुराज उठाय॥

तब आय गुरु चन्द बानी उचार।
अहो जोगि ईस सुराजं न मार॥'

मूर्छित पृथ्वीराज को चन्द बरदाई युद्ध क्षेत्र से हटाकर शिविर में ले गये। आल्हा, ऊदल के वीरतापूर्ण युद्ध का प्रभावशाली वर्णन स्वयं चन्द ने परिमाल रासो में इस प्रकार किया है–

"कहैं चन्द जोगी बड़ौ जुध्द किन्नौ।
भगी फौज जोजन्न चार परिन्नौ॥"

अर्थात् पृथ्वीराज की सेना चार योजन पर्यन्त भाग गई। इस युद्ध के पश्चात् कीरत सागर पर भुजरियों के पर्व पर फिर दोनों सेनाओं में निर्णायक युद्ध हुआ। चन्द के परिमाल रासो में इस आशय का छन्द निम्न प्रकार दिया हुआ है–

"सावन सुद पून गई भादो परमा आन।
इतै कुंवर जोगी सजे उतै भूप चौहान॥'

रानी मल्हना और राजकुमारी चन्द्रावलि का डोला अन्य सखियों के साथ महोबे की शस्त्र सुसज्जित सेना से सुरक्षित कीरत सागर पर पहुँचा। दोनों सेनाओं में तुमुल युद्ध छिड़ गया। महोबे की सेना का संचालन योगिराज आल्हा और चौहान की सेना का संचालन स्वयं पृथ्वीराज चौहान कर रहे थे। चौहान के शब्द बेधी बाण आल्हा के शरीर से लगकर कुण्ठित होकर भूमि पर गिर जाते थे। जनश्रुति एवं आल्हा खण्ड के अनुसार देवी के वरदान से आल्हा का शरीर वज्र का हो गया था। पृथ्वीराज भी इस बात को जानते थे। इसलिए उन्हें समझते देर न लगी कि यह योगी वेष में आल्हा के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता। पृथ्वीराज ने आल्हा के सम्मुख अपनी पराजय स्वीकार की और आल्हा के द्वारा कहे जाने पर महाराज परिमाल से भी क्षमा याचना करके दिल्ली लौट गये। रानी मल्हना और राजकुमारी चन्द्रावलि ने विधिपूर्वक कीरत सागर पर भुजरियों का उत्सव मनाया जब आल्हा ऊदल कन्नौज को वापिस लौटने लगे तो महाराजा परिमाल ने उनसे अपनी भूल की क्षमा याचना करते हुए महोबा चलने को कहा। महाराज परिमाल और महारानी मल्हना तथा बहिन चन्द्रावलि के स्नेह से प्रभावित हो आल्हा तो महोबा चलने को तैयार हो गये परन्तु ऊदल न माने। अन्त में आल्हा ने सबको आश्वासन दिया कि हम किसी भी स्थिति में कभी भी महोबा आने के लिए सम्बद्ध रहेंगे। सबको समझा बुझाकर आल्हा और ऊदल ने साथियों सहित कन्नौज को प्रस्थान किया।

पश्चात् आल्हा और ऊदल को मनाकर महोबा ले आने के लिए महाराज परिमाल ने अपने राजकवि जगनिक को कन्नौज भेजा तथा आल्हा ऊदल को महोबे

भेजे जाने के सम्बध म एक पत्र महाराज जयचद को लिखा, तदनुसार जयचद ने ससम्मान आल्हा ऊदल को महोवा के लिये विदा कर दिया। 'आल्ह खण्ड म भी आल्हा मनौआ के नाम स दी गई है।

'परिमाल रासो अनुपलब्ध होने के कारण उसकी साहित्यिक उपलब्धियों पर प्रकाश नहीं डाला जायगा।

सदभ

१ वीर काव्य-डॉ० उदय नारायण तिवारी, प ५६
२ वही, प ६१
३ हिदी साहित्य का वहद् इतिहास-डा० राजवली पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा काशी प्रथम सस्करण स २०१४, पृ ५६
४ बुदेलखण्ड की सस्कृति और साहित्य-लेखक श्री रामचरण ह्यारण मित्र, प १६ से ३० तक
५ हिदी साहित्य का वृहद् इतिहास-सपादक राजवली पाण्डेय, ना प्र स काशी, प्रथम सस्करण स २०१४, प ६३
६ हिन्दी वीर काय-डा० टीकमसिंह तोमर, भूमिका भाग पृ १६

अध्याय चतुर्थ

मुगलकाल के समसामयिक रासोकाव्य

इस अध्याय के अन्तगत मुगन काल क सम-सामयिक, मध्यकाल म लिखे गय रासा काव्यो का विवरण प्रस्तुत किया जायगा। वार काव्य की दृष्टि से इस काल की प्रमुख रचनायें वीरसिंह देव चरित्र दलपतिराव रायसा छत्रप्रकाश करहिया को रायसो हिम्मत बहादुर विरुदावली तथा शत्रुजीत रासो आदि ग्रन्थ हैं जिनमे रा रासो काव्य की दृष्टि से केवल दलपति राव रायसा करहिया को राइसो तथा शत्रुजीत रासा का विवेचन किया जायगा।

वीरसिंह देव चरित

जसा कि ग्रन्थ के शीषक से स्पष्ट होता है वीरसिंह देव चरित्र एक चरित काव्य है। इस ग्रन्थ को रासो काव्य की श्रेणी म नहीं रखा जा सकता है। आचाय केशवदास काव्यशास्त्र क महापण्डित थे उन्होने इस ग्रन्थ की रचना चरितकाव्य की दृष्टि से ही की है।

वीरसिंह देव चरित क कई नाम प्रचलित है– वीर चरित्र, वीरसिंह चरित्र वीरसिंह देव चरित्र वीरसिंह देवजू चरित आदि। केशवदास जी के इस ग्रन्थ को केशव ग्रन्थावली खण्ड ३ म आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने वीर चरित्र नाम से सपादित किया है। ग्रन्थ के प्रत्येक प्रकाश की समाप्ति पुष्पिका में वीरसिंह देव चरित्र लिखा गया है। केशवदास जी न ग्रन्थ म अनेक छन्दो म इस ग्रन्थ के नाम वार चरित्र एव वीर चरित दिये है–

उदाहरणाथ–

१ बुधिवल प्रबन्ध तिन बरनियो
वीर चरित्र विचित्र सुनि।[1]

२ कीनो वीर चरित्र प्रकाश।[2]

३ वीर चरित्र विचित्र किय,
केशव दास प्रमान।[3]

४ वीर चरित्र सतत सुनत,
दुख को वश नसाय।[4]

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि 'वीरसिंह देव चरित' एक चरित काव्य है। इस ग्रंथ की गणना रासो काव्यों में नहीं की जा सकती। अतः इस काव्य ग्रंथ का अध्ययन यहाँ केवल परिचयात्मक रूप में ही प्रस्तुत किया जायगा।

परिचय–

महाकवि केशवदास का जन्म संवत् १६१२ वि० में ओरछा में हुआ था। ये सनाढ्य जाति के ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम पण्डित काशीनाथ मिश्र एवं बाबा का नाम पण्डित राजकृष्ण दत्त था। बलभद्र इनके बड़े भाई थे एवं कल्याण दास छोटे भाई थे। इनकी मृत्यु तिथि १६७४ विक्रमी तदनुसार सन् १६१७ ई० है।[6] लाला भगवानदीन ने इनका जन्म संवत् १६१८ में एवं मृत्यु संवत् १६८० वि० में बतलाई है।[6]

केशव ओड़छाधीश इन्द्रजीतसिंह के आश्रित कवि थे। केशवदास जी अत्यन्त नीति कुशल थे। सम्राट अकबर द्वारा महाराज इन्द्रजीत सिंह पर लगाई गई दण्ड की राशि इन्होंने माफ करवा दी थी। इनकी पद रचना से प्रभावित होकर एक पद पर महाराज बीरबल ने इन्हें ६ लाख रुपये का पुरस्कार प्रदान किया था।[7]

केशवदास ने ब्रजभाषा में काव्य रचना की। इनकी भाषा पर बुन्देली का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। भाषा की दृष्टि से वीरसिंह देव चरित एक समृद्ध ग्रंथ है। इनके काव्य में संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इनकी रचनाओं में पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति सर्वत्र परिलक्षित होती है।

केशव राजपरिवार के हितैषी थे। ये निर्भीक एवं स्पष्टवादी व्यक्ति थे। इनकी स्पष्टवादिता से रुष्ट होकर कल्याण देव द्वारा इन्हें निकाल दिया गया था। इनके पश्चात वीरसिंह देव द्वारा इन्हें सम्मानित स्थान प्रदान किया गया।[8] महाकवि केशवदास जी ने अनेक ग्रंथों की रचना की। इनके ग्रंथ लक्षण ग्रंथों की कोटि में आते हैं। महाकवि केशवदास ओड़छाधीश इन्द्रजीतसिंह के दरबारी कवि थे। इनकी निम्नलिखित रचनायें हैं।

१– रतन बावनी २– रसिक प्रिया ।३– कवि प्रिया ।४– रामचन्द्रिका, ५–वीरसिंह देव चरित ६–विज्ञान गीता ७–जहाँगीर जस चन्द्रिका।

'नख शिख' नाम का एक और ग्रंथ केशवदास द्वारा लिखा गया मिला है। 'बाल चरित तथा हनुमान जन्म लीला' नाम के दो ग्रंथ भी केशवदास जी द्वारा लिखे गये बतलाये जाते हैं। पर रचना शैली तथा भाषा आदि की दृष्टि से ये ग्रंथ केशव की रचनाओं की कोटि में नहीं आते।

वीरसिंह देव चरित

प्रस्तुत ग्रंथ महाकवि केशवदास की वीर रस की रचना है। इस ग्रंथ का

रचना काल सं० १६६४ अर्थात् सन् १६०७ माना गया है। किन्तु इसमें सन् १६०८ तक की घटनाओं का समावेश है इसलिए डा० टीकमसिंह तोमर उपरांत तिथि पर सन्देह प्रकट करते हैं।* लेकिन कवि ने इस कृति में स्वयं कृति का रचना काल सवत् १६६४ दिया है, इसलिये सदेह की कोई गुंजाइश नहीं दिखाई देती–

'सवत् सारह से ब्रे सठा। बीति गए प्रगटे चौसठा।'

इसमें वीरसिंह देव के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। प्रारम्भ में शकर की स्तुति के पश्चात वीरसिंह देव के वश का वर्णन है। इसके पश्चात दान और लोभ का वाद विवाद कवि ने बड़े विस्तार से लिखा है। लोभ अपनी बढ़ा चढ़ा कर प्रशसा करता है तथा दान अपनी विभूति का वर्णन करता है। इस वाद विवाद से धार्मिक दृष्टिकोण पर प्रकाश पड़ता है। पहले और दूसरे "प्रकाश" में लोभ और दान का ही तर्क वितर्क है। तीसरे प्रकाश में लोभ के द्वारा पूछे जाने पर देवी द्वारा आगे की घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकाश में मधुकर शाह द्वारा वीरसिंह देव को बड़ौनी की बठक दिये जाने का वर्णन है।

मधुकरसाहि महीप मनु राखि प्रेम के भौन।
वीरसिंह को वृत्ति के बठक दई बडौन॥

(प्रका० ३ छ० ६)

महाराज वीरसिंह देव प्रबल योद्धा थे। महत्वाकांक्षी तो वे थे ही इसलिए राज्य विस्तार के लिये उन्होंने आक्रमण करके पवाया बेलारस आरौन करहरा, हथनौरा आदि के ठिकाने जीत लिए और उन पर अधिकार कर लिया। इनके आतक से भाण्डेर का मुगल सरदार हसन खाँ भयभीत होकर भाग गया और इन्होंने भाण्डेर को भी अपने राज्य में मिला लिया। वीरसिंह देव ने समाइची खाँ (इच्छी खाँ) से एरच भी छीन लिया। केशवदास जी ने वीरसिंह देव चरित्र में इन सब बातों का उल्लेख कर दिया है। पुस्तक के शीर्षक के आधार पर वीरसिंह देव के जीवन की सभी घटनावलियों को क्रमबद्ध रूप में रखा गया है। यदि कवि उपयुक्त युद्धों का सविस्तार वर्णन लिखने बैठ जाता तो कितने ही ग्रन्थ आकार पा जाते।

वीरसिंह देव की बढ़ती हुई शक्ति को दबाने के लिये सम्राट अकबर ने अपने अधीन राजा रामशाहि और ग्वालियर के आसकरन को एक बड़ी सेना देकर भेजा था। राजाराम पवार तथा हसन खाँ भी अपने सैनिकों को लेकर इस सेना के साथ हो गये थे। वीरसिंह देव ने इस विशाल सैन्य शक्ति से सम्मुख युद्ध में विजय पाने की आशा न देख, इन्द्रजीत और प्रताप राय को साथ लेकर इन पर छापे मारने प्रारम्भ कर दिये। अन्त मुगल सेनायें लौट गईं।

पुन अक्बर ने स० १६५१ म अबुल फजल के नेतृत्व म एक सेना भेजी। अबुल फजल न पवाया म पडाव किया तो रामशाहि ने गोविन्ददास को वीरसिह को समझाने के लिये भेजा कि व व्यथ युद्ध न करें बडौनी छोड दें। पर वीरसिह दव न माने। नवाब दौलतखां उन्हे फुसला कर जब दक्षिण की ओर ले चला तो इसी बीच बडौनी पर शाही अधिकार हो गया। जब वीरसिह देव को यह ज्ञात हुआ तो वीरसिह देव ने बडौनी की गद्दी वापिस कर देने की चर्चा की। जब नवाब दौलतखा ने बडौनी के स्थान पर दक्षिण म और बडी जागीर वीरसिह देव को देने को कहा तो इन्होने यह बात स्वीकार नही की और सग्रामशाहि के साथ शिकार का बहाना करके लौट आये। वीरसिह देव के आते ही बडौनी में तैनात शाही अफसर भाग खडे हुए।

वीरसिह देव एक प्रतापी बुन्देला शासक था। सम्राट अक्बर उसे नीचा दिखाना चाहता था। स० १६५६ म जब दक्षिण यात्रा पर जाते हुये अक्बर नरवर ठहरा तो ओरछा के शासक रामशाहि तथा राजाराम कछवाहा अक्बर से मिले। रामशाहि का पुत्र सग्राम शाहि बडौनी की गद्दी पाने की इच्छा रखता था। रामशाहि के नेतृत्व मे अक्बर की सेना न बडौनी पर हमला किया। वीरसिह देव की सधि करनी पडी। पर जब राजाराम कछवाहा न वीरसिह देव के एक गाँव को जला दिया तो वे भडक उठे, और थोडे से योद्धाओ के साथ शाही फौज पर भयानक धावा बोल दिया। वीरसिह दव विजयी हुए।

शाहजादा सलीम और अक्बर मे मनमुटाव चल रहा था। सलीम न विद्रोह किया। उसने अवध तथा कडा मानिकपुर पर अधिकार कर लिया। महाराज वीरसिह देव की शक्ति अब काफी बढ चुकी थी। अपने यादव सेनापति के परामर्श से उन्होने गगा स्नान को प्रस्थान किया। लौटकर उन्होने शाहजादा सलीम से भेट की। सलीम ने महाराज की आवभगत करने के पश्चात् अपने शत्रु अबुल फजल के बारे म कहा। महाराज वीरसिह दव न अबुल फजल का सिर काटकर सलीम के पास भिजवा देने का वचन दे दिया। सलीम के राज विद्रोह को दबाने के लिये अक्बर ने दक्षिण से अबुल फजल को बुला भेजा। इधर महाराज वीरसिह दव अबुल फजल के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे, क्योकि उन्हे उसके आने का पता चल गया था।

जब दक्षिण स लौटते हुए अबुल फजल ने आतरी के पास पराइछे ग्राम मे पडाव किया तो वीरसिह देव ने उसके ऊपर आक्रमण कर दिया। घमासान युद्ध हुआ। वीरसिह देव न अबुल फजल का सिर काटकर चम्पतिराय के हाथो शाहजादा सलीम के पास भिजवा दिया। शाहजादा प्रसन्न हुआ और बडौनी म महाराज वीरसिह देव का राजतिलक करने के लिये एक ब्राह्मण के साथ रत्नजटित

खड्ग, छत्र, चवर आदि भेंट स्वरूप भेजे। अकबर को अबुल फजल के बध से महान दुख हुआ क्योंकि अबुल फजल अकबर के दरबार के नव रत्नों में से एक था। सम्राट अकबर ने वीरसिंह देव को पकड़वाने के लिए विशाल सेना भेजी।

केशवदास जी ने अबुल फजल का बध आंतरी में होना लिखा है किन्तु दतिया के श्री हरिमोहन लाल जी श्रीवास्तव ने एक लेख प्रतापी बुन्देला शासक 'वीरसिंह देव (मध्यप्रदेश सन्देश मासिक पत्रिका ६ फरवरी ७४ पृ० २२) से यह स्पष्ट होता है कि अबुल फजल दतिया के निकट चन्दवा की बावडी के पास घने जंगल में मारा गया। अबुल फजल दमे का रोगी था। अतः धूल से बचने के लिये वह सेना के दो भागों को आगे पीछे काफी दूरी पर रखकर चलता था। अबुल फजल का मकबरा आज भी आंतरी में वर्तमान है।

सातवें प्रकाश में खड्गराय के साथ युद्ध का वर्णन हुआ है, जिसमें वीरसिंह देव खड्गराय का सिर काट कर सलीम के पास भेज देते हैं। अकबर इससे और असंतुष्ट हो जाता है। आठवें प्रकाश में राजसिंह के साथ हुए युद्ध का वर्णन है। नवें प्रकाश में अकबर की मृत्यु का उल्लेख है-- "अकबर साहि गए परलोक। जहाँगीर प्रभु प्रगटे लोक।" (छन्द १२) जहांगीर गद्दी पर बैठता है। कवि ने जहाँगीर के राज्यारोहण का वर्णन बड़े प्रशंसात्मक एवं अलंकारिक शब्दों में किया है। वीरसिंह देव इस समय मुगल साम्राज्य के प्रमुख सहायक बन गये थे। दसवें प्रकाश में रामशाहि रामदेव आदि के साथ पारिवारिक वैमनस्य का वर्णन हुआ है। ग्यारहवें प्रकाश में अब्दुल्ला का सेना लेकर वीरसिंह देव पर चढ़ाई करने का वर्णन है। बारह तथा तेरह प्रकाश में युद्ध वर्णन है। चौदहवें प्रकाश में अब्दुल्ला खाँ के हार जाने का वर्णन है। एवं बादशाह जहांगीर द्वारा मधुकर शाह शासित समस्त राज्य का स्वामित्व वीरसिंह देव को प्रदान किये जाने का वर्णन है।

समस्त वर्णन दान और विन्ध्यवासिनी देवी के संवादों में हैं। १५वें प्रकाश में देवी अन्तर्धान हो जाती है। दान और लोभ जहांगीर पुर देखने जाते हैं और कवि ने नगर का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया है। सोलह सत्रह अठारह एवं उन्नीसवें प्रकाश में नगर हयशाला, सेना आदि का चाटुकारितापूर्ण एवं आलंकारिक भाषा में वर्णन किया गया है। बीसवें और इक्कीसवें प्रकाश में वीरसिंह तथा बाइसवें प्रकाश में वनिताओं का अत्यन्त शृंगारपूर्ण लाक्षणिक एवं अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन हुआ है तथा वीरसिंह देव के विहार का भी वर्णन है। तेईसवें प्रकाश में वन वाटिकाओं का वर्णन है। चौबीसवें में क्रीडागिरि, पच्चीसवें में जलकेलि छब्बीसवें में मदन महोत्सव सत्ताइसवें में नृपति सभा एवं अठ्ठाइसवें प्रकाश में दान और लोभ के सम्मान का वर्णन है। उपरोक्त समस्त वर्णन दान और लोभ के संवादों में हुआ है। उन्नीसवें प्रकाश में वीरसिंह देव की राज्यश्री का वर्णन है।

तीसवें प्रकाश में पुन दान और लोभ के सम्मान का वर्णन है। इकतीसवें में राजकर्म और राजधर्म का वर्णन हुआ है। इस प्रकाश में संस्कृत के श्लोकों का भी प्रयोग किया गया है। बत्तीसवें प्रकाश में दान के द्वारा धर्म समागम का वर्णन किया गया है। इस प्रकाश में संस्कृत के श्लोक प्रयुक्त हुए हैं। वीरसिंह देव के द्वारा देवी देवताओं की स्थापना का भी उल्लेख हुआ है। इस प्रकाश में विजय, उत्साह जय, धर्म, आनन्द पराक्रम, भाग्य प्रेम आदि के द्वारा राजा की प्रशंसा की गई है। तैंतीसवें प्रकाश में सत्य, ज्ञान, सदाचार, पराक्रम, आनन्द, उद्यम विजय प्रेम, भोग उदय विवेक, भाग आदि के द्वारा राजा की प्रशंसा की गई है। इस प्रकाश के अन्त में केशवदास, छीतरमिश्र माहिबराय एवं उदयमणि मिश्र द्वारा राजा वीरसिंह देव की प्रशंसा की गई है।[1]

जोगी दास का 'दलपति राव रायसा'

जोगीदास के विषय में विशेष कुछ जाना नहीं जा सका है तथा इन्होंने अपने बारे में अपनी रचना में अधिक कुछ उल्लेख भी नहीं किया। दलपति राव रायसा के अन्तिम दोहा में कवि ने अपना अल्प परिचय प्रस्तुत किया है,[11] जिसके आधार पर जोगीदास भाण्डेरी वंश के थे तथा कई साखों से दतिया नरेश के कुल पूज्य थे। भाण्डेरी शब्द से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि जोगीदास के पूर्वज मूलत भाण्डेर निवासी थे तथा दतिया नरेश के आश्रय में आकर वे यहीं के निवासी हो गये और इनका वंश भाण्डेरी कहलाया। ग्रंथ की समाप्ति पुष्पिका में कवि ने अपने नाम के आगे भाण्डेरी स्पष्टतः लिखा है। समाप्ति पुष्पिका इस प्रकार है– इति श्री जोगीदास भांडेरी विरचताया श्री महाराधिराज श्री राउ राजा श्री दलपति राय जू देव को रायसो सपून।[12] अतः अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि जोगीदास भाण्डेर निवासी थे। कवि के जन्मकाल का निर्धारण भी जानकारी उपलब्ध न होने से नहीं किया जा सका, परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ के निर्माण की जो तिथि कवि ने दलपति राव रायसा में दी है[13] उससे जोगीदास का कविताकाल ज्ञात हो जाता है। सं. १७६४ विक्रमी, आषाढ़ कृष्ण तृतीया को जाजऊ के युद्ध में महाराज दलपतिराव वीरगति को प्राप्त हुए, उसी दिन जोगीदास ने उनके यश का गान करते हुए यह रायसा लिखा। जोगीदास कवि प्रतिभा सम्पन्न थे। उनकी रचना काव्य गुण सम्पन्न एवं परिमार्जित है। ऐसा अनुमान है कि कवि की और भी रचनायें रही होंगी जो अब प्रायः अनुपलब्ध हैं।

दलपति राव रायसा दो रायसा का मिला हुआ रूप है। इसमें १४३ छन्द शुभकरण रायसौ के तथा शेष छन्द दलपति राव रायसा से सम्बन्धित हैं। इस ग्रंथ में कुल ३१३ छन्द हैं। कवि ने ग्रंथारम्भ में दोनों राजाओं के विषय में रायसा

लिख जाने का संकेत किया है, जो इस प्रकार है—"अथ श्री महाराजाधिराज श्री राउराजा सुभकरन श्री दलपति राव जू देव को रायसौ लिख्यत । [14] और जहाँ पर शुभकरण रायसा पूर्ण होता है वहाँ उसकी समाप्ति पुष्पिका के साथ-साथ दलपति राव रायसा के प्रारम्भ का संकेत भी कवि के द्वारा स्पष्ट किया गया है ।[15] इस रायसे की रचना संवत १७६५ में हुई जैसा कि रायसे में एक स्थान पर उल्लेख मिलता है ।[16]

दलपति राव रायसा में सर्वप्रथम गणेश वंदना की गई है, तत्पश्चात कवि ने अपने आश्रयदाता की वंशावली प्रस्तुत की है ।[17] आगे आश्रयदाता का यश वर्णन करने के पश्चात् दलपति राव की दक्षिण की लड़ाइयों का विवरण दिया गया है जो उन्होंने अपने पिता शुभकरण के साथ अल्पायु में ही लड़ी थीं ।[18] यद्यपि दलपति राव रायसा के प्रथम १४३ छन्द शुभकरण रायसे के नाम से लिखे गये हैं पर इनमें भी सेना प्रयाण[19] या युद्ध विजय[20] आदि अवसरों पर कवि ने दलपति राव का ही नाम अधिक उजागर किया है ।

दतिया राज्य के संस्थापक भगवान राय के तृतीय पुत्र शुभकरण मुगल सेना में श्रेष्ठ सम्मान प्राप्त कर चुके थे । मुगल सम्राट औरंगजेब ने उनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर उन्हें पचहजारी मनसब प्रदान किया तथा बुन्देलखण्ड का नेतृत्व प्रदान किया ।[21] बुन्देला सामन्तों में अत्यन्त विश्वासपात्र शुभकरण ने भारतवर्ष के उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्रों में साम्राज्य विस्तार में मुगलों को विशिष्ट योग दिया । शुभकरण रासो में उत्तर की लड़ाइयों का उल्लेख तो नहीं है परन्तु बीजापुर और गोलकुण्डा की लड़ाइयों का विस्तृत वर्णन है और दलपतिराव ने अपने पिता शुभकरण के साथ इन लड़ाइयों में अपने पौरुष का परिचय दिया था ।

शुभकरण की मृत्यु के पश्चात् दलपतिराव ने पमारों को पराजित कर सेरछा को जीत लिया और दतिया राज्य में मिला लिया ।[22] औरंगजेब ने शाह शुभकरण की मृत्यु का शोक मनाया और दलपतिराव को मनसब व उच्च पद प्रदान करने के लिए दिल्ली बुलाया । उस समय दक्षिण भारत में बहुत उत्पात मचा हुआ था ।[23] औरंगजेब ने दक्षिण विद्रोह के शमन के लिए दलपति राव के साथ रुहिल्ला खाँ दाऊदखाँ पन्नी, नवाब जुल्फिकार, कासिमखाँ तथा अनेक सूबेदारों को भेजा ।[24] अपने अभियान में सफल होने पर दलपति राव को अदोनी का सूबेदार सन् १६८८ में नियुक्त किया गया ।[25] सन् १६६४ में दलपति राव ने बादशाह औरंगजेब को जिंजीगढ़ को जीतने में उल्लेखनीय सहायता प्रदान की थी ।[26] संवत् १७६३ वि० तदनुसार सन् १७०६ ई० को बादशाह औरंगजेब की मृत्यु हो गई । मृत्यु तिथि का स्पष्ट उल्लेख रासो में एक छन्द में कवि ने किया है ।[27] शाह आलम बहादुर शाह और आजम शाह के मध्य हुए उत्तराधिकार युद्ध

में दलपतिराव ने आजमशाह का पक्ष लेकर युद्ध किया। उसी युद्ध में शाहआलम से युद्ध करते हुए जाजऊ की लड़ाई (सन् १७०७, जुलाई १९) में दलपतिराव को एक घातक घाव लगा और उन्होंने वीरगति प्राप्त की। रासो में दलपतिराव की मृत्यु तिथि आषाढ़ कृष्ण संवत १७६४ वि. दी गई है।[28]

दलपति राव रासा में कवि को कथानक के संयोजन में अच्छी सफलता प्राप्त हुई है। विविध छदों के प्रयोग एवं घटनाओं के सफल समायोजन से सरसता एवं प्रवाह में वृद्धि हुई है। कवि ने अनेक स्थलों पर युद्ध की मारकाट तथा वीरता पूर्ण घटनाओं का स्वाभाविक चित्रण किया है।[29] वीरत्व वर्णन के साथ रायसा तत्कालीन युद्ध के कारण उत्पन्न जन साधारण की कठिनाइयों का भी न्यूनाधिक रूप में चित्रण प्रस्तुत करता है।

शूरवीरों की नामावलियाँ तथा युद्ध में प्रयोग किये जाने वाले हथियारों *और सामग्रियों की लम्बी-लम्बी सूचियों के बार-बार प्रयोग के कारण कहीं-कहीं* कथानक के स्वाभाविक प्रवाह में बाधा उपस्थित हुई है। ऐसे वर्णन बड़े नीरस एवं उबाऊ हो गये हैं।[30]

रायसे में बुन्देलखण्डी भाषा के शब्दों की प्रचुरता है। अरबी व फारसी के शब्दों को भी तद्भव रूप प्रदान किया गया है। जैसे जहान का जिहान। छद की गति के लिए अथवा ओज की सृष्टि के लिए शब्दों को तोड़ा मरोड़ा भी बहुत गया है। भाषा कहीं-कहीं क्लिष्ट हो गई है। कितने ही शब्द वीर परम्परा के अनुकूल होते हुए भी आज इस रूप में प्रचलित नहीं है। भाषा में कुछ द्वित्व वर्णों का इस प्रकार प्रयोग किया गया है कि सही लय बठाने में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है, एवं काव्य में अस्वाभाविकता उत्पन्न हो गई है।[31]

छत्र प्रकाश

लाल कवि द्वारा लिखा गया 'छत्र प्रकाश' ऐसा ऐतिहासिक प्रबन्ध है जिसमें छत्रसाल के अधिकांश जीवन की प्रमुख घटनाओं का तथ्यपूर्ण विवरण प्रस्तुत किया गया है। छत्र प्रकाश चरित काव्य है। 'चरित' विरुदावली एवं प्रकाश आदि नामों से अभिहित रचनायें चरित काव्यों की कोटि में आती हैं। जैसे रामचरित मानस। इस प्रकार की रचनाओं में काव्य नायक के जीवन की सभी प्रमुख घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करना ही कवि का उद्देश्य रहता है। छत्र प्रकाश में पन्ना नरेश महाराजा छत्रसाल के जीवन की जन्म से लेकर लोहगढ़ विजय तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। महाराजा छत्रसाल की आज्ञा से ही लाल कवि उनका यह जीवन वृत्त लिखने में प्रवृत्त हुए थे। परन्तु लोहगढ़ की घटना का वर्णन करने के पश्चात् कवि ने छत्रसाल के शेष जीवन का विवरण नहीं लिखा है। रासो

काव्य में कवि प्रमुख रूप से नायक के जीवन की युद्ध सम्बन्धी घटनाओं का वर्णन करता है अन्य घटनायें गौण रूप में रहती हैं तथा वीर रस प्रधान होता है, अन्य रस गौण होते हैं। इन बातों के आधार पर छत्र प्रकाश' एक चरित काव्य ही ठहरता है। यह ग्रंथ रासा काव्यों की श्रेणी में नहीं आता। अतः इसका यहाँ पर सामान्य परिचय ही प्रस्तुत किया जाएगा।

कवि और काव्य परिचय

'छत्र प्रकाश' में गोरे लाल ने अपने जीवन वृत्त के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है। एक दोहे से केवल यह ज्ञात होता है कि गोरे लाल ने महाराजा छत्रसाल की आज्ञा से 'छत्र प्रकाश' का प्रणयन किया था। यह दोहा सिद्ध करता है कि कवि महाराजा छत्रसाल का समकालीन था। दोहा निम्न प्रकार है–

' धनि चंपति के औतरौ, पंचम श्री छत्रसाल।
जिनकी आज्ञा सीस धरि, करी कहानी लाल॥ [32]

कवि लाल की जन्म तिथि का निर्धारण भी उनके चरित नायक महाराजा छत्रसाल बुन्देला की जन्म तिथि के आधार पर ही करना समीचीन होगा। छत्र प्रकाश में एक स्थान पर महाराजा छत्र साल की आयु के सम्बन्ध में कवि ने निम्न प्रकार उल्लेख किया है–

संवत सत्रह से लिख आठ आगरे बीस।
लगत बरष बाइसई, उमडि चल्यौ अवनीस॥ [33]

उपर्युक्त दोहे से स्पष्ट होता है कि संवत १७२८ विक्रमी में महाराज छत्रसाल बाईसवीं वर्ष में जा रहे थे। इस प्रकार 'छत्र साल का जन्म संवत १७०६ वि तदनुसार सन् १६४६ ई में हुआ होगा। पण्डित गोरेलाल तिवारी ने बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास में लाल कवि की जन्म तिथि सं १७१४ के लगभग लिखी है अर्थात् सन् १६५७ में इनका जन्म हुआ। गियर्सन महोदय के वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान में कवि संख्या २०२ पृ ७७ पर किये गये उल्लेख में छत्रसाल बुन्देला को भ्रमवश छत्रसाल हाडा समझा गया है क्योंकि बूंदी वाले छत्रसाल हाडा सन् १६५८ ई में दारा तथा औरंगजेब में हुए युद्ध में मारे गये थे और उनका दरबारी कवि लाल उस समय वहाँ उपस्थित भी था, जिसने नायिका भेद पर विष्णु विलास ग्रंथ लिखा। इन्हीं लाल कवि (छत्रसाल हाडा के दरबारी कवि) का परिचय शिवसिंह सरोज' में दिया गया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य का इतिहास नामक ग्रंथ में लाल कवि के जन्म की तिथि का कोई उल्लेख नहीं किया है।

छत्र प्रकाश' के प्रणेता लाल कवि महाराजा छत्रसाल बुन्देला के दरबारी कवि थे। मिश्र बन्धु विनोद के अनुसार इनके पूर्वज आन्ध्र प्रदेश के राज महेन्द्री

जिन म नृसिंह क्षेत्र धमपुरी के निवासी थे। इनके एक पूवज काशीनाथ भट्ट की पुत्री का विवाह वल्लभाचाय के साथ हुआ था। काशीनाथ के छ पुत्रो गिट्टा, लवुक, जागिजा, तिघरा, गिरधन और भरम को दिल्लीश्वर बहलोल लोदी ने छ गाँव दिए थ। गिट्टा के पुत्र नागनाथ हुए और नागनाथ की दशवी पीढी म गोरेलाल पदा हुए थे। प गगाधर शास्त्री तलग के पुत्र कृष्ण शास्त्री न वल्लभ दिग्विजय म जो परिचय दिया है उसस लाल के सम्ब ध म भी कुछ ज्ञान होता है। श्लोक इस प्रकार है—

> 'बहलूक मौद्गल्य गोत्रे प्रथितस्यशा नागनाथ-वये भूत।
> बुण्देलाधीश पूज्य कवि कुल तिनको गौरि लालाख्य भट्ट ॥
> शास्त्री गगाधरस्तत्कुल जनिरभवत तत्कुले शास्त्रि कृष्ण।
> तेनेद लिख्यते श्री गुरुवर चरित स्लगधराणा मतेन ॥

उपयु क्त श्लोक मे स्पष्ट होता है कि गोरेलाल मुदगल गोत्रीय नागनाथ के वश म उत्पन्न हुए थे।

बुण्देलखण्ड की रानी दुर्गावती न नागनाथ को सवत् १५३५ म दमोह के पास सकोलि नामक ग्राम दिया था। इन्ही नागनाथ के वश म सवत् १७१५ वि म लाल कवि उत्पन्न हुए थे।[34]

लाल कवि की मत्यु के सम्ब ध म भी विभिन्न विद्वानो ने अनुमान के आधार पर तिथियाँ निश्चित की है। मिश्र बन्धुओ व आचाय रामचन्द्र शुक्ल ने महाराज छत्रपाल के जीवन की अ तिम घटना सवत १७६४ वि मे मानकर यही तिथि लाल कवि का मृत्यु की तिथि होने की सम्भावना की है, कि तु छत्र प्रकाश मे वर्णित अन्तिम घटना सवत १७६७ विक्रमी की लोहगढ विजय की है जिससे स्पष्ट होता है कि लाल कवि की मत्यु स १७६४ वि मे न होकर सवत १७६७ तदनुसार सन् १७१० के पश्चात ही हुई होगी।[35] इस सम्ब ध म एक अ य प्रमाण यह भी है कि महाराजा छत्रसाल ने १ अक्टूबर १७१२ ई असुन सुदी १३ सवत् १७६८ को एक सनद दी थी जिसम लाल कवि को ग्रथ रचना करने के आदेश का उल्लेख है।[36] इस सनद स स्पष्ट प्रमाणित होता है कि सन् १७१२ ई म लाल कवि जीवित थ। डॉ० भगवान दास गुप्त न राजाराम भट्ट के मतानुसार लाल की मत्यु सन् १७१४ ई म किसी युद्ध मे हुई बतलायी है। इस प्रकार लाल कवि द्वारा 'छत्र प्रकाश का प्रणयन १७१२ ई मे १७१४ ई क मध्य किसी समय किया गया होगा।[37]

लाल कवि ने निम्नलिखित ग्रथो की रचना की— (१) छत्र प्रशस्ति (२) छत्र छाया (३) छत्र कीर्ति (४) छत्र छन्द (५) छत्र साल शतक (६) छत्र

हजारा (७) छत्र दण्ड (८) छत्र प्रकाश (६) राज विनोद (१०) विष्णु विलास (११) बरवै।

उपर्युक्त सभी रचनाओं में से 'छत्र प्रकाश' ही लाल की सर्वश्रेष्ठ कृति है।

ग्रंथ परिचय

छत्र प्रकाश महाराजा छत्रसाल बुंदेला के जीवन की घटनाओं पर लिखा गया एक ऐतिहासिक चरित्र काव्य है। कवि ने अपने चरित्र नायक के जीवन में घटित सम्पूर्ण युद्ध सम्बन्धी घटनाओं को क्रमबद्ध रूप में लिखा है। 'छत्र प्रकाश' के प्रथम पद छत्र से छत्रसाल तथा प्रकाश से अर्थ है छत्रसाल के शौर्यपूर्ण जीवन का बिम्ब प्रकट करना।

लाल कवि ने 'छत्र प्रकाश' की रचना महाराजा छत्रसाल की आज्ञा से ही की है। जैसा कि कवि परिचय में दिया जा चुका है। 'छत्र प्रकाश' की कथावस्तु को छब्बीस अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय में गणेश और सरस्वती की वन्दना करने के पश्चात् चरित्र नायक का नाम संकेत एक दोहे में किया गया है। दोहा निम्न प्रकार है—

'दान दया घमसान में जाके हिय उछाह।
सोई बीर बखानिये ज्यों छत्ता छितिनाह॥[38]

इसी अध्याय में आगे सूर्य पुत्र मनु से लेकर वीरभद्र पंचम तक का विस्तार सहित वर्णन किया गया है। कवि ने दन्त कथाओं का प्रयोग करके कथा वस्तु में प्रवाह व सरसता का संचार किया है। पंचम बुंदेला के भाइयों द्वारा उसका राज्य छीनना, पंचम का विन्ध्यवासिनी को प्रसन्न करना तथा शिरच्छेद के लिए प्रस्तुत होना आदि बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। पंचम बुंदेला से ही बुंदेलों की उत्पत्ति हुई। द्वितीय अध्याय में पंचम बुंदेला के पश्चात् के वंशजों का क्रमबद्ध उल्लेख किया गया है। प्रताप रुद्र के बारह पुत्रों में से भारती चन्द को ओरछा का शासन दिया गया तथा उदयाजीत महेवा की गद्दी के अधिपति हुए थे। महेवा वाली शाखा से ही चम्पतिराय से छत्रसाल का जन्म हुआ। इसी अध्याय में चम्पतिराय द्वारा मुगल बादशाह शाहजहाँ से जुझार सिंह की राज्य रक्षा का वर्णन है। तृतीय अध्याय में मुगल सूबों पर चम्पतिराय के आतंकपूर्ण अभियान का वर्णन है। पहाड़सिंह बुन्देला के द्वारा चम्पतिराय को विष देन का प्रयत्न किया गया पर भीमसिंह बुंदेला नाम के एक व्यक्ति द्वारा स्वयं विषाक्त भोजन करके तथा अपना भोजन चम्पतिराय को देकर उनकी प्राण रक्षा की। पहाड़सिंह द्वारा चम्पतिराय को मरवाने के अन्य षडयन्त्र किये गये। चतुर्थ अध्याय में शाहजहाँ के पुत्रों दारा शुजा, औरंगजेब और मुराद में हुए 'तख्त' के लिये संघर्ष का वर्णन है। चम्पतिराय ने दारा के विरुद्ध औरंगजेब की सहायता की। औरंगजेब ने तख्त नशीन होने पर चम्पतिराय को बारह हजारी मनसब दिया

था।[39] अन्त में बादशाह की तरफ से चम्पतिराय के रुष्ट होने का उल्लेख है। पाँचवें अध्याय में चम्पतिराय के द्वारा शाही मनसब का त्याग करने तथा शुभकरन के नेतृत्व में चम्पतिराय पर शाही आक्रमण का वर्णन है। एक शाही सरदार के विश्वासघात में बाण द्वारा घायल चम्पतिराय ने अपने भाई सुजानराय से मुगलों के विरुद्ध सहायता माँगी तथा नकारात्मक उत्तर मिलने पर आजीवन अकेले ही संघर्षरत रहने की प्रतिज्ञा की। अंगदराय के कथन से छत्रसाल अपने मामा के यहाँ चले गये। उधर पहाड़सिंह की विधवा रानी हीरा दे ने फौज भेजकर वेदपुर के निकट सुजानराय को मरवा डाला तथा चम्पतिराय को भी समाप्त करने का आदेश दिया। छठवें अध्याय में सहरा के इन्द्रमणि धंधेरा को शाही बन्द से चम्पतिराय द्वारा मुक्त कराने के वर्णन के पश्चात् चम्पतिराय पर शाही हमलों का वर्णन है। रोग जर्जर शरीर वृद्ध चम्पतिराय सुरक्षा की दृष्टि से सहरा जा रहे थे। मार्ग में ही शत्रु दल द्वारा इन्द्रमणि मारा जाता है। नव नियुक्त सहरा का राजा मुगल बादशाह के विरुद्ध चम्पतिराय की सहायता के लिए तैयार नहीं हुआ। सहरा में टिके रहने के दिनों में शाही हमलों ने चम्पतिराय का पीछा नहीं छोड़ा। तब चम्पतिराय ने छत्रसाल को अपनी बहिन के यहाँ भेज दिया जहाँ उनके साथ शाही कोप के भय के कारण रूखा व्यवहार किया गया। जब चम्पतिराय अपनी रानी के साथ दो सौ सैनिकों के घेरे में मोरन गाँव जा रहे थे तभी शत्रुओं ने हमला कर दिया। तब पतिव्रत धर्म की रक्षा करते हुये रानी ने कटार निकाल कर स्वयं आत्मघात किया। चम्पतिराय ने दगा देखकर स्वयं भी आत्मघात कर लिया।

सातवें अध्याय का प्रारम्भ उस प्रसिद्ध दोहे से है जिसके द्वारा कवि लाल कवि को छत्र प्रकाश की रचना का आदेश दिया गया था।[40] यहाँ से ही छत्रसाल की जन्म कथा का प्रारम्भ होता है। इस अध्याय में सारवाहन की वीरता का वर्णन किया गया है। सारवाहन तथा मुगलों के बीच हुए युद्ध का कवि ने लोमहर्षक चित्रण किया है।[41] कुँवर सारवाहन का शिकार खेलते हुए वन में मुगलों द्वारा वध किया गया। सारवाहन की कथा छत्रसाल के पूर्व जन्म की कथा के रूप में वर्णित की गई है। आठवें अध्याय में छत्रसाल के माता पिता द्वारा संरक्षण की कथा है। छत्रसाल के शरीर में चक्रवर्ती के पूर्ण लक्षण विद्यमान थे। नवें अध्याय में छत्रसाल का अल्पावस्था में ही अस्त्र शस्त्र शिक्षा में दक्षता प्राप्त करने का वर्णन है। छत्रसाल की बाल्यावस्था से ही शिकार युद्ध तथा दान आदि कार्यों में रुचि थी। ११-१२ वर्षीय छत्रसाल को जब मामा के यहाँ माता पिता की दुःखद मृत्यु का समाचार मिला तो छत्रसाल ने इस असह्य दुःख को बड़े धैर्य के साथ सहन किया। चम्पतिराय देवकुँवरि के साथ छत्रसाल का विवाह अपने जीवन काल में

ही तय कर गये थे अतः तदनुसार छत्रसाल ने स्वयं चंपति के साथ प्रथम विवाह किया। दसवें अध्याय में छत्रसाल का शाही सेना में नौकर हो जाने का वर्णन है। छत्रसाल को मिर्जा राजा जयसिंह ने बहादुर खाँ कोकलताश के द्वारा नियुक्त सरदार दिलेर खाँ की सेना में भर्ती करा दिया था। इसी सेना के साथ छत्रसाल ने देवगढ़ (गोंडवाने) के युद्ध में अत्यन्त वीरतापूर्वक युद्ध करके शाही सेना को विजय दिलाई। पर एक भीषण घाव से घायल छत्रसाल को उनके सनिक युद्धक्षेत्र से बहुत दूर दूसरे दिन खोज पाये थे, घायल अवस्था में छत्रसाल के स्वामिभक्त घोड़े द्वारा छत्रसाल की प्राण रक्षा का लाल कवि ने सुन्दर वर्णन किया है। इस युद्ध में शाही सेना की विजय तो छत्रसाल के कारण मिली पर बादशाह द्वारा मनसब वृद्धि नवाब को गई। छत्रसाल के लिए प्रशंसा व सहानुभूति के दो शब्द भी नहीं कहे गये। ग्यारहवें अध्याय में छत्रसाल के द्वारा शाही मनसब का त्याग तथा शिवाजी के साथ मिलन आदि की ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन है। शिवाजी ने छत्रसाल की कमर में तलवार बाँध कर क्षत्रियोचित सत्कार करके बुन्देलखण्ड से मुगल शासन का अन्त करके राज्य स्थापना का आदेश दिया। पुरानी बातों को भुलाकर छत्रसाल दतिया नरेश शुभकरण बुन्देला से भी अपने लक्ष्य हेतु मिले पर नकारात्मक उत्तर मिलने पर वे ओरछा के राजा सुजानसिंह के पास गये। सुजानसिंह ने बादशाह और फिदाई खाँ से सुरक्षा हेतु छत्रसाल का सहयोग उचित समझा। शिवाजी की तरह ही सुजानसिंह ने भी छत्रसाल का अभिषेक किया और उनकी सफलता की मंगल कामना की।

बारहवें अध्याय में चचेरे भाई बलदीवान के साथ औरंगाबाद में हुई छत्रसाल की भेंट का वर्णन है, जिसके अनुसार बलदीवान ने छत्रसाल को सहयोग देने का वचन दिया और उन्होंने सं० १७२८ वि० में बाईस वर्ष की आयु में ही थोड़े से साथियों के साथ मुगल विरोधी अभियान प्रारम्भ कर दिया। (तेरहवाँ अध्याय) छत्रसाल ने रतनसाहि से अपने अभियान में सहयोग के लिये कहा पर वह न माना। छत्रसाल ने बाकी खाँ बुन्देला से कूटनीतिक मित्रता की। केसरी सिंह धंधेरा से मित्रता करके तथा भेलसा सरकार के फौजदार मुहम्मद हाशिम से छत्रसाल के युद्ध का वर्णन इस अध्याय में किया गया है। महाराजा छत्रसाल और कमोराय दांगी के द्वन्द्व युद्ध का वर्णन है जिसमें छत्रसाल के द्वारा दांगी राजा का सिर काट डाला गया। (चौदहवाँ अध्याय) बड़ी पठारी विजय करने के पश्चात् छत्रसाल ने सैद बहादुर और सैद मुनव्वर को हराकर ग्वालियर को लूटा। डा० महेन्द्र पाल सिंह ने सैद बहादुर और सैद मुनव्वर को एक ही व्यक्ति माना है।[44] पर घटना चक्र से यह दोनों अलग अलग व्यक्ति प्रतीत होते हैं। मुहम्मद हाशिम और चौधरी

आनन्दराव से पुनः छत्रसाल युद्ध करके चौथ वसूल करते हैं। आगे के छन्दों में छत्रसाल के सहयोगियों की लम्बी नामावली दी गई है।

छत्रसाल ने गढ़ाकोटा के युद्ध में रुहिल्ला खाँ के नेतृत्व में लड़ने वाली मुगल सेना को पराजित किया। आगे के वर्णन में रनदूलह का पराजित किए जाने का उल्लेख है।

छत्रसाल ने नरवर के आसपास सौ गाड़ी सामान को अपनी सेना द्वारा लुटवा लिया जो बादशाह की भेंट हेतु भेजा जा रहा था। अस्तु रण दूलह को अपदस्थ होना पड़ा तथा रूमी उसके स्थान पर नियुक्त किया गया। रूमी को छत्रसाल के सम्मुख युद्ध से भागना पड़ा। तभी दुर्गादास राठौर ने बादशाह और शाहजादा अकबर में वैमनस्य उत्पन्न करा दिया इसलिए रूमी बादशाह की सहायतार्थ चला गया। तहव्वर खाँ ने नियुक्त होकर छत्रसाल के ऊपर धावा बोला उस समय छत्रसाल दूलह वेष में थे। जब भांवर पड़ रही थी, तभी तहव्वर खाँ की फौज आ चढ़ी, पर छत्रसाल ने दुहरी विजय पाई। एक तो दुलहिन और दूसरी शत्रु पर विजय। पुनः एक बार तहव्वर खाँ के द्वारा छत्रसाल को एक पहाड़ी पर घेरा गया। पर छत्रसाल ने अदम्य वीरता तथा अपने चुने हुए सैनिकों के विश्वास में फिर उसे परास्त किया।

तहव्वर के पश्चात छत्रसाल का प्रतिरोध सयद लतीफ ने बेतवा किनारे सद नगर में किया पर सयद हार गया। इसके पश्चात छत्रसाल के धावे बुन्देलखण्ड के अतिरिक्त सुदूर मालवा तक होने लगे। छत्रसाल ने अनेक मुगल ठिकानों को लूट लिया तथा चौथ बाँधी। हाडा दुर्जन साल से छत्रसाल ने मित्रता बढ़ाई। इसी बीच सुजान सिंह की मृत्यु हो गई और ओरछा की गद्दी के अधिपति इन्द्रमणि हुए जो छत्रसाल से द्वेष भाव रखते थे। छत्रसाल के दमन हेतु बुन्देलखण्ड में शेख अनवर की नियुक्ति हुई पर वह भी पराजित हुआ और छत्रसाल ने उससे चौथ वसूल की।

शेख अनवर की पराजय के पश्चात सुतरदीन (सदरुद्दीन) को छत्रसाल के दमन हेतु धामौनी पर नियुक्त किया गया। सदरुद्दीन ने पाँच सवार भेजकर छत्रसाल से कहलाया कि हमारे क्षेत्र में उत्पात न मचावें और चाहे जहाँ लूटपाट करें। छत्रसाल ने उत्तर दिया कि धामौनी से हम चौथ मिलती रही है। अतः चौथ मिलती रहनी चाहिये। इस पर सदरुद्दीन ने छत्रसाल पर चढ़ाई कर दी। छत्रसाल की सेना भोजन का प्रबन्ध कर रही थी तभी आँधी सी दिखाई दी। छत्रसाल समझ गए और चुने हुए सवारों को लेकर मिर्जा की सेना के अग्रभाग से जा भिड़े जब तक उनकी सारी सेना भी तैयार होकर आ गई। मिर्जा को हारकर चौथ चुकानी पड़ा।

मदरुद्दीन को पराजित करके छत्रसाल चित्रकूट की तरफ आए और हमीर खान को परास्त किया। चाटरा में मदनतीफ को दो मास तक किले में घेर रखा। हम्मीर धधेरा की मध्यस्थता से लतीफ की प्राण रक्षा हुई। मुसरा के आसपास के बीस गाँवों के मवासियों ने सम्मिलित रूप में छत्रसाल का प्रतिरोध किया पर मवासी बुरी तरह हार गए। तभी शाही आज्ञा से अब्दुल समद बुन्देलखण्ड में नियुक्त किया गया।

इस अध्याय में अब्दुल समद और छत्रसाल के मध्य हुए युद्ध का अत्यन्त ओजपूर्ण और रोचक वर्णन है। छत्रसाल की सेना के वीरों की लम्बी नामावली इस अध्याय में भी दी गई है। छत्रसाल ने बड़ी वीरता से समद की सेना को तहस नहस कर दिया। सारी रात वर्षा होने पर वह मृत सेनानायकों को दफनाता रहा और प्रात कूच कर गया।

इस अध्याय में धामौनी के नामक बहलोल खाँ मयाना के साथ हुए छत्रसाल के समर का वर्णन है। पहले बहलोल खाँ की सेना को छत्रसाल के भतीजे जगतराज ने अपनी तलवार की धार पर सात दिन तक रोक रखा। किन्तु बहलोल खाँ छत्रसाल के साथ युद्ध करके यश प्राप्ति की कामना से उमड़कर राजगढ़ पहुँचा, जहाँ छत्रसाल विद्यमान थे। युद्ध में बहलोल का सेनापति मारा गया और सेना में भगदड़ मच गई। तीन दिन तक छत्रसाल के साथ युद्ध करके चौथे दिन बहलोल लौट गया।

छत्रसाल ने पूर्वी बुन्देलखण्ड में प्रवेश करके कई ठिकाने जीत लिये।[13] कुटरा, जसपुर सुहावल घटरा, महोबा मौन्हा को जीतते हुए लौटकर सिहुड़ा के मुख्य अधिकारी मुराद खाँ पर धावा बोल दिया। मुराद खाँ शारीरिक शक्ति से अत्यन्त सम्पन्न वीर पुरुष था तथा दिलेर खाँ का भतीजा था। दिलेर खाँ की नियुक्ति उस समय दक्षिण भारत में हुई थी। छत्रसाल ने युद्ध में मुराद खाँ का सिर काट लिया। बादशाह ने दिलेर खाँ से संवेदना प्रकट करने के स्थान पर व्यंग्य कसा। बाद में दिलेरखाँ ने छत्रसाल के साथ सौमनस्य स्थापित किया। इसके पश्चात मटौंध के मवासियों ने छत्रसाल का प्रतिरोध किया पर वह बुरी तरह हारे।

इस अध्याय में शाहकुली के बुन्देलखण्ड प्रवेश तथा शेर अफगन और छत्रसाल के बीच हुए संघर्ष का वर्णन है। शेर अफगन के साथ चार सौ सुन्दर घोड़े थे। उसकी थोड़ी सेना को देखकर बुन्देले उसकी शक्ति का अन्दाजा न लगा सके और उसके व्यूह में घुसते चले गये। शेर अफगन की मार से बुन्देले विचलित हो गये और लड़ते हुए भागने लगे। भागते हुए छत्रसाल और शेर अफगन में कई मुठभेड़ें हुईं। इस हार से बुन्देलों के गिरते हुए मनोबल को ऊँचा उठाने के लिए

छत्रसाल न पौराणिक दृष्टांत दिए। इस युद्ध म अफगान का शेरखाँ नामक सरदार मारा गया। जब छत्रसाल अपन मनिकों को उद्बोधन दे रहे थे तभी महा प्रभु प्राणनाथ का आगमन हुआ। शेर अफगान ने पुन हमला किया, पर सावधान बुन्देलो न अपनी पिछली हार का बदला बडी वीरतापूर्वक चुकाया। सयद लतीफ ने मध्यस्थता करके शेर अफगान क प्राणो की रक्षा की। शेर अफगान के वापिस जाने पर शाहकुली ने नियुक्त होकर धावा किया, पर वह भी परास्त होकर लौटा। तत्पश्चात स्वामी प्राणनाथ द्वारा राधा कृष्ण क आध्यात्मिक स्वरूप का वणन किया गया है।

चौबीसवें अध्याय म श्रीकृष्ण के जन्म की कथा का वणन किया गया है।

पच्चीसवें अध्याय म छत्रसाल क राज्यतिलक के अवसर पर महाप्रभु प्राणनाथ द्वारा महाराजा छत्रसाल और उनके कुल को दिए गए आशीर्वाद का वणन है। यह अध्याय अति सूक्ष्म है।

छब्बीसवें अध्याय म दिल्ली के सिंहासन पर बहादुरशाह के आसीन होने एव छत्रसाल द्वारा लोहगढ विजय की घटना का वणन है। बादशाह बहादुरशाह ने स्वय छत्रसाल को पत्र लिखकर भेंट के लिए बुलाया था तथा लोहागढ विजय करने की वाञ्छा प्रकट की थी। छत्रसाल ने बादशाह स भेट करने के उपरान्त लोहागढ पर आक्रमण करके विजय प्राप्त की। बादशाह ने छत्रसाल को मनसब ग्रहण करने को कहा पर उन्होंने बडे सुन्दर ढग से स्वाभिमानपूवक मनसब ग्रहण करने से इनकार कर दिया। इसी घटना क पश्चात् छत्र प्रकास की समाप्ति हो गई है। ऐसा लगता है कि ग्रथ रचना किसी कारण एकाएक ही रुक गई क्योंकि कथावस्तु का आगे का अनवरत प्रवाह देखकर प्रतीत होता है कि कवि कुछ और लिखना चाहता था।

करहिया कौ रायसौ

कुछ रचनाओ क साथ तो बडा सौभाग्य रहता है कि प्रथमत तो उनके रचयिता ही अपन तथा अपनी रचनाओ के सम्बध म बहुत कुछ लिख जाते हैं। इसके अतिरिक्त रचनाकार के वशज भी रचना को प्रकाश म लाने म सहयोग करते हैं अथवा कृति किसी सुयोग्य साहित्य सेवी के हाथ लग जाने पर भी समुचित प्रकाश म आ जाती है। परन्तु कुछ रचनायें दुर्भाग्य का शिकार रहती हैं। जिनका रचनाकार अपने व कृति के सम्बध म कुछ लिखकर नहीं जाता है, तथा जिसके वशज उस कृति व कृतिकार के महत्व के प्रति उदासीनता का व्यौहार करते हैं। परिणामस्वरूप रचनाकार का कृतित्व और व्यक्तित्व प्रकाश म आने से वचित ही रह जाता है। ऐसी ही एक कृति करहिया कौ रायसौ है। इसके रचनाकार गुलाब

स्पष्ट होता है कि यह ग्रंथ केवल 'हिम्मत बहादुर' की विरदावली अर्थात प्रशंसा काव्य के रूप में लिखा गया था। उदाहरणार्थ–

> 'पद्मरिति नित्त सुवित्त दे, जगजित्त कित्त अनूप की।
> वर वरनिय विरदावली हिम्मत बहादुर भूप की॥'[33]

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट होता है कि पद्माकर का उद्देश्य मात्र एक विरदावली (प्रशंसा) लिखना था। रासो काव्य के लिए अपेक्षित रस सामग्री का प्रायः विरदावली में अभाव पाया जाता है, केवल हथियारों की झनझनाहट एवं हाथी घोड़ों व सैनिकों तथा युद्ध वर्णन की ऊहात्मक शब्दावली का प्रयोग करने के कारण ही इसे वीर काव्य नहीं माना जा सकता। वीर काव्य का नायक एक वीर एवं पराक्रमी व्यक्ति होना आवश्यक होता है। युद्ध क्षेत्र में नायक द्वारा वीरता प्रदर्शित करते युद्ध करने का स्वाभाविक वर्णन रासो काव्य का प्रधान गुण होता है तथा वीर रस की ही इसमें प्रधानता रहती है। विरदावली के सम्बन्ध में डॉ. उदय नारायण तिवारी लिखते हैं–"प्रबन्ध में रस संचार के लिए उल्लिखित गुणों के अतिरिक्त रसानुकूल आलम्बन सर्वथा आवश्यक है। यदि किसी कापुरुष को वीर रस का आलम्बन बनाया जाय तथा उसके द्वारा रणक्षेत्र का संचालन कराकर तलवारों की झनझनाहट तोपों की गड़गड़ाहट तथा खून की नदियाँ बहा दी जायें, तो भी वहाँ वीर रस की उत्पत्ति नहीं हो सकती।"[34] विरदावली में प्रयुक्त अलंकार भी वीरोत्कर्ष में सहायक नहीं है।[35]

अतः कहा जा सकता है कि हिम्मत बहादुर विरदावली हिम्मत बहादुर की प्रशंसा में लिखा गया एक प्रशंसा काव्य है, जो रासो की श्रेणी का नहीं है। अतः इस ग्रंथ का यहाँ सामान्य परिचय ही प्रस्तुत किया जायेगा।

कवि और काव्य परिचय

पद्माकर उत्तर मध्यकालीन श्रेष्ठ कवियों में से थे। इनका जन्म संवत् १८१० वि. में सागर में हुआ था।[36] पद्माकर तैलंग ब्राह्मण थे। इनके पूर्व पुरुष मथुरा और गोकुल में निवास करते थे, इसलिए उनकी दो शाखायें–मथुरास्थ और गोकुलस्थ के नाम से प्रसिद्ध हुईं। पद्माकर, मथुरास्थ शाखा में उत्पन्न हुए थे, जैसा कि इनके ग्रंथों–जगद्विनोद, रामरसायन, आलीजाह प्रकाश आदि की पुष्पिकाओं में दिया गया है।[37] आपके पिता पंडित मोहनलाल भट्ट ने कविता के साथ साथ अनुष्ठानों और मंत्र सिद्धि में विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। कविवर पद्माकर को कविता अपने पिता से विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी।

पद्माकर के पिता सागर में रहते थे पर इनके पूर्व पुरुषों ने उत्तर में आने पर पहले बाँदा में निवास किया इसलिए बाँदा वाले कहलाये। बचपन से ही

पद्माकर की काव्य प्रतिभा जागत हो गई थी। सोलह वप की आयु मे ही इन्होने एक अत्यन्त सुन्दर छन्द की रचना की थी, जिस पर प्रसन्न होकर, सागर नरेश रघुनाथराव आपा साहब न एक लक्ष मुद्रायें पुरस्कार म प्रदान की थी। छन्द निम्न प्रकार है–

'सपति सुमेर की कुबेर की जु पावै ताहि,
तुरत लुटावत विलम्ब उर धारै ना।
कहै पदुमाकर सुहेम हय हाथिन के,
हलक हजारन के वितर विचार ना।
गज गज, बकस महीप रघुनाथ राव,
याहि गज धोखे काहू को देइ डारै ना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,
गिरि ते गरै ते निज गोद तें उतारै ना॥"[58]

निपट बाल्यावस्था म रचा गया उपयु क्त छन्द पद्माकर की काव्य प्रतिभा का द्योतक है। आपा साहब से अनबन हो जाने पर ये अपने मूल निवास बाँदा लौट आये। इन्होने जतपुर क राजा तथा सुगरा निवासी नौने अजुनसिंह को मन्त्र दीक्षा दी। अजुनसिंह की प्रशसा मे पद्माकर ने कुछ छन्द लिखे। इन्होंने सभवत अजुन रायसा भी लिखा था पर वह अब लुप्त प्राय है।[59]

इसके पश्चात् पद्माकर न दतिया नरेश पारीछत के दरबार मे प्रशस्ति पाठ करके जागीर प्राप्त की। फिर वहा से ये रजधान के गुसाइ अनूपगिरि उप नाम हिम्मत बहादुर के यहा गए और कहा जाता है कि स १८४८ से १८५५ तक ये वहीं रहे।[60] डॉ उदय नारायण तिवारी न अपन ग्रन्थ वीर काव्य मे पद्माकर का हिम्मत बहादुर के यहा रहना १८५६ तक लिखा है[61] जबकि ये १८५६ म पुन सागर के रघुनाथ राव आपा साहब द्वारा बुला लिए गए थे। हिम्मत बहादुर विरदावली की रचना पद्माकर ने रजधान म रहते हुए ही की थी।

जयपुर के महाराजा प्रतापसिंह के यहाँ इनका अत्यधिक सम्मान किया गया उनकी प्रशसा मे पद्माकर ने 'प्रतापसिंह विरुदावली' की रचना की। वहाँ स बाँदा लौटकर इन्होन पद्माभरण की रचना की। पुन एक बार जयपुर दरबार म गए और तत्कालीन राजा जगतसिंह की आज्ञा से 'जगद्विनोद' नाम के नायिका भेद ग्रन्थ की रचना की।

पद्माकर उदयपुर के महाराजा भीमसिंह के दरबार मे भी गए थे। जहाँ उनकी बहुत आवभगत की गई। पद्माकर तत्कालीन ग्वालियर नरेश दौलतराव सिंधिया के यहाँ भी गए थे और उनकी प्रशसा म 'आलीजाह प्रकाश' नाम का ग्रन्थ लिखा।

जयपुर निवास के समय में ही इनके शरीर में कुष्ट रोग की उत्पत्ति हो गई थी। वैद्यों की चिकित्सा के पश्चात् इन्होंने ईश्वर की शरण ली और 'राम रसायण' की रचना की। फिर प्रबोध पचासा लिखा। ग्वालियर नरेश के व्यवहार से खिन्न होकर मन अपना रोग को नष्ट करने हेतु पतित पावनी गंगा की शरण में कानपुर जा पहुँचे। वहाँ पद्माकर ने गंगालहरी की रचना की। यहाँ पद्माकर का कुष्ट छूट गया। संवत् १८९० में इनका वहीं स्वर्गवास हुआ।[63]

पद्माकर ने ब्रज भाषा में काव्य रचना की। लाक्षणिकता, आलंकारिता, रस, छन्द आदि की दृष्टि से इनका काव्य उच्च कोटि का है। इनकी रचनायें निम्नांकित हैं–(१) अनूपगिरि हिम्मत बहादुर विरुदावली। (२) ईश्वर पच्चासी। (३) गंगालहरी (४) जगद्विनोद (५) जमुनालहरी (६) पद्माभरण (७) प्रबोध पचासा (८) राजनीति वचनिका (९) रामरसायन (१०) लिनहारी लीला (११) विरदावली।

ग्रन्थ परिचय

पद्माकर की यह एकमात्र वीर रस रचना है। जैसा कि कवि परिचय में लिखा जा चुका है कि पद्माकर सं १८४८ से सं १८५६ तक हिम्मत बहादुर के यहाँ रहे थे और तभी उपरोक्त ग्रन्थ का प्रणयन किया था। रजधान के गोसाइ अनूपगिरि उपनाम हिम्मत बहादुर और सुगरा निवासी नौने अर्जुनसिंह के बीच युद्ध सं १८४९ वि में हुआ था। उस समय पद्माकर हिम्मत बहादुर के दरबारी कवि थे। विरदावली में युद्ध की तिथि एक छन्द में निम्न प्रकार दी हुई है–

> संवत अठारह से सुनौ, उनचास अधिक हिए गुनौ।
> वसाख वदि तिथि द्वादसी बुधवार यह यान्सी ॥[64]

अर्थात् वैसाख वदी द्वादसी बुधवार संवत् १८४९ को युद्ध होना निश्चित है। हिम्मत बहादुर की प्रशंसा में कवि ने विरुदावली की रचना की। ग्रन्थ में चरित नायक की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा की गई है।

'हिम्मत बहादुर विरदावली' को घटना क्रम के आधार पर पाँच भागों में विभाजित किया गया है पर कवि ने सर्ग विभाजन किया नहीं है। यदि सर्ग बद्धता होती तो निश्चित रूप से विरदावली की सौन्दर्य वृद्धि होती। कवि की कृष्ण भक्ति का प्रभाव रचना में स्पष्ट देखा जा सकता है। प्रथम छन्द में श्रीकृष्ण की वन्दना एवं अनूपगिरि की विजय हेतु मंगल कामना की गई है। द्वितीय छन्द में हिम्मत बहादुर की विरदावली वर्णन करने का संकेत है। प्रत्येक घटना की समाप्ति पर कवि ने एक हरि गीतिका छन्द दिया है जिसकी अन्तिम दो पंक्तियाँ हर बार इस प्रकार रखी गई हैं–

'बसुरिति नित्त सुवित्त द जग जिति विति अनूप की।
वर वरनिय विरुदावली हिम्मत बहादुर भूप की।'

प्रथम भाग म मंगल इष्ट वन्दना एव चरित नायक की विजय हेतु मगल कामना के पश्चात् द्वितीय भाग में चरित नायक के वैभव का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया गया है। कवि ने अनूपगिरि की तुलना शिव, इन्द्र, शेषनाग, गणेश, हरिश्चन्द्र सूर्य चन्द्रमा आदि से की है।[64] एक साधारण नायक का चयन करके पद्माकर ने अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशसा के ऐसे पुल बाँधे हैं कि सम्पूर्ण वर्णन अस्वाभाविक एव उपहासास्पद सा लगने लगा है।

हिम्मत बहादुर ने दतिया राज्य के ऊपर धावा करके कुछ भाग पर अधिकार कर लिया था।[65] फिर छत्रसाल के देश पन्ना पर भी विजय पाई।[66] पश्चात् अजु नसिंह के निकटस्थ केन नदी पर हिम्मत बहादुर ने ससैन्य डेरा किया। ज्योतिषियों के द्वारा युद्ध के लिए शुभ मुहूर्त शोधन करवाकर हिम्मत बहादुर ने चढ़ाई की तयारी कर दी। आगे के ग्यारह छन्दों म अजु नसिंह तथा उसके सहायक क्षत्रियों के छत्तीस कुलों का वर्णन किया गया है।[67] द्वितीय भाग लगभग ४४ छदो म समाप्त हुआ है।

तीसरा भाग छन्द ४७वें से छन्द ६२ तक कुल १६ छन्दों मे समाप्त हो गया है। इसमे अनूपगिरि की सेना[68] तथा उसके हाथियों[69] और घोडों[70] का बढा चढा कर वर्णन किया गया है। निम्नलिखित पक्तियों म हाथियों का वर्णन देखिए—

उलहत मत्त समुन्द मद गारत गिरिवर गरब मरद करि डारत।
सिंदूरनि सिर सुभग उमडिय उदयाचल रवि छवि छिति मण्डिय॥'[71]

हिम्मत बहादुर की सेना के घोडों का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन निम्नाकित छन्द म देखा योग्य है—

पन्छ रहित जीतत उडि पच्छिय अ तरिच्छ गति जिन अवलच्छिय।
जिनि अमोल लालगति चल्लहिं विदिन अमोल गाल ज्ल मल्लहिं॥'[72]

आगे के छन्दों म अनूपगिरि के आतक का वर्णन किया गया है।

चौथे भाग म छन्द ६३ से १८१ तक ११८ छन्द हैं। यह भाग सबसे बडा है। इस भाग का प्रारम्भ युद्ध की विकराल भूमिका मे हुआ है। अनूपगिरि के सैन्य सचालन का सकेत कर कवि ने पुलिस[73] के पश्चात् आगे प्रस्थान करने का वर्णन किया है। अनूपगिरि और अजु नसिंह पमार की सेनाओं के निकट पहुँचकर युद्ध का वर्णन किया गया है। कवि ने हिम्मत बहादुर के प्रतिद्वन्द्वी अजु नसिंह की वीरोचित भावनाओं का स्वाभाविक वर्णन किया है। क्षत्रियो के कर्तव्यों एव धर्मों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है।

अजु नसिंह से युद्ध करते हुए हिम्मत बहादुर के दो सरदार मानधाता एव

जुन्पिवार के मारे जाने का उल्लेख करते हुए कवि ने हिम्मत बहादुर के सात भतीजों[74] उत्तमगिरि गंगागिरि, दिलावर जंग, राजगिरि जगत बहादुर, मस्तागिरि तथा सुन्दरगिरि के वीरतापूर्ण युद्ध का वर्णन किया है। हिम्मत बहादुर की सेना के अनेक वीर सरदारों के युद्ध का वर्णन भी विस्तारपूर्वक किया गया है। हिंदूपति नाम के एक पमार सरदार के सम्बन्ध में पद्माकर ने स्पष्ट उल्लेख किया है कि इसका अर्जुनसिंह से पूर्व का बैर था, जिसका स्मरण कर वह अपने चाचा अर्जुनसिंह के सम्मुख युद्ध के लिए प्रस्तुत हुआ। हिंदूपति के पुत्र तथा अन्य सहयोगियों के साथ अर्जुनसिंह के तुमुल युद्ध का वर्णन किया गया है।[75] इस घटना से यह सिद्ध हो जाता है कि आपसी फूट से उत्पन्न बैर भाव का प्रतिशोध व्यक्तिगत रूप से युद्ध के मैदान में लेने में क्षत्रिय चूकते न थे।

अन्त में हिम्मत बहादुर के युद्ध का कवि ने अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है। एक छन्द में चरित नायक के खड्ग प्रहार का कमाल कवि ने निम्न प्रकार किया है—

सिर कटहिं गिर कटि धर कटहिं धर कटि सुहय कटि जात हैं।
इमि एक एकहिं बार में कटि भट भय बिन गात हैं॥'

(अर्थात् खड्ग के एक ही प्रहार में सिर कटकर धड़ कट जाता है और घोड़ा भी कट जाता है। इस प्रकार एक एक बार में ही योद्धा कटकर शरीर रहित हो गए)

अंतिम भाग में लगभग ३६ छन्द हैं। इसमें हिम्मत बहादुर और अर्जुनसिंह के तुमुल युद्ध का वर्णन त्रिभंगी छन्दों में किया गया है। इन छन्दों में युद्ध की विकरालता की दृष्टि से संयुक्ताक्षर शैली को अधिक अपनाया गया है।[76] हिम्मत बहादुर अपने कन्हैया नाम के गज पर सवार होकर अर्जुनसिंह के सम्मुख युद्ध में डट गया तथा युद्ध करते हुए ही हाथ पकड़कर उसने उसे हाथी पर से नीचे गिरा दिया और सिर काट लिया।[77] अंतिम छन्दों में हिम्मत बहादुर को आशीर्वाद देकर कवि ने विरदावली समाप्त कर दी है।

पद्माकर ने हिम्मत बहादुर के द्वारा अर्जुनसिंह का सिर काटे जाने का उल्लेख किया है, पर डा. तोमर ने लाला भगवानदीन का मत अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है कि हिम्मत बहादुर की ओर से युद्ध करने वाले अर्जुनसिंह के किसी सम्बन्धी द्वारा ही अर्जुनसिंह का सिरच्छेद किया गया।[78]

विरदावली के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि पद्माकर ने धन लाभ से हिम्मत बहादुर को अपना चरित नायक चुना। हिम्मत बहादुर में वे सभी गुण विद्यमान न थे जो एक अप्रतिम वीर में होने चाहिए। किन्तु पद्माकर ने अर्जुनसिंह की वीरता के प्रति भी अन्याय नहीं किया है। अर्जुनसिंह के लिए किए गए वर्णना

म स्वाभाविकता स्पष्ट झलकती है जबकि हिम्मत बहादुर के सम्बन्ध मे कृत्रिमता का आभास होता है।

प्रबन्ध काव्यो की कथावस्तु प्रवाहपूर्ण होना अति आवश्यक है। हिम्मत बहादुर विरदावली यद्यपि प्रबन्ध काव्य है परन्तु नामो व वस्तुओ की लम्बी लम्बी सूचियो के वर्णन से तथा सयुक्ताक्षर शैली के प्रयोग से प्रबन्धात्मकता मे व्याघात उपस्थित हुआ है।

शत्रुजीत रायसा

कवि एव काव्य परिचय

कवि किशुनेश भाट के विषय म अधिक कुछ ज्ञात नही हो सका है। जन-श्रुति के अनुसार ये जसवत भाट के पुत्र थे, और रतसिंह के बडे भ्राता थे। इन्होने अपने रासो ग्रन्थ की रचना सवत् १८५८ तदनुसार सन् १८०१ म की थी।[79] इस समय महाराज पारीछत दतिया के सिंहासन पर बैठ चुके थे। इस प्रकार कवि का कविता काल सन् १८०१ ई० के आस-पास का निश्चित किया जा सकता है। किशुनेश दतिया राज्य के दरबारी कवि थे। इनके आश्रयदाता महाराजा शत्रुजीत सिंह स्वय एक कवि थे जिनके एक ग्रन्थ 'रसराज की टीका' का भी एक स्थान पर उल्लेख पाया जाता है।[80] अत काव्य प्रेमी महाराजा शत्रुजीत सिंह के दरबारी कवि के रूप म किशुनेश ने महाराज पारीछत के शासन काल म काव्य रचना की। महाराज शत्रुजीत का कविता काल स० १८०० वि० माना गया है[81] एव इस वयोवृद्ध नरेश का देहावसान सेंवढा के युद्ध म स० १८५८ वि० म लगभग ८८ वर्ष की आयु म हुआ था। इससे अनुमान लगाया जा सकता है, किशुनेश महाराज शत्रुजीत के जीवन के उत्तरार्द्ध म ही उनके दरबारी कवि के रूप म दतिया दरबार म गए होंगे। इस आधार पर भी इनका कविता काल सन् १८०१ के आस-पास का ही कहा जा सकता है। इनके लिखित रासो ग्रन्थ का पढने से इनकी काव्य कला पटुता एव श्रेष्ठ भाषा ज्ञान का परिचय प्राप्त होता है। निश्चय ही किशुनेश कवि प्रतिभा सम्पन्न थे।

शत्रुजीत रायसा सवा चार सौ छन्दो म समाप्त हुआ है। यह काव्य ग्रन्थ दतिया नरेश महाराजा शत्रुजीत सिंह की प्रशसा म, उनके मरणोपरान्त उनके सुपुत्र महाराजा पारीछत के शासनकाल म लिखा गया। ग्रन्थ का रचना काल एक छ द मे निम्न प्रकार दिया हुआ है—

"दस आठ वर्ष कर सत सम्हार उन्तीस दून ऊपर विचार।
भादो सुदष्ट छवार, पूरन सुग्रन्थ हुव सुजस सार ॥[82]

अर्थात भादौं सुदी अष्टमी इतवार सवत् १८५८ वि० को यह ग्रन्थ सम्पूर्ण

हुआ। सवत १८५७ म दतिया नरेश ने महादजी सिंधिया की विधवा पत्नियों को व हरगढ (सेंवढा) म आश्रय दिया था[83] जो किसी कारणवश रुष्ट होकर वहाँ गई थी। ग्वालियर क महाराज दौलतराव सिंधिया यह नहीं चाहते थ कि राजधानी के इतने निकट कोई इन बाइयों का आश्रय प्रदान करें। लकवा दादा नामक एक वीर मराठा न सवढा के किल के सामन भारी तैयारी के साथ ग्वालियर क दौलतराव सिंधिया के विरुद्ध मोर्चा जमाया। सिंध नदी के किनारे घन जगल से सटा हुआ सेंवढा बहुत पुराना नगर है। ग्यारहवीं शताब्दी मे चडराय का पीछा करत हुए महमूद गजनवी द्वारा सरुआ दुग पर अधिकार जमाने का उल्लख है।[84] फारसी भाषा की लिपि और उच्चारण के अ तर स सेंवढा को सरुआ लिखा और पढा जा सकता है।[85] अनुमानत यह सरुआ भी पुराने समय म सेंवढा का दुग रहा होगा। यहाँ का दुग लडाई की मारतोड के लिए बहुत महत्वपूण है। वीर ऱ्हलप शरद दतिया राज्य का पवित्र ध्येय रहा है। अपने इस घोषित ध्येय के अनुसार महाराजा शत्रुजीत सिंह की सना ने ग्वालियर की सना के रघुनाथ राव, कप्टेन साइम्स तथा फ्रासीसी सेना नायक पीरू के विरुद्ध अदम्य वीरता दिखाई।

शत्रुजीत रासो म मराठो से लडाई का विशद वणन है। अम्बाजी इगला और लखवा दादा (लकवा दादा) के बीच सघष से रासो का प्रारम्भ होता है। शत्रुजीत के राजकुमार पारीछत न प्रारम्भ की लडाइयो म दतिया की सना का नतत्व किया। प्रारम्भ की असफलताओ स भय खाकर अम्बाजी न दौलतराव सिंधिया स विशेष सहायता मगाई। अम्बाजी के विरुद्ध पारीछत की विजय का उल्लेख पारीछत रायसे म भी पाया जाता है।[86] उन्होंन तुरत काफी सख्या म पल्टनें और तोपें भेज दी। भितरवार, भिण्ड, भाण्डेर आदि स्थानों की चर्चा रायसे म पाई जाती है। युद्ध की तैयारियों का सजीव वणन है—

उठी तुग चुगे लरो आन सुध्यौ जहाँ इगला जग जग्गो विरुध्या।
झगे पाउ जग्गा दवायौ अरिंद तब बाहुत भूमकूदौ नरिंद ॥
भई ताप अयार बुदेल वारी घना लौ जग ज छटा विज्जुवारी।
कछू आपनी तौप जग्गो मगाई इकट्ठी राव इगला पै धुकाई ॥[87]

महाराज शत्रुजीत यद्यपि वयोवृद्ध थ तथापि वीरोचित उत्साह म लगे हुय थ। शरणागत का पक्ष लत हुए युद्ध को अपने द्वार पर आया जान यह बुदेला वीर पीछे नहीं रह सकता था। प्रारम्भ मे राजकुमार पारीछत के नतृत्व म जग्गो, दुजनसाल आदि सामतो न अच्छी लडाई लडी। पश्चात स्वय महाराज शत्रुजीत न नेतृत्व सम्हाला। उधर पीरू आदि सिंधिया के सेना नायकों ने भी मोरचे सम्हाले—

यह मत्र मान इकत। बालौ राइ दौरा जग कौ।
सुन खबर लखवा गयौ दरवर,दौर मान उमग कौ ॥
तह झटक बालौराइ बीचहि लई कोच बचाइकै ।
तब मुरक मलौ बउना पर क्छुक मर्राहि क्चाइ कै ॥"[89]

तथा

"लखखो जी तव कूर्च कर, गयौ, नदी के ग्राम ।
उतरौ पास पहूच के अति मंवास अभिराम ॥
खबर क हरगढ सुनी सत्रजीत भुवपाल ।
गयो दौर दरवर नयै जग्गो दुरजनसाल ॥"[89]

वतमान उत्तर प्रदेश से घिरा हुआ नदी गाव परगना काफी समय तक दतिया राज्यातर्गत भूभाग था। युद्ध काफी विकराल रहा। एक ओर सिंधिया की विशाल सैन्य शक्ति थी, दूसरी ओर साधन तो सीमित थे, परंतु धार्मिक कत्तव्य पालन के साथ स्वाभिमान की रक्षा क लिए बुदेली वीरत्व पूरे जोश पर था। भुजगी छन्द मे युद्ध का एक चित्र थोडे मे बहुत कुछ बतलाता है—

"चले बान गोला, मचा घोर घाई ।
मनौ राम रावन्न कीनौ लराई ॥
क्लि तें घल बीस तोप उताली ।
मनो कोपियौ कालक्या कराली ॥"[90]

तथा— पर लौट गोलान म लाग गोला ।
तहा दृष्टि मे तक आवें अमोला ॥
लगें सामनी जग लालीम मेले ।
मनो बाकुरे वीर वट्टान खेले ॥[91]
लग जोर, वारी चले लौट सोऊ ।
घलाय मनौ ऐक त सग दाऊ ॥
जडाकौ करे लौट अस्थान आवें ।
मनौ टक्करे वीर मेडें खिलावे ॥[92]

'जडाकौ कर', जस विशुद्ध बुदली प्रयोग शत्रुजीत रायस म अच्छी सख्या म पाये जाते हैं। तपमील (तफसील) जसे फारसी शब्दो के तद्भव रूप भी विद्यमान हैं। होश्यार जस विदेशी शब्दों को हुशियार जस सरल हिंदी रूपों म प्रस्तुत किया गया है। रायस के प्रारम्भ मे जहाँ काशी और ओरछा के बुदेलो से वश परम्परा का उल्लेख करते हुए सस्थापक भगवान राय स लेकर शत्रुजीत तक दतिया के समस्त शासका के नाम गिनाये गये हैं।[93] उसी प्रकार तोटक, भुजग

प्रयात, गीतिका, हनूफाल, त्रिभंगी, मोतीदाम आदि विभिन्न छंदों में वर्णन की विशदता के साथ कवि के पांडित्य का प्रचुर प्रदर्शन पाया जाता है।

विरोधी शक्ति का परिचय निम्नलिखित छन्दों से भली प्रकार मिल जाता है।

छन्द हनूफाल

"गज चलो पीरू काप, जिय जग जौमहि रोप।
कर इगला को पक्ष, लिय जान मरन प्रतक्ष ॥'"
'दसतोप सीनी संग जुतवाइ बाजी वंग।
कर पलटनें गमचार, असवार लिय निरधार ॥'"
"सतगात तुरक सवार वह और पाच हजार।
रन धूर दर बर धाइ, उतरौ सुचामिल आइ ॥"

छोटी छोटी पंक्तियों में कवि ने अनूठा ओज भरा है। पौराणिकता का स्थान स्थान पर उल्लेख मिलता है–

छन्द त्रभंगी–

'बंठे इक सूत, रन बन बूत मन मजबूत, मन्न करी।
बुंदेल अभूत, रन मजबूत सूरसपूत बर परी ॥
हाक रन रोर, मरन अमोर, कौन बहोर छोन छली।
पावें छित छोरे, उमहि बहोरे, कहर हिलोर कौन बली ॥"

छन्दों की अनेकता के साथ ही इस रायसा में किरवान छन्द भी लगभग तीस की संख्या में पाये जाते हैं। कृपाण का शौर्य वर्णित करने वाले इन छन्दों में अतिशयोक्ति समेत अलंकारिता विशेष है जो इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि कवि का काव्य शास्त्र सम्बन्धी ज्ञान बढ़ा हुआ था। ओज के साथ ही काव्य सौन्दर्य का परिचय देने वाले कतिपय छन्द पठनीय हैं–

"जहाँ छाडिकें सिपाही पातसाही की समाही,
उतसाही सीप साहिबनें कीनी घमसान।
जहाँ उमग उमाही दौरदाही बनी द्रोहिन की,
ताही 'समैं पलक सराही समुहान ॥
जहाँ बोलतो कराही ज कराही बाल वरिन,
की राखियो पनाही भऐ गाही पियप्रान।
तहाँ राखी नरनाही सुमसाही अवगाही,
सत्रजीत चित चाही वरवाही किरवांन ॥"
"जहाँ तमक तुरंग जंग रंग को उमंग भरो,
देखत तमासो फिर भानु कुलभान।

जहाँ सूरन सौ सूर जुरें राजें मुख नूर गज,
तोपी, भरपूर सुनैं घोरे घमसान ॥
जहाँ जिरह जंजीरन सों जजर जलूस दार,
नजर परे ते परें बजर समान ।
तहाँ राखी नरनाही सुभसाही अवगाही,
शत्रजीत चितचाही वरवाही किरवान ॥'[99]

"जहाँ जन मे जुझार गहिमूठन मुछार
स्वाम धर्मे उरधार लई काढक क्रपान ।
जहाँ जीतव को सार यहै मन मे विचार रन,
नीको निरधार भार धारकै भुजान ॥
जहाँ ढार ढार मुण्डरुण्ड डार डार घोरिन,
त मारमार भापत है मही प मरदान ।
तहाँ राखी नरनाही सुभसाही अवगाही,
शत्रजीत चितचाही वरवाही किरवान ॥'[100]

"जहाँ लाल भए अंग स्याह तोपन
तिलग मनौ फूल पलास दल उन्मत उदयान ।
जहाँ टूट तरवार गिरें छूट कै कटार,
बीर वगरी बहार पत छारन कं समान ॥
जहाँ कत दतिया को वरवरिन को अत करो
वरह वसत मंजुघोषा समान ॥
तहाँ भारी भुज दण्डन सम्हारी अस्त्रधारी,
सत्रजीत छत्रधारी झुक झारी किरवान ॥'[101]

'जहाँ कइयक हजार तरवार कढी दाऊ
बीर फूलो जनु काम धरा दब्बन निदान ॥
जहाँ फूटजात सीस सोप कट जात गात,
करें पथिक लौ प्रान आसमान को पयान ॥
जहाँ श्रासा चार चंद्रकासी कीरत प्रकाशी,
लस पानिप विमल मुख कमल प्रमान ।
तहाँ भारी भुजदण्डन सम्हारी अस्त्रधारी,
सत्रजीत छत्रधारी झुकझारी किरवांन ॥"[102]

जहाँ साग मुख घाउ फिरै चाहुंड सौ चमूमे,
लत रुधिर अस्त्र हूमै घूम चाव जनु पान ।

जहाँ एवं वीर 'यगह वरगा वराते,
एवँ वाम पर भारतड मडल महान ॥
' जहाँ एकन कें भाग भए पीरर के पान,
सोप सीत कें सताए मुख कमल निदान।
' तहाँ भारी भुजन्ड न सम्हारी अत्रधारी,
शत्रजीत छत्रधारी मुक्तारी निरवान ॥'[103]
"जहाँ धाये मुखधाइ हाथ वइयव चलाइ
। मार पीरु रिपु राह काट पलटने महान।
जहाँ कुघ्घ कें उपाइ जुघ्घ वारिध मचाय
वाढ़ी कीरत सुघा सी वही दसहू दिगान ॥
जहाँ नवस नगीनी सुपदेनी पाउ देत ढायो
ब्रह्म कहै आपो पद पायो निरबान।
तहाँ सत्रजीत भूप इद्रजीत व सपूत करो,
' विक्रम अकूल जय-जपत जहान ॥"[104]

रायसे म महाराज शत्रुजीत द्वारा पीरू के मारे जान का उल्लेख है। परन्तु पीरू सिंधिया की सेना मे रिटायर होकर प्राय दो वर्ष पीछे अपने देश फ्रास को गया और सन् १८०३ म वही मरा।[105] सम्भवत पीरू अथवा कोई अन्य प्रतिष्ठित नायक ग्वालियर की सेना म भी घातक घाव म घायल हुआ तभी ग्वालियर की सेना सहसा लौट पडी। इधर महाराज शत्रुजीत को एक घातक घाव लगा और वे कुछ समय पीछे सुरपुर सिधारे। रायसे म महाराजा शत्रुजीत सिंह के शरीर त्याग का वर्णन तक छन्द म किया गया है[106] फिर इसम पारीछत के सिंहासनारूढ होने तक का विवरण है। परन्तु उसमे एतिहासिकता पूरी तरह बर्ती गई नही जान पडती। आश्रयदाता को प्रसन्न करने के लिए उसका पक्षपात स्पष्ट समझा जा सकता है, फिर भी कवि कम कौशल इस रायसे म विशेष रूप से उपलब्ध है।

अतश्चेतना के प्रेरक तत्व एव तत्कालीन परिस्थितियाँ

बहुत प्राचीन काल से किसी भी देश जाति अथवा समाज के साहित्य मे वीरोपासना की प्रधानता देखने को मिलती है। चाहे कोई जाति असभ्य हो, अर्द्ध सभ्य अथवा विकसित हो क्यो न हो, वीर पूजा उसकी एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है।[107] शक्ति सम्पन्न एवं पराक्रमी व्यक्ति के प्रति सहज झुकाव के कारण ही लोगो में व्यक्ति विशेष की प्रशसा करने की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई। अत इस प्रकार की कविता के लिए एक ओर, जहाँ वीर पूजा की भावना से प्रेरणा मिली है, वही देश की आन्तरिक स्थितियाँ भी इसके लिए कम उत्तरदायी नही है।[108]

विदेशी आततायियों के आक्रमणों के समय भी देश की रक्षा में प्रवृत्त शक्ति सहज ही जन-श्रद्धाभाजन राष्ट्रीय वीर का स्वरूप बन जाती है। यह परम्परा पृथ्वीराज रासो से प्रारम्भ होकर भक्ति रीति काल तक हम विद्यमान मिलती है। परन्तु समय के बदलते हुए परिवेश से कविता भी प्रभावित हुए बिना न रह सकी। पहले जहां वीर पूजा की निश्छल भावना, वीर काव्य की प्रेरणा का स्रोत थी वहीं बाद में धन, मान, इनाम, जागीर तथा पद प्राप्ति के लोभ ने काव्य प्रेरणा का स्थान प्राप्त किया। वास्तविक वीरता की प्रशंसा के आख्यानों का अनुकरण करते हुए सभी राजाओं, सामंतों और सरदारों में निज की प्रशंसा सुनने की आदत उत्पन्न हो गई। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रशंसाकाव्य राज दरबारों की शोभा प्रतिष्ठा बन गया। जो कवि अपने आश्रयदाता की जितनी बढ़ा चढ़ा कर प्रशंसा करता, वह उतना ही अधिक धन, मान व उच्च पद राज दरबार में प्राप्त कर लेता था। इस प्रकार की बढ़ती हुई प्रवृत्ति ने कविता को सामयिक बना दिया। रासो और वीर काव्य की कविता का स्वरूप सामंतवादी हो गया था।

दलपतिराव रायसा करहिया कौ रायसौ तथा शत्रुजीत रासो में वर्णित घटनावलियों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इन ग्रन्थों में वीर पूजा की भावना तो है ही पर उससे कहीं अधिक सामन्ती विलास, वैभव तथा व्यक्ति की उच्छृंखल शक्ति का स्वरूप भी देखने को मिलता है। ये काव्य स्पष्ट रूप से प्रशंसा काव्य हैं जो राज्याश्रित दरबारी मनोवृत्ति वाले कवियों द्वारा लिखे गए हैं।

युद्ध काल में राजाओं तथा सरदारों को युद्ध की प्रेरणा देने के लिए भी ऐसे काव्य ग्रंथों का प्रणयन किया गया तथा राजाओं द्वारा लड़े गए युद्धों के ऐतिहासिक विवरणों की सुरक्षा के लिए भी कवियों द्वारा किया गया एक प्रयास है, परन्तु प्रशंसा के अतिरंजित वर्णनों में ऐतिहासिक सत्य तिरोहित सा लगता है, फिर भी ऐसे कुछ रासो काव्य हैं ही, जिनमें कवियों का प्रयास अपने राजा की वीरता से सम्बन्धित उपलब्धियों के वास्तविक प्रकाशन में आंशिक तो रहा ही है। महाराजा दलपति राव की बांकी वीरता से प्रभावित होकर जोगीदास ने मुगलों की अधीनता में लड़े गए दलपति राव के अनेक युद्धों का प्रशंसात्मक वर्णन किया है। 'करहिया कौ रायसौ' में करहिया के पमारों की वीरता से प्रभावित होकर राज्याश्रित कवि गुलाब द्वारा काव्य रचना की गई। शत्रुजीत रासो के रचयिता किशुनेश भाट ने भी महाराजा शत्रुजीतसिंह की युद्ध वीरता का ही प्रशंसात्मक वर्णन किया। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि इन कवियों को काव्य की प्रेरणा आश्रयदाता के द्वारा लड़े गए युद्धों में मिली तथा युद्ध तत्कालीन आंतरिक परिस्थितियों की उत्तेजना स्वरूप लड़े जाते थे।

सन्दर्भ

१ केशव ग्रन्थावली खण्ड ३ स० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पृ ४७६
२ वही, पृ ४७७
३ वही, पृ ४७७
४ वही पृ ६१५
५ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर, भूमिका, पृ २१
६ वही, पृ २१
७ वही, पृ २१
८ वही पृ ५६
९ वही, पृ २१
१० केशव ग्रन्थावली खण्ड ३ सम्पादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र हिन्दुस्तानी एकेडमी उत्तर प्रदेश इलाहाबाद, पृ ४७७, छन्द ४
११ जोगीदास का दलपतिराव रायसा–श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव पृ ४६६, छन्द ३१२ ३१३
१२ वही, पृ ४६६, छन्द ३१२ ३१३
१३ वही, पृ ४६५ ४६६ छन्द ३१० ३११
१४ वही, पृ ४१३
१५ वही, पृ ४४४
१६ वही पृ ४६५ ४६६ छन्द ३१० ३११
१७ वही, पृ ४१३ छन्द ३, ४
१८ वही, पृ ४१४, छन्द ६
१९ वही, पृ ४१८, छन्द १४, १५
२० वही, पृ ४२४ छन्द २३,२४ २५
२१ दतिया दर्शन स० श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ८
२२ जोगीदास का दलपतिराव रायसा–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४६६ छन्द १४३
२३ वही, पृ ४४४, छन्द १४६
२४ वही पृ ४४५ छन्द १५१
२५ दतिया दर्शन स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १०
२६ जोगीदास का दलपति राव रायसा–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ४४८ छन्द १८५ १८६
२७ वही, पृ ४४६ छन्द १६० के पश्चात् दोहा
२८ वही पृ ४६५, ४६६ छन्द ३१० ३११
२९ वही, पृ ४५६ छन्द २४५, पृ ४५८ छन्द २६१ पृ ४६२, ४६३ छन्द २८५ से २६६
३० वही, पृ ४१४ से ४२० छन्द ११ से १६
३१ वही, पृ ४२२, अन्तिम चार पंक्तियाँ, पृ ४२३
३२ छत्र प्रकाश, स डॉ० महेन्द्र प्रतापसिंह, अध्याय ७, पृ ६१
३३ वही, अध्याय १२, पृ ६६
३४ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर पृ २८

३५ हिन्दी वीर काव्य–डॉ टीकमसिंह तोमर पृ २८
३६ छत्र प्रकाश, ऐतिहासिक पर्यालोचन–डॉ० राजकमल बोरा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, पृ २५७
३७ वही, पृ २५८
३८ छत्र प्रकाश, प्रथम अध्याय, पृ २ स, डॉ महेन्द्र प्रतापसिंह
३९ वही, अध्याय ४, पृ ४१
४० धनि चम्पति कै औतरो, पंचम श्री छत्रसाल।
जिनकी अना सीस धरि, करी कहानी लाल॥
(छत्र प्रकाश अध्याय ७, पृ ६१ स डॉ० महेन्द्र प्रतापसिंह)
४१ 'कुवर सारवाहन बल बाढे
(छत्र प्रकाश, अध्याय ७, पृ ६४, स डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह)
'माची बीच सार जब बाज्यो, कुवर अरन आनन छवि छाज्यो।
कौतुक लखत भानु रथ रोप, बिडरयो कटकु कुवर के कोप॥'
(छत्र प्रकाश अध्याय ७, पृ ६५, स डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह)
४२ छत्र प्रकाश स डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह पृ १२२ अ० १४वाँ फुटनोट
४३ छत्रसाल त्यो करी तयारी कुटरो मारि जसापुर जारी।
सील सुहावल का तह की नो सासन मानि सीस पर लीनो॥
(छत्र प्रकाश स डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह, अध्याय २२ पृ १६८)
४४ हिन्दी वीर काव्य–डॉ०टीकमसिंह तोमर पृ ३२
४५ वही, पृ ३२
४६ नागरी प्रचारिणी पत्रिका नवीन स भाग १० स १९८६ करहिया की रायसो, छन्द स ६४
४७ वही समाप्ति पुष्पिका
४८ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकम सिंह तोमर पृ ३३५
४९ वही, पृ ३३६
५० नागरी प्रचारिणी पत्रिका नवीन स भाग १०, १९८६ वि पृ २७८ २८० छन्द २१, २२ पृ २८२ २८३ छन्द २३, २४, पृ २८५ छन्द ४५ पृ २८८, २८९ छन्द ५६ ६२
५१ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर, पृ ३३५
५२ वही पृ ३३५
५३ वीर काव्य–डॉ उदयनारायण तिवारी भूमिका पृ ३२३
५४ वही, पृ ३२४ ५५ वही, पृ ३२५

५६ पद्माकर ग्रन्थावली, प्रस्तावना–श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प ४१ प्रकाशक काशी नागरी प्रचारिणी सभा
५७ "इति श्री मथुरास्थ मोहनलाल भट्टात्मज कवि पद्माकर विरचिते।"
(पद्माकर विरचित 'राम रसायन के काण्डो की पुष्पिका से)
५८ वीर काव्य–डा० उदय नारायण तिवारी, प ३१६ ३२० प्रकाशन भारतीय भण्डार, लीडर प्रेस, प्रयाग
५६ वही, प ३२०
६० हिन्दी वीर काव्य–डा० टीकमसिंह तोमर, प ३२
६१ वीर काव्य–डा० उदय नारायण तिवारी प ३२०
६२ हिन्दी वीर काव्य–डा टीकमसिंह तोमर, प ३३
६३ पद्माकर ग्रथावली–विश्वनाथ प्रसाद मिश्र काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी प ७, छन्द २२
६४ वही, प ५, छ सख्या ३ ४ एव प ६ छ सख्या ५ स १३ तक
६५ वही प ६ छ १६
६६ वही प ६ छ १६
६७ वही, पृ ७ व ८ छ २७ से ३७ तक
६८ वही, प ८, छ ४७
६६ वही, प ६ छ ४८ से ५१
७० वही, प ६ छ ५२ से ५६ तक
७१ वही, पृ ८, छन्द ५०
७२ वही, प ६ छन्द ५४
७३ वही, 'पृथु रित्ति नित्त सुवित्त द जग जिति कित्ति अनूप की। बर बरनिए विरदावली हिम्मत बहादुर भप की' छन्द ७७
७४ पद्माकर ग्रन्थावली, स विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ १६ छन्द १३५, पृ २० छन्द १४१, १४३ प २१ छ १४६, प २२ छ १५८ व पृ २३ छ १६०
७५ वही पृ २३ छ १६४ स १६६, पृ २४ छ १६७ १६८
७६ वही, पृ २६ छन्द १८६, १८७ प २७ छन्द १८६ १६०
७७ वही, प २६ छ २०६, २०७
७८ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर, प ३४३
७६ शत्रुजीत रासो, सं श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १८७ छन्द ४२५
८० बुन्देल वभव द्वितीय भाग–श्री गौरीशकर द्विवदी शकर पृ ५०३
८१ वही पृ ५०३

८२ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १८८, छ ४२५
८३ वही प १४७, भूमिका
८४ वही, प १४८, भूमिका
८५ वही, प १४८ भूमिका
८६ श्रीधर का पारीछत रायसा–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ६३, छ १४
८७ शत्रुजीत रासा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १५५ छ ७४
८८ वही, प १५६ छ ७८
८९ वही, पृ १५६, छन्द ७८ ८०
९० वही, पृ १५७, छ ९२
९१ वही, प १५७, छन्द ९४
९२ वही, छ ९५
९३ वही, पृ १४९, छन्द ३ से ६ तक
९४ वही प १५८, छन्द १०५
९५ वही छ १०६
९६ वही, छ १०७
९७ वही, प १६८ छ ११४
९८ वही, प १७१, छ २६४
९९ वही, प १७२ छ २६८
१०० वही, छ २७०
१०१ वही प १७३, छ २०४
१०२ वही प १७४ छ २७४
१०३ वही प १७४ छ २७८
१०४ वही, प १७८, छ २८५
१०५ दतिया दशन–स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १३
१०६ शत्रुजात रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १८५, छ ३८४
१०७ वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी –श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प २
१०८ वीरकाव्य–डा० उदय नारायण तिवारी, प २०

अध्याय पचम

मुगलकाल के पश्चात् अद्यावधि प्राप्त रासोकाव्य

इस अध्याय मे मुगलकाल के पश्चात् लिखे गये अंग्रेजो के शासन काल के रासा ग्रन्थो का अध्ययन प्रस्तुत किया जायगा। इस काल खण्ड के प्रमुख रासो काव्य पारीछत रायसा बाघाट को रायसो, झाँसी की राइसो तथा मदनश' कृत लक्ष्मीबाई रासौ आदि हैं।

पारीछत रायसा

कवि एव काव्य परिचय

अन्य कवियो की भाँति श्रीधर के विषय म भी बहुत प्रयास करन पर भी कुछ ज्ञात नही हो सका। पारीछत रायस म भी कवि न अपन व अपने वश आदि क परिचय स्वरूप कुछ भी नही लिखा है। परन्तु यह निश्चित है कि यह 'श्रीधर कवि श्रीधर अथवा मुरलीधर स, जिन्होने जगनामा नामक वीर काव्य का सृजन किया है, भिन्न जान पडता है, क्योकि दोनों के रचनाकाल मे पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। पारीछत रायसो क रचयिता 'श्रीधर' दतिया नरेश महाराज पारीछत क राजत्व काल म विद्यमान थे और महाराज पारीछत का शासनकाल सन् १८०१ से १८३६ तक था[1] जबकि श्रीधर (मुरलीधर) का समय १७१३ ई निश्चित किया गया है।[2] अत श्रीधर कवि का कविता काल सन् १८०१ स १८३८ क बीच ही रहा होगा। 'पारीछत रायसो म वर्णित घटना सवत् १८७३ तदनुसार सन् १८१६ की है।[3] इस घटना के समय कवि स्वय विद्यमान था और उसन रायसौ की रचना की। इस प्रकार उपलब्ध प्रमाणो व आधार पर श्रीधर का रचनाकाल महाराज पारीछत के शासन काल के मध्य ही कभी रहा होगा।

पारीछत रायसा के अध्ययन से विदित होता है कि श्रीधर कवि प्रतिभा सम्पन्न थे। बहुत सम्भव है कि इनकी और भी रचनायें रही हैं।

'पारीछत रायसा' दतिया नरेश महाराज पारीछत के जीवन की एक छोटी सी घटना पर लिखा गया युद्ध काव्य है। इसका रचना काल सवत् १८७३ वि०

है, जैसा कि रायसो के एक छन्द में उल्लेख किया गया है।[4] इस काव्य ग्रन्थ में वर्णित घटना दतिया और ओरछा राज्य के सीमा विवाद से सम्बन्धित है। ओरछा और दतिया के बुन्देला शासक एक[3] ही घराने के होने के कारण सदैव मेल से रहे परन्तु अंग्रेजों से सन्धि के प्रारम्भ काल में ये दोनों सन् 1816 ई० में अपने जागीरदारों का पक्ष लेकर उलझ पड़े।

पारीछत रायसा में बाघाट के गन्धर्व सिंह परमार द्वारा पुतरी वेरो नामक एक ग्राम में आग लगा देने की घटना का उल्लेख है। गन्धर्व सिंह टेहरी (ओरछा) राज्य के जागीरदार थे। निकटवर्ती तरीचर ग्राम में लल्ला दउआ दतिया राज्य की ओर से प्रबन्धक था। पुतरीघरा नामक गाँव दतिया राज्य की सीमा में आता था अतः उसमें आग लगा देने वाले गन्धर्व सिंह को दण्डित करने के लिए महाराज पारीछत ने दीवान दिलीपसिंह के नेतृत्व में अपनी सेना भेजी। पारीछत रायसा का कथानक निम्न प्रकार है।

सर्वप्रथम गणेश जी की स्तुति विस्तार से करके कवि ने गंगा, सरस्वती, गिरिजापति शिव का स्मरण किया है।[5] तत्पश्चात् गन्धर्वसिंह की कुमंत्रणा का वर्णन किया गया है। घटना के प्रारम्भ में एक घंघेरा क्षत्रिय का अधिक हाथ दिखलाई पड़ता है। आगे के छन्दों में दतिया नरेश के बल वैभव का वर्णन किया गया है, जिसके अनुसार महाराज पारीछत की सेना में साठ हजार सवार, तीन सौ तोपें तथा एक लाख पैदल थे।[6] महाराज पारीछत के द्वारा अम्बाजी इंगला को पराजित किये जाने का संकेत भी इस रायसे में है।[7]

कवि ने दतिया की सेना की युद्ध के लिए तैयारी का बहुत विस्तार से वर्णन किया है। अनेक प्रकार के हथियारों का तथा युद्ध की वेषभूषा का विवरण भी दिया गया है। घोड़ों और हाथियों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। एराकी, अरबी, कच्छी, ताजी, तुर्की आदि घोड़ों की जातियों का वर्णन किया गया है।[8] पारीछत की सेना के हाथियों का वर्णन भी विस्तारपूर्वक प्रशंसात्मक पद्धति में किया गया है।[9] आगे के छन्दों में शूरवीरों की नामावली प्रस्तुत की गई है।[10] केवल वर्णन का विस्तार देने के लिए ही कवि के द्वारा सैनिकों व सेना नायकों की इतनी विस्तृत सूची दी गई है परन्तु वह सेना में सम्मिलित होने वाले वीरों का एक स्पष्ट विवरण भी है।

दतिया नरेश और प्रमुख सेना नायकों के मध्य हुई चर्चा से निष्कर्ष निकाला गया कि सम्पूर्ण सेना को सजाकर प्रस्थान करके उनाव में पड़ाव किया जाय। महाराज पारीछत के द्वारा बाघाट को धराशायी करने की आज्ञा पाकर दतिया की सेना ने दिमान दिलीपसिंह के नेतृत्व में प्रस्थान किया तथा योजनानुसार उनाव में डेरा डाला। उनाव में ब्रह्म बालाजी के दर्शन कर दीवान दिलीपसिंह के द्वारा

'ब्राह्मणो को विविध प्रकार से दान देने का वर्णन रायसे में पाया जाता है। ब्रह्म बालाजी की स्तुति विस्तृत रूप में की गई है, विभिन्न ईश्वरावतारो की कल्पना भी की गयी है।[11]

उनाव में सभी सरदारों के सहित दीवान दिलीपसिंह के शिकार खेलने का वर्णन भी कवि ने किया है। इन्दरगढ़ आदि स्थानो की सेनायें आकर उनाव में इकट्ठी होकर प्रातःकाल प्रस्थान कर देती है।[12] आगे के छन्दो में कवि ने मना प्रयाण के समय पारीछत की सेना के घोडो की विशेषताओ व उनकी जातियो का अतिशयोक्तिपूर्ण एवं विशद वर्णन किया है।[13] ऐसे वर्णन कवि ने स्थान-स्थान पर बार-बार प्रस्तुत करके कथानक में नीरसता का समावेश ही अधिक किया है। अनेक बार सेनानायको व सरदारो की नामावलिया व उनकी युद्ध सज्जा का वर्णन किया है।[14]

दीवान दिलीप सिंह के प्रस्थान के समय शुभ शकुनो का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात उनके प्रस्थान का लम्बा चौडा वर्णन किया है। उनाव से प्रस्थान करके दीवान की सेना ने नौहट घाट पर बेतवा को पार करके पडाव किया। श्रीधर ने उनाव से सेना के प्रस्थान की तिथि का उल्लेख किया है, जिसके अनुसार वसाख महीने के प्रथम पक्ष की दसवी तिथि भृगुवार को सेना ने उनाव से प्रस्थान किया और यह सेना शनिवार के दिन बाघाट पहुँची।[15] इसके पश्चात कवि ने एक हल्के से युद्ध का वर्णन किया है। युद्ध का वातावरण उपस्थित करने में कवि को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। पुन सेना इकट्ठी होने, सेना के चलने आदि का वर्णन दुहराया गया है तथा बाघाट के पास पहुँचने और घेरने का वर्णन किया गया है।[16] शुक्ल पक्ष तृतीया मगलवार के दिन[17] तत्पश्चात् चतुर्थी बुधवार के दिन के युद्ध का थोडा सा वर्णन है।[18] इस युद्ध में कुछ नये प्रतीकों का प्रयोग भी मिलता है जैसे- बन्दूक मुक्क या पर भुज मुज्वार भारय।"[19] अर्थात् बन्दूक की बाढ़ भाड में भुनते हुए ज्वार के दानो की तरह दिखलाई देती थी।

दूत आने जाने की परम्परा के अनुसार यथा स्थान कवि ने गुप्तचर की योजना की है। इससे कथानक की सवाद योजना के ऊपर प्रकाश पडता है। दोहे जैसे छन्द में प्रश्नोत्तर रूप में सवाद योजना का स्वरूप निम्न प्रकार है-

'श्री दिमान सिक्दार सौं, मुजरा करकर आह।
को हौ, कर, किहि भेजियो, महेन्द्र प्रसद्याद॥"[20]

किसी देश की राजनीति में गुप्तचरो का महत्वपूर्ण स्थान होता है, गुप्तचर सम्पूर्ण गतिविधियो का गुप्त रूप से निरीक्षण कर सूचना प्रस्तुत करता है। टेहरी (ओरछा) का गुप्तचर दतिया की फौज का भला प्रकार देखकर तथा दीवान से चर्चा करके लौट गया और महेन्द्र विक्रमजीत को सभी सूचनायें दी।

इसके पश्चात युद्ध का वर्णन किया गया है। दतिया की सेनाओं ने बाघाट के दुर्ग को चारों ओर से घेर लिया, उसी समय उसमें भयंकर अग्नि लग गई और लपटें चारों ओर दिखलाई देने लगीं। किले में जिस समय भगदड़ मची हुई थी, दतिया की सेना ने बाघाट पर तोपों के गोलों की मार कर दी, जिससे खलबली मच गई। लोग माधव सिंह को गालियाँ देने लगे और बुरा भला कहने लगे।[21] माधव सिंह की सेना तितर बितर हो गई। बड़गैयां जाति के सैनिक सभी भाग गये।[22] ओरछा की सेना पुनः संगठित की गई। यहाँ पर कवि ने पुनः एक बार सूरवीरों एवं राजपूत जातियों की नामावली प्रस्तुत की है।[23] तत्पश्चात् बाघाट के अन्तिम निर्णायक युद्ध का वर्णन किया गया है। छः दीवान छन्दों में युद्ध का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया गया है।[24]

बाघाट के युद्ध में पराजय ओरछा की हुई। कवि ने परम्परागत रूप में शत्रु पक्ष की दीनता प्रदर्शित करते हुए अपने आश्रयदाता के पक्ष की प्रबलता दिखलाई है। शत्रु पक्ष की स्त्रियों के बिलबिला कर भागने, भयभीत होने आदि का स्वाभाविक वर्णन बन पड़ा है।[1]

पराजित होकर दीवान माधव सिंह ने ओरछा जाकर शरण ली। महेन्द्र महाराजा विक्रमाजीत सिंह माधवसिंह की दीन दशा देखकर मानो विष का घूँट पीकर रह गये।

रायसे में एक स्त्री के सती होने का प्रसंग आया है। शत्रु पक्ष बाघाट की एक स्त्री अपने वीरगति प्राप्त पति के साथ चिता में जल कर सती हो गई।[6] इससे यह स्पष्ट होता है कि इस समय बुन्देलखण्ड में सती प्रथा विद्यमान थी।

दतिया की फौज ने बाघाट को जलाकर राख कर दिया।[27] बाघाट को विजय करने का दिन कवि ने रविवार लिखा है।[28] अष्टमी रविवार को विजित करके नवमी सोमवार को शत्रुओं के आवास खोदकर ढहा दिए गए।[29] इस युद्ध में पूर्ण रूपेण दतिया की जीत हुई। दतिया और ओरछा राज्य के इस तनाज़े के विषय में अंग्रेजों के पालिटिकल विभाग के दो पत्रों में परिस्थिति का यथार्थ वर्णन सुरक्षित है और वह रायसे के वर्णन की पुष्टि करता है। अन्त में अंग्रेजों के हस्तक्षेप से झाँसी के गोपाल भाऊ द्वारा दोनों राज्यों के बीच मध्यस्थता की गई।

पारीछत रायसा का कथानक ऐतिहासिक घटनावली से युक्त है। घटना यद्यपि छोटी सी ही वर्णित है, परन्तु कवि ने अन्य विषयों को अनावश्यक रूप में बीच-बीच में बार-बार पिष्ट पेषित करके कथावस्तु के प्रवाह में अस्वाभाविकता, मुक्तता एवं अरोचकता उपस्थित की है। पारीछत रायसे में कुल ३७६ छन्द हैं।

बाघाट रासो

बाघाट रासो" के रचयिता प्रधान आनन्दसिंह कुडरा हैं। जैसा कि कवि के उपनाम 'कुडरा" से ज्ञात होता है यह कवि कुडरा कायस्थ वंश में जन्मा था। कुडरा कायस्थों का यह घराना टीकमगढ़ रियासत के कुडार ग्राम में आकर दतिया राज्य में बस गया तथा इस घराने को दतिया राज्य दरबार की ओर से सम्मानित पद प्राप्त रहा। इस वंश के और भी कवियों का परिचय प्राप्त हुआ है। कल्यानसिंह कुडरा नाम के एक अन्य कवि ने महारानी लक्ष्मीबाई और अंग्रेजों के युद्ध से सम्बन्धित झांसी को रायसा लिखा। कुडरावंश के कायस्थ आज भी दतिया एवं सेंवढ़ा में वर्तमान हैं।

'बाघाट रासो' के कवि ने ग्रन्थ में अपने परिचय के सम्बन्ध में कुछ भी विवरण नहीं दिया है। पर ऐसा जान पड़ता है कि कवि तत्कालीन नरेश का विशेष कृपा पात्र था। महाराज पारीछत भी उस समय तक पर्याप्त प्रभाव स्थापित कर चुके थे। इसका स्पष्ट प्रमाण उनके सम्बन्ध में रचे गये एकाधिक रासो ग्रन्थ हैं। प्रधान आनन्दसिंह कुडरा ने महाराज पारीछत के सम्बन्ध में सभासिंह द्वारा लिखे गये एक तीसरे ग्रन्थ की ओर संकेत किया है।[30] प्रधान आनन्द सिंह ने इस रचना को यद्यपि नाम नहीं दिया है पर उनके लेखानुसार यह स्पष्ट है कि यह रचना भी बाघाट की घटना के सम्बन्ध में ही रही होगी और 'विस्तवार' शब्द से यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि वह कृति आलोच्य रासो ग्रन्थ से विस्तृत एवं ब्यौरेवार रही होगी क्योंकि 'विस्तवार' शब्द किसी भी ब्यौरे को विस्तार सहित एवं प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत करने के निमित्त ही प्रयुक्त किया जाता है। एक छोटी सी घटना के ऊपर तीन कवियों द्वारा अपने अपने ढंग से प्रकाश डाले जाने से तत्कालीन राजा का काव्य प्रेम प्रकट होता है तथा यह भी विदित होता है कि उस समय राज्य दरबार में कवियों को अच्छा सम्मान प्रदान किया जाता था।

'बाघाट रासो' की रचना संवत् १८७३ अमल संवत १८७२ विक्रमी में तदनुसार सन् १८१५ ई० में की गई। रासो के प्रारम्भ में कुछ पंक्तियाँ बुन्देली गद्य की भी कवि द्वारा लिखी गई हैं जिनमें दतिया की फौज के बाघाट जाने की तिथि का स्पष्ट उल्लेख है।[31] गद्य पंक्तियाँ संक्षेप में बाघाट में घटित सम्पूर्ण घटना पर प्रकाश डालती हैं, जिनका आशय इस प्रकार है। दतिया से किशुन गढ़ के दिमीपसिंह बुन्देला ने फौज समेत जाकर उनाव में डेरा डाला। फिर प० श्री सिकदार धर्मसिंह जाकर उनाव में इस फौज से मिल गए। फिर उनाव से कूचकर

बडे गाव स निकल कर नोहट क इसी तरफ बागा मे पडाव किया । नौहट का घाट उतर कर फौज बाघाट क निकट पहुँच गई । वैसाख सुदी ८ का बाघाट का लूटा लिया गया तथा गांव म आग लगा दी । फौज न बिना मारा के हल्ला किया जिसम बाघाट के बहुत स लोग मारे गय । दिमान गन्धर्वसिंह का भाई बन्धुओ द्वारा साथ नहा दिया गया । बाघाट का एक ठाकुर वीरगति का प्राप्त हुआ जिसकी ठकुरानी सती हो गई । हनुमान न राधा कृष्ण की कृपा म विजय कराई जिसकी खबर दतिया आई । महाराज पारीछत न दिमान दिलीप सिंह का लिख भेजा कि महेन्द्र महाराज विक्रमाजीत का लिख भेजना कि भूमि खाली पडी हुई है हमका लेना नहा है । जिसकी मरजी हो उसको रक्खो । तुम लौटकर दतिया आओ । फौज ने कूच करके बडे गांव पडाव किया और सुदी ११ बुध का फौज दतिया आ गई । बडगया (बडे गांव के निवासी) उदास हुए इधर दतिया म खशी मनाई गई । गद्य खण्ड की अन्तिम पक्तिया म पुन दतिया की फौज क बाघाट जाने की तिथि का उल्लेख किया गया है ।

'बाघाट के युद्ध की घटना के सम्बन्ध म रामसिंह द्वारा लिखित ग्रन्थ ता नही मिला पर श्रीधर कवि का "पारीछत रायसा उपलब्ध है । एक ही घटना पर दो अलग-अलग कवियों द्वारा एक ही समय मे ग्रन्थ लिखे गये । 'पारीछत रायसे' म इस घटना पर विस्तार म प्रकाश डाला गया है तथा ग्रन्थ के कलेवर म ३७६ छन्द हैं । प्रधान आनन्दसिंह कुडरा द्वारा रचित बाघाट रासो' नाम क इस छोटे स ग्रन्थ म केवल १३१ छन्द हैं । यद्यपि दोनो ग्रन्थो मे मूलत कथानक एक ही है तथापि बाघाट रासो म सक्षिप्तता क कारण कथानक शीघ्रतापूर्वक आगे बढाया गया है । पारीछत रासा म बाघाट क दिमान गन्धर्व सिंह के द्वारा तरीचर हथिया लेन क सम्बन्ध म महेन्द्र महाराज क लिए चिट्ठी भेजने का वर्णन है फिर महेन्द्र महाराज के द्वारा दतिया तथा ओडछा के सम्बन्धो व पारीछत महाराज की शक्ति और वैभव क ऊपर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला गया है ।

बाघाट रासो का प्रारम्भ गणेश वन्दना व दोहरे क पश्चात एक गद्य पंक्ति क द्वारा किया गया– श्री महेन्द्र महाराज ने तरीचर लेव की मनसूबा करौ ।[33] अर्थात् महाराज विक्रमाजीत जू देव ने दतिया रियासत क सीमावर्ती ग्राम तरीचर का लेने की इच्छा की । महाराज विक्रमाजीत युद्ध म अत्यन्त प्रवीण थ दतिया क राजा को दूर करके रहते थ । तथा ईश्वर के बड़े भक्त भी थ ।[34] महेन्द्र महाराज विक्रमाजीत ने कहा कि दतिया स प्रेम भी न टूटे और अपना काम भी हो जाय ऐसा उपाय करना चाहिये । बाघाट के गन्धर्व सिंह दिमान के गव स कहा कि मैं दतिया को भी कुछ नहीं समझता तरीचर की मिलती है । दिमान गन्धर्वसिंह ने दतिया राज्य क एक गांव ...

करवा दिया जिसमे बन्दूकें और तलवारें तक चल गई। तरीचर के झगडे में गंधर्व सिंह के आक्रमण मे पुतरी घेरे के दो घायल व्यक्ति मारे गये और अन्य घायल भी हुए। दिमान गंधर्वसिंह ने पुतरी घेरा पर अधिकार करके तरीचर को ओडछा राज्य की सीमाओं मे मिला लिया। तरीचर मे दतिया राज्य की ओर से लल्ला दौआ प्रबन्धक थे उन्होंने खगार के हाथ मे एक चिट्ठी दतिया नरेश के दरबार मे भेजी जिसमे स्थिति का पूरा ब्यौरा दिया गया था।

दतिया नरेश ने सेवढा के दिमान साहब से बाघाट की स्थिति पर परामर्श किया। सेवढा से दिमान अमान सिंह सेना सहित कूच कर दतिया पहुँचे और महाराज पारीछत से बाघाट की स्थिति पर विस्तार से चर्चा हुई। दतिया नरेश का उद्देश्य बाघाट के माध्यम से ओडछे को हानि पहुँचाना कदापि नहीं था, केवल दिमान गंधर्व सिंह का दर्प दलन ही इस अभियान का एकमात्र लक्ष्य था।

दतिया से दिमान दलीपसिंह के नेतृत्व मे एक सेना बाघाट के लिये रवाना की गई। दतिया और सेवढा की सम्मिलित सेनायें उनाव मे पडाव करके 'नौहट' के घाट से उतर कर बाघाट के निकट पहुँच गई। दतिया की सेना शक्तिशाली थी। मेजर स्लीमान साहब ने फालिज रोग से पीडित महाराज पारीछत एवं उनकी सेना को बलशाली बताया है। वर्गों के प्रति असावधान रहा है।[35] इन दोनों सेनाओ के बाघाट पहुँचने व दिमान गन्धर्वसिंह को गढ मे घेरने की तिथि 'बाघाट रासो' मे निम्न प्रकार दी गई है—

> संवत अठारह से तिहत्तर माघ है बसाव।
> शुक्ल पक्ष बसानिज परमान उन्हे साख।
> लगि गए बाघाट सौं कीनी जु अपनी हाक।
> छिके गन्धर्व सिंह गढ मे हुत बडेव खाक॥[36]

बाघाट रासो के कवि के वर्णन से ज्ञात होता है कि बाघाट मे दतिया और ओडछा की सेनाओ के बीच बहुत हल्की झडप हुई थी। सिपाहियो के हताहत होने का भी बहुत सूक्ष्म वर्णन है। न तो कहीं भी युद्ध की भयंकरता का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन मिलता है और न पूरे ग्रन्थ मे कहीं भी युद्ध सामग्री सिपाहियों या सरदारों की लम्बी लम्बी सूचियाँ ही प्रस्तुत की गई हैं। कवि ने बडे सूक्ष्म रूप मे युद्ध का थोडा सा वर्णन करके दिमान गन्धर्वसिंह की पराजय का उल्लेख कर दिया है। पश्चात बाघाट की स्थिति एवं विजय की सूचना महाराज पारीछत के पास दतिया भेजी जाती है और दतिया से महाराज पारीछत ओरछा के महेन्द्र महाराज को लिख भेजने का आदेश देकर सवारों को विदा कर देते हैं। दतिया के दिमान ने महेन्द्र महाराजा को लिख भेजा कि बाघाट की गद्दी खाली पडी है जिसे आप देना चाहें दें।

युद्ध वर्णन में नीचे लिखे कुछ छन्द उदाहरणार्थ प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

'चले गोला और गोली लगं गढ़ में जाइ।
फौज के दौरे सिपाई लिए घाट छिडाई।
घली सममरें सिरोही भई तेगन मार।
चमक जाना बीजुरी सी कौनु सकेहि निहार॥"

(बा० रा० पृ० ८४ छ० ८०)

(गोला गोली चलन लगे जो जाकर गढ में लगते थे, सिपाहियों ने दौड कर सब घाट छीन लिये। शमसेरे व सिरोहियाँ चलने लगी तेगों की मार होने लगी, इन हथियारों की चमक ऐसी थी जैसे बिजली चमक जाती हो)।

तथा

'तोप चल जब होइ अवाज। परहि मनौ भादों की गाज।"

भादों की गाज पडने से तात्पर्य तोप के गोले की गाज जैसी भयंकरता की ओर कवि का संकेत है। उपर्युक्त छन्द में उत्प्रेक्षा अलंकार भी है।

उपर्युक्त छन्द की अन्तिम पंक्ति अलंकृत है। कवि ने तलवार की चमक को बिजली की चमक की उपमा दी है। उपमा सार्थक है। पर ऐसे वर्णन एकाध ही हैं। वर्णन की संक्षिप्तता के कारण रस, छन्द अलंकार आदि की ओर कवि कोई ध्यान नहीं दे पाया है।

रासो काव्यों की दृष्टि से बाघाट रासो में वीर रस की सृष्टि करने में कवि को सफलता नहीं मिल पाई। सीधे सपाट एवं त्वरित चित्रण में रस परिपाक का स्थान नहीं मिल सका।

प्रकृति चित्रण तो वीरकाव्यों में वैसे ही सूक्ष्म रूप में प्राप्त होता है। प्रस्तुत रासो ग्रन्थ में तो प्रकृति के बहुत ही अल्प रूप में दर्शन होते हैं। केवल दो स्थानों पर दो छन्दों में प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण मिलता है।

१ "तोप चल जब होइ अवाज। परहि मनौ भादों की गाज।"

(बा० रा० पृ० ८२ छन्द ७२ प्रथम पंक्ति)

२ घली सममरें सिरोही भई तेगन मार।
चमक जानी बीजुरी सी कौनु सकेहि निहार॥"

(बा० रा० पृ० ८४, छ० ८० अंतिम दो पंक्तियाँ)

बाघाट रासो में केवल कुछ ही चुने हुए छन्द प्रयुक्त हुए हैं जैसे दोहरा, अरिल्ल कवित्त कुण्डलिया छन्द आदि। इन छन्दों में से 'अरिल्ल' और 'छन्द' नाम से प्रयुक्त छन्द छन्द शास्त्र के नियमों के अनुसार नहीं है। ऐसा हो सकता है कि कवि ने इनका मूल प्रति में कुछ और नाम दिया हो और बाद में लिपिकारों के प्रमाद से यह परिवर्तन हो गया हो।

प्रस्तुत ग्रंथ में अलंकारों को विशेष स्थान नहीं मिल पाया है। एकाध स्थान पर उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, दृष्टान्त आदि अलंकार प्रयुक्त किए गए हैं।

बाघाट रासो वर्णनात्मक शैली में लिखा गया है। कवि ने वस्तुओं या नामों की लम्बी सूचियों से रचना को अछूता रखा है, जिससे कथानक में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई। नादात्मक और तड़क भड़क के शब्द भी प्रयुक्त नहीं किए गए हैं। बाघाट रासो की भाषा विशुद्ध बुंदेली है। बुंदेली गद्य का सुंदर रूप बाघाट रासो में देखने को मिलता है।[37] बुन्देली बोली में शब्दों को आकारांत रूप में अधिकतर प्रयुक्त किया जाता है जैसे बाघाट का रासो' के स्थान पर बुंदेली में इसको 'बाघाइट कौ रायसौ' लिखा जाता है। इसी तरह इस बोली में अनुनासिकता पर विशेष बल दिया जाता है। मा' स्वयं अनुनासिक व्यंजन है परन्तु बुंदेली में 'हनूमान' को 'हनूमान' लिखेंगे तथा दिमान' को दिमान।[38] 'जगह' के लिए 'जागा' लिखा जायगा। बुंदेली में 'उ' से 'व' का तथा 'अ से य' अक्षर का काम लिया जाता है। फारसी के हकीकत', 'जुरत आदि शब्द बुंदेली संस्करण में प्रयुक्त किए गए हैं। 'जुरत' को जुरियत ताकत बल या साहस के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है।

'बाघाट रासो' बुंदेली भाषा की प्रतिनिधि रचना है। छोटी सी रचना ऐतिहासिक घटना तिथियों को प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करती है। तत्कालीन पड़ोसी राज्यों के पारस्परिक संघर्ष संधि एवं मैत्री पर प्रकाश डालने वाले ऐसे काव्य ग्रंथों का ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण स्थान है।

झाँसी कौ रायसौ (कल्याण सिंह कुडरा)

कवि परिचय

कल्याणसिंह कुडरा जाति के कायस्थ थे। इनके पूर्वज कुडार ग्राम से आकर दतिया में बस गये थे। कुडरा शब्द कुडार से बना है। कुडार टीकमगढ़ रियासत में एक गाँव है। कुडरा वंश इसी कुडार गाँव से आकर दतिया में बस गया और 'कुडरा' कहलाया।

कल्याणसिंह दतियाधिपति विजयबहादुर के शासनकाल में दतिया के कवि थे। कवि का दूसरा नाम बरजोर कुडरा भी था। ग्रंथारम्भ में कवि द्वारा लिखे गए निम्नांकित गद्यांश से ऐसा स्पष्ट होता है—

'अथ झाँसी कौ राइसौ श्री लक्ष्मी रानी व टेरी वारी लिडई सिरकार सौ न्याव भई ताकौ राइसौ बनायो कलियान सिंघ कुडरा कानीगो उर्फ बरजोर कुडरा।'[39] कवि के स्वभाव में देश प्रेम स्पष्ट ही दिखता है। वह समय अंग्रेजी सत्ता का था। चारों ओर अंग्रेज सरकार के दमन और अत्याचार की क्रूर घटनायें

रही थी। कोई भी तो खुलकर गोरी सरकार का विरोध नहीं कर सकता था। से समय म अंग्रेजा के विरुद्ध स्वतन्त्रता संग्राम की सवप्रमुख सेनानी महारानी लक्ष्मीबाई की शौर्यगाथा कल्यान सिंह कुडरा ने एक ऐसे राजा के राज्य में निवास करते हुए लिखी जो स्वय अंग्रेज भक्त था।[40] कवि ने दतिया नरेश के समक्ष झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई की सहायता की याचना करते दिखाया है।[41] यह कोरी चाटुकारिता नहीं है। संकट के समय निकटवर्ती दतिया राज्य से सहायता की माँग तथ्यपूर्ण है। थोडी सी कूटनीति अवश्य है कि अंग्रेज सरकार के कोप से बचने के लिए ग्रंथारम्भ के गद्य मे केवल इतना लिखा गया है 'अथ झाँसी को राइसो थी लक्ष्मी रानी व टरी वारी लिडई सिरकार सौं याव भई ताको राइसो बनायो कलियान सिंघ कुडरा कानीगो उर्फ वरजोर कुडरा'।[42] कल्यान सिंह कुडरा द्वारा लिखे गए इस रासो मे झाँसी की रानी व अंग्रेजों के बीच होने वाले झाँसी, कालपी, व ग्वालियर के सभी युद्धो का वणन किया गया है।

ग्रंथ परिचय

यह रचना सन् १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के कुल १२ वष बाद की अर्थात् सवत १९२६ की है। झाँसी के स्वतन्त्रता संग्राम सम्बन्धी ऐतिहासिक तथ्य इस रचना म भली प्रकार पाये जाते हैं। ग्रंथ के प्रारम्भ म गणेश और सरस्वती की वन्दना के पश्चात् कवि ने १८५७ की क्रान्ति का वणन एक छन्द म किया है—

सवत दसनौ सकरा, ऊपर चौदह साल।
तासु मध्य अंगरेज को, आपुस म दहचाल॥[43]

झाँसी मे तत्कालीन गदर के स्वरूप का कल्याणसिंह ने निम्नांकित रूप मे सकेत किया है जिसम इस फौजी क्रान्ति कहा जा सकता है।

फिरा फिरटै छाउनी, भयौ गदर असरार।
जे पाये अंग्रेज जहँ, त ता डारे मार।'[44]

झाँसी पर लक्ष्मीबाई का फिर से अधिकार कर लेने का वणन कवि ने निम्न दोहे म किया है—

छलबल सो झाँसी लई गगाधर की नार।
ताकौ अब आगे कहत भली भाँति व्यौहार॥[45]

इसक पश्चात् ओडछे की रानी लिडई सरकार तथा नत्थे खाँ की सलाह के अनुसार नत्थे खाँ द्वारा झाँसी पर आक्रमण किये जाने का वणन है। जब रानी लक्ष्मीबाई को किला खाली करने का सन्देश दिया जाता है तो वह यह उत्तर देती है—

बिना मरैं छूट नही काहू को घर द्वार।'[46]

। ।आगे नत्थे खाँ (ओरछा की रानी लिडई सरकार का दीवान) और महारानी लक्ष्मीबाई की सेनाओ के ।घमासान युद्ध का वणन है। इस युद्ध मे नत्थे खाँ की।पराजय होती है। टेहरी वाली रानी के द्वारा दतिया के महाराजा से सहायता की याचना करने पर जब वे टाल दते हैं, । तब पुन नत्थे खा झांसी पर गनपतगिर के दरवाजे की ओर से हमला करता है। झासी के विरुद्ध नत्थे खा को पराजय मिलती है। कवि न पराजित नत्थे खाँ की बागी विचारधारा का निम्न लिखित छन्द मे अच्छा।वणन किया है—

सासें लेत सोचत सकोच करे नत्थे खाँ
पूछ सिरकार तिनै का कहि समझाइ हो।
।उडो है खजानो लरो तीन महीना लौं ल्ल,
सबल बिलानो सुती कौन कौन गाइ हो।
कहत कलियान बान बीत गई झाँसी पै,
गासी सी टेहरी माहि हासी न कराइहो।
बिजन कराइहौं अगरेज मौं लराइहो,
तो लडई महारानी कौ वदन बताइहौं ॥[47]

नत्थे खाँ अंग्रेजी सेना का झासी के विरुद्ध चढा लाता है। बानपुर के राजा मर्दनसिंह द्वारा रोके जाने पर नत्थे खा अंग्रेजी फौज को अन्य माग म निकाल लाता है। एक कवित्त म कवि ने अंग्रेजी शक्ति एव सेना की सबलता का चित्रण कितना अच्छा किया है—

"तेज अगरेज कौ अगेजवौ न हासी आइ
नाइ बल विक्रम की भली भलीं धाई हैं।
मार कर जूलन फिरटन मिटाइदइ
मागर की दौर दाव घटिया छिडाई है ॥ [48]

आदि

० ० ०

अंग्रेजो के द्वारा रानी लक्ष्मीबाई के पास झासी छोड देने का सन्देश पहुँचाने पर रानी बारूद और पाँच गोली भेजकर मोर्चा लेने की सूचना अंग्रेजो को भेज देती है। कालपी के तात्या टोपे द्वारा झासी की मदद के लिए विशाल सेना भेजी जाती है, किन्तु वह अंग्रेजी सेना द्वारा हरा दी जाती है। रायसे मे अंग्रेजी सेना तथा झाँसी की सेना के भयंकर युद्ध का वणन किया गया है। झासी की सेना के वीरो का शौय वर्णन कवि ने खूब किया है। रानी की सेना के विलायती नाम से पुकारे जाने वाले पठान सरदारों की वीरता का कवि ने अच्छा वणन किया है।[49] झासी पर अंग्रेजो का अधिकार हो जाने पर रानी लक्ष्मीबाई अपने चुने हुए

विश्वस्त सनिका के साथ गोरी मना को चीरकर ।निकन गई और कालपी पहुँच गई ।

रायमे मे यमुना के किनारे कालपी के युद्ध का भी सक्षिप्त वणन है[50] और काच के युद्ध का भी वणन किया गया है ।[51] अत म मुरार के भयकर युद्ध का वणन हुआ है, जिसम रानी वीरतापूवक शत्रु का सामना करत हुए वीरगति को प्राप्त होती है ।[52] रानी के भयकर युद्ध का वणन कवि न किरवान छदा मे अत्यन्त रोमाचकारी शब्दो मे किया है ।

चलत तमचा तेग किच कराल जहाँ,
गुरज गुमानी गिर गाज के समान ।
तहा एक बिन मथ्यँ एक ताके ममरथ्थ
एक डोलें बिन हथ्थँ रन माचौ घमसान ॥
जहाँ एकैं एक मार एकै भुव म चिकार,
एकै सुरपुर सिधारें सूर छोड छोड प्रान ।
तहा बाई न सवाई अगरेज सा भजाई,
तहा रानी मरदानी झुकझारी किरवान ॥"[53]

अन्तिम छदा के पहले दो तीन छदा म कवि न रानी की यथेष्ट प्रशसा की है–

सोरठा

मरदन मौं जग माय । ऐसी करनी ना बनी ।
सुरपुर पौंची जाय । नाना की उतरी मनी ॥[54]
ता दिन ते दिल्ली दर मजलन लौं खाली भई
और नृप नाहू काहू आब ना चढाई है ।
सकट सहेट दर दक्खिन अरु पूरब लौं
दखौ लाहोर त बुन्देलखण्ड ताइ है ॥
कहत कलियान बान राखी परमेसुर नें,
वाकौ कर साकौ सुरलोक कौं सिधाई है ।
सूर कौं सराहें जो गुनीन गुन गायें हाल,
बाई की सराई की जहान मे बडाई है ॥[55]

बुन्देली बोली म लिखे गये इस छोट से रासो का हिन्दी साहित्य क इतिहास म गौरवपूण स्थान है क्योंकि १८५७ क स्वतन्त्रता सग्राम क पश्चात् तत्सम्बन्धी यह सवप्रथम काव्य ग्रथ है । अवश्य हा ग्रथकार महारानी लक्ष्मीबाई का सम सामयिक कवि था । अवश्य ही उसने यथेष्ट तटस्थता क साथ माचें का

आगे नत्थे खाँ (ओरछा की रानी लिडई सरकार का दीवान) और महारानी लक्ष्मीबाई की सेनाओं के घमासान युद्ध का वर्णन है। इस युद्ध में नत्थे खाँ की पराजय होती है। टेहरी वाली रानी के द्वारा दतिया के महाराजा से सहायता की याचना करने पर जब वे टाल देते हैं तब पुनः नत्थे खा झांसी पर गनपतगिर के दरवाजे की ओर से हमला करता है। झांसी के विरुद्ध नत्थे खां को पराजय मिलती है। कवि ने पराजित नत्थे खाँ की बागी विचारधारा का निम्न लिखित छन्द में अच्छा वर्णन किया है–

सासें लेत सोचत सकोच कर नत्थे खाँ
पूछै सिरकार तिन का वहि समझाइ हो।
उडो है खजानो लरी तीन महीना लौं दल
सबल बिनानो सुतो कौन कौन गाइ हों।
कहत कलियान वान बीत गई झाँसी प
गासी सी टेहरी माहि हासी न कराइहो।
बिजन कराइहौं अगरेज सौं लराइहौ
तो लडई महारानी को वदन बताइहौं॥[47]

नत्थे खाँ अंग्रेजी सेना को झांसी के विरुद्ध चढा लाता है। वानपुर के राजा मर्दनसिंह द्वारा रोके जाने पर नत्थे खा अंग्रेजी फौज को अन्य मार्ग से निकाल लाता है। एक कवित्त में कवि ने अंग्रेजी शक्ति एवं सेना की सबलता का चित्रण कितना अच्छा किया है–

'तेज अगरेज को अगजबो न हासी आइ
नाइ बर विक्रम की भलीं भाँ धाई हैं।
मार कर जूलन फिरटन मिटाइदइ
सागर की दौर दाब घटिया छिडाई है॥[48]
आदि

। ० ० ०

अंग्रेजों के द्वारा रानी लक्ष्मीबाई के पास झांसी छोड देने का सन्देश पहुँचाने पर रानी बारूद और पांच गोली भेजकर मोर्चा लेने की सूचना अंग्रेजों को भेज देती है। कालपी से तात्या टोपे द्वारा झांसी की मदद के लिए विशाल सेना भेजी जाती है, किन्तु वह अंग्रेजी सेना द्वारा हरा दी जाती है। रायसे में अंग्रेजी सेना तथा झांसी की सेना के भयंकर युद्ध का वर्णन किया गया है। झांसी की सेना के वीरों का शौर्य वर्णन कवि ने खूब किया है। रानी की सेना के विलायती नाम से पुकारे जाने वाले पठान सरदारों की वीरता का कवि ने अच्छा वर्णन किया है।[49]
झांसी पर अंग्रेजों का अधिकार हो जाने पर रानी लक्ष्मीबाई अपने चुने हुए

विश्वस्त सनिको के साथ गोरी सेना को चीरकर निकल गई और कालपी पहुँच गई।

रायसे मे यमुना के किनारे कालपी के युद्ध का भी सक्षिप्त वणन है[50] और कोच के युद्ध का भी वणन किया गया है।[51] अन्त मे मुरार मे भयकर युद्ध का वणन हुआ है जिसम रानी वीरतापूवक शत्रु का सामना करते हुए वीरगति को प्राप्त होती है।[52] रानी के भयकर युद्ध का वणन कवि ने किरवान छन्दों मे अत्यन्त रोमाचकारी शब्दों म किया है।

चलत तमचा तेग किच कराल जहाँ,
गुरज गुमानी गिर गाज क समान।
तहा एक बिन मथ्थे एक ताके समरथ्थ
एकै ढोल बिन हथ्थ रन माचो घमसान॥
जहाँ एकै एक मार एकै भुव म चिकार
एकै सुर पुर सिधारैं सूर छाड छाड प्रान।
तहा बाई न सवाई अगरज सा भजाई,
तहा रानी मरदानी युद्धझारी किरवान॥'[53]

अन्तिम छन्दा के पहले दो तीन छन्दा म कवि न रानी की यथेष्ट प्रशसा की है–

सोरठा

मरदन माँ जग माय। ऐसी करनी ना बनी।
सुरपुर पौंची जाय। नाना की उतरी मनी॥[54]
ता दिन ते दिल्ली दर मजलन नौ खाली भई
और नृप नाह काहू आस्र ना चढ़ाई है।
सकट सहट दर दक्खिन अरु पूरब लौं
देखो लाहौर त बुन्देलखण्ड ताइ है॥
बहुत करियान बान राखी परमेसुर नैं,
बांको कर साको सुरलोक कौं सिधाई है।
सूर कौं सराहें जो गुनीन गुन गाय हार
बाई की सराई की जहान म बढ़ाई है॥[55]

बुन्देली बोली म लिख गये इस छोटे से रासो का हिन्दी साहित्य के इतिहास म गौरवपूर्ण स्थान है क्योंकि १८५७ के स्वतन्त्रता सग्राम के पश्चात् सम्भवत यह सवप्रथम काव्य ग्रन्थ है। अवश्य ही ग्रन्थकार महारानी लक्ष्मीबाई का सम-सामयिक कवि था। अवश्य ही उसने यथेष्ट तत्परता के साथ सार्चे का

बहुत कुछ आखो देखा अथवा प्रामाणिक वर्णन युद्ध से कुछ समय बाद ही पद्यबद्ध किया है।

लक्ष्मीबाई रासो

कवि परिचय

पण्डित मदन मोहन द्विवेदी 'मदनेश' का जन्म संवत् १६२४ माघ शुक्ला तृतीया सोमवार को झांसी में हुआ था।[59] आपने अपने जीवन के विषय में अपने द्वारा रचित रासो में कोई उल्लेख नहीं किया परंतु झांसी के ही डा० भगवानदास माहौर ने द्विवेदी जी के जीवन पर 'लक्ष्मीबाई रासो' की भूमिका में पर्याप्त प्रकाश डाला है। 'मदनेश' जी के पिता पण्डित गोरे लाल दुबे थे और इनके पितामह का नाम पण्डित चुखर दुबे था। आपको शिक्षा दीक्षा घर पर ही हुई। पूर्व परम्परा से पिता व दादा का प्रमुख व्यवसाय ज्योतिष था, इसलिए 'मदनेश' जी को मुख्य रूप से ज्योतिष की ही शिक्षा प्रदान की गई थी। काव्य तथा आयुर्वेद सम्बन्धी ज्ञान आपने विशेष रुचि से प्राप्त किया। आगे चलकर झांसी में ही आपने अनेक लोगों को काव्य शिक्षा देकर अपना शिष्य बनाया। उस समय कविता के क्षेत्र में फड़बाजी होती थी। समस्या पूर्ति सम्बन्धी कविता लिखी जाती थी। फड़बाजी और समस्या पूर्ति के लिए बड़े-बड़े कवि दंगल होते थे। पण्डित मदनेश' जी अपने शिष्यों के साथ इन दंगलों में भाग लिया करते थे तथा फड़बाजी और समस्या पूर्ति के क्षेत्र में आपने पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त की थी। कविवर श्री नाथूराम माहौर मदनेश जी के लब्ध प्रतिष्ठ शिष्य थे।

मदनेश जी ने रामलीला समाज की भी स्थापना की थी तथा अत्यन्त अभिरुचि से लीलाओं का समायोजन करते थे। अधिकांश रामलीला समायोजन दो समाजों की प्रतिस्पर्धा में सम्पन्न होता था। इनके प्रतिस्पर्धी इनके ही शिष्य कविवर श्री नाथूराम माहौर होते थे।

मदनेश जी सरल सीधे और स्वाभिमानी व्यक्ति थे। वे अन्य कवियों की भाँति यश प्रार्थी नहीं थे और न प्रकाशन की ही प्रवृत्ति वाले थे। यही कारण था कि इनका समस्त काव्य अविज्ञात रूप में पड़ा रहा। आपने शृंगारकालीन परम्परा से प्रभावित नायिका भेद एवं शृंगार वर्णन, ऋतु विहार आदि सम्बन्धी कवितायें लिखी। इसके अतिरिक्त नीति प्रवचन, राष्ट्रीय उदबोधन आपके काव्य के प्रमुख प्रतिपाद्य थे। मज सर, कुण्डलियां, ख्याल आल्हा कवित्त, सवया, दादरा, ठुमरी गजल तोमर त्रोटक तथा अमत ध्वनि आदि पुराने छन्दों की शैली में ही आपने काव्य रचना की। 'मदनेश जी के कुछ शिष्य ऐसे भी थे जिन्होंने मदनेश जी के पास बैठकर उनके कवित्तों को लिखा तथा उन्हें कण्ठस्थ कर अन्य लोगों को सुना

का काय किया। उस समय जबकि सिनेमा आदि प्रचलित नही थे, लोग इन कवियो क मचो, सैरो गजलो, कुण्डलिया समस्या पूर्ति के छन्दों तथा नायक-नायिका भेद वणन आदि से ही अपना मनोरजन कर लिया करते थे। इस दृष्टि स उस समय क कवि दगला तथा फडबाजिया का विशेष महत्वपूर्ण स्थान था।

मदनेश जी ने अपने शिष्यो को श्रृगार सम्बन्धी कवितायें भी सिखाई थीं। एक सस्मरण इस प्रकार है– मदनेश जी के एक शिष्य दीपचन्द ढरिया न एक बठक मे श्रृगारी कविता सुनाई। इस पर दीपचन्द के पिताजी बहुत बिगडे और मदनश जी को फटकारते हुए कहन लगे कि इस प्रकार की श्रृगार भरी कविता करके क्या लडको का सत्यानाश कर रहे हैं। मदनेश' जी ने कहा– 'कछू जानों न समझो, लरकन के लाने अब सिंगारई ठीक है इन का अबईसें बाबा बनाउने ?' तुम सीखन कैं सुनन होय तो आ जओ। श्री मदनेश जी को दिया गया प्रत्युत्तर भी देखने योग्य है चूले मे गए तुमाए कवित्त, माय कवितन कौ का वारन ? बिगार जाव लरकन खो। [57]

जसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि श्रृगार और नायिका भेद जसे काय के साथ मदनेश जी ने राष्ट्रीय उदबोधन के सम्बन्ध म भी कवित्त लिखे। आपने नारी जागरण क क्षेत्र म भारतीय नारी को स्वावलम्बनपूण उद्बोधन अपनी कविता क द्वारा दिया। निम्नाकित छन्द म स्त्रियो को भी विदेशी शासन की अवहेलना के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है–

माता सुता भगिनी हो सुजन सिखावन म,
करक प्रयत्न अब एमा मब जोड दो।
निज कर कात सूत पहरो वसन अग,
दश हित देत क विदेशी वस्त्र छोड दो।
'मदनश' अबला हो प्रबला अगाडी बनो
कपटी विमण्डन को मड सब फोड दो।
चाहती स्वराज जो प कागरेस काज करो
जो ही है इलाज जावो लाज सब तोड दो। [58]

उपयुक्त एक ही छन्द म मदनेश जी न स्त्रियो को पुरुषो क समान दश काय म जुट जान तथा दश की स्वतन्त्रता के लिए आगे बढन का प्रोत्साहन दिया है। गाधीवादी विचारधारा का उक्त छन्द पर पूण प्रभाव है। गाधी जी ने अंग्रेजी शासन क विरोध म जो आन्दोलन चलाया था उसका प्रमुख उद्देश्य विदशी सामान का बहिष्कार भी था। गाधी जी न चरखा चलाकर सूत कातने तथा हाथ का बुना वस्त्र पहनन की शिक्षा दी थी। जिस स्वराज्य क लिए महात्मा गाधी न देश वासियो का आह्वान किया था, मदनश जी न भी अपन छन्द मे समस्त नारी

जहाँ अंग्रेज पाए उतने वहाँ मार डाले गए। सब जगह गदर हो गया अंग्रेज देखने पर भी नहीं मिलता था। कवि का इस आशय का छन्द देखिए—

'अब गदर भयो है सबन ठौर।
अगरेज मिले ढूढे न और॥'[87]

जब झाँसी अंग्रेज विहीन हो गई तो मन्त्रिया और प्रजा ने रानी लक्ष्मीबाई से नेतृत्व करने के लिए कहा। पहले तो रानी ने मना किया पर बाद मे राजी हो गई और उसे पुन झाँसी की गद्दी पर आसीन कर दिया गया। रानी न एक वर्ष तक शान्तिपूर्वक झाँसी का शासन चलाया। रानी ने पुरुष वेष धारण कर घुड़सवारी,शस्त्र चालन,मल्लयुद्ध आदि का अच्छा अभ्यास किया। रानी के शस्त्र कौशल का वर्णन कवि ने निम्न शब्दों म किया है—

'तुपक चलावे मे भई, बाई अधिक प्रवीन।
शब्दवेध घालन लगी, गोली गहव गलीन॥
ल कृपान घाल जब भजत बाज असवार।
लौंग फूल काटन लगी, भूरन म मरदार॥'[88]

आगे कथानक को मोड दिया गया है। कवि ने श्रावण मास के भुजरिया के त्योहार का शृगारपूर्ण वर्णन किया है। झाँसी के बाजारो की गलियो म नख शिख सजी धजी सुदरी स्त्रियो की भीड कोकिल कण्ठी, मन्द गति स चलने वाली नवयुवतियो, के सिर पर रखी हुई भुजरियाँ, सजी धजी दूकानें लोगो की सुख सम्पन्नता का प्रतीक हैं। यहाँ पर कवि ने शरीर के नख से शिख तक के शृंगार का विशद वर्णन किया है, सभी आभूषणो की नामावली का भी वर्णन किया है। इस मेले में आया हुआ नत्थे खाँ, टीकमगढ़ की रानी का दीवान यह सब देखकर अपने मन मे झाँसी को जीतकर टीकमगढ म मिला लेन का विचार करके टीकमगढ़ लौट गया। रानी से विचार विमर्श करने के पश्चात् सभी मित्र राजाओ का युद्ध के न्यौते भेज दिए गए तथा ५० सवारो के साथ वकील को दतियाधिपति विजय बहादुर क पास सहायता की याचना के लिए भेजा। परन्तु महाराजा विजय बहादुर ने वकीलो से यह कहकर इकार कर दिया कि बुन्देला क कुल की एसी आन है कि दिया हुआ दान छीनते नही हैं तथा गाय और ब्राह्मण को सताते नहीं हैं, इस कारण हम झाँसी क विरुद्ध टीकमगढ को सहायता नही दे सकत। तब नत्थे खाँ ने अकेले ही झाँसी पर आक्रमण करन की ठान ली। महारानी लक्ष्मीबाई को जब इस षडयन्त्र का पता लगा तो उन्होने दतिया नरेश स सहायतार्थ विनम्र याचना की। महारानी के दीनता भरे पत्र को पढकर महाराजा के नेत्र आँसुओ स भर गए। उन्होंने सहानुभूति स भरे शब्दो म रानी क लिए समाचार भेजा कि यदि तुम अपन पति का नाम उजागर करना चाहो तो हाथ म कृपाण लकर युद्ध

करो। यदि तुम्हारा पद निवल पड़ता दिखलाई देगा तो मैं मदद करूँगा। दतिया नरेश के इस पत्र के साथ ही प्रथम भाग समाप्त हो गया है। भाग समाप्ति पर पुष्पिका दी गई है।[69]

दूसरे भाग में नत्थे खां की फौज का वर्णन किया गया है। नत्थे खाँ ने रानी लक्ष्मीबाई के पास पुनः झाँसी खाली कर देने की सूचना भेजी, परन्तु रानी ने युद्ध करने की इच्छा प्रगट की, तब नत्थे खां ने क्रोधित होकर झाँसी पर शीघ्र चढ़ाई करने का आदेश दिया। सेना के कूच करते ही अनेक अपशकुन हुए और नत्थे खाँ ने झाँसी में बजाय मऊ की ओर बाग मोड़ दी। मऊ के शासक पाथरकर भाऊ ने रानी लक्ष्मीबाई के पास समाचार भेजा तो रानी ने युद्ध न करने के लिए कहलवा दिया। अन्ततः नत्थे खां ने मऊ को बुरी तरह रौंद डाला, लूटपाट की। मऊ के पश्चात सागर पर आकर चढ़ाई कर दी। करारी वाला वीर बहादुर सिंह सागर के युद्ध में खेत रहा। विजय नत्थे खाँ को मिली। उसकी सेना ने सागर को बुरी तरह लूटा। सागर के पश्चात् जब नत्थे खाँ ने झाँसी की ओर अपनी सेना को कूच करने का आदेश दिया, तभी बहुत से अपशकुन हुए परन्तु नत्थे खां माना नहीं। अपशकुनों का वर्णन करने में मदनेश जी ने परम्परा का ही निर्वाह किया है। इधर नत्थे खाँ की फौज को अपशकुन हो रहे थे तो दूसरी ओर झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई को अनेक शुभ शकुन हो रहे थे जो उनकी भावी विजय के सूचक थे। महारानी लक्ष्मीबाई ने गौरी पूजन किया व शक्ति की उपासना की। एक छन्द में रानी लक्ष्मीबाई के तलवार पूजन का वर्णन किया गया है। रानी लक्ष्मीबाई के सात प्रमुख वीर सरदारों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

तीसरे भाग में झाँसी की सैन्य व्यवस्था, मोर्चेबन्दी आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। प्रत्येक बुर्ज पर तोपें रखवा दी गईं। गोली, गोला और बारूद के ढेर रखवा दिए। सभी खिड़कियाँ बन्द करवा कर स्थान-स्थान पर सैनिक टुकड़ियाँ तैनात कर दी गईं। प्रत्येक बुर्ज पर बीस जवान और प्रत्येक दरवाजे पर सौ जवान तथा प्रत्येक खिड़की पर पचास जवान लगाए गए। किले के कोट की रक्षा में दो हजार सैनिक तैनात कर दिए। झाँसी दुर्ग की सात विशाल तोपों तथा तोपचियों का कवि ने विस्तृत और चमत्कारी वर्णन किया है।

टीकमगढ़ राज्य के दीवान नत्थे खाँ ने रानी लक्ष्मीबाई के पास पंच भेजे। पंचों के पहुँचने पर कवि ने झाँसी के राज्य दरबार का अत्यन्त अलंकृत वर्णन किया है। दरबार में पंचों का सम्मान किया गया। रानी ने नत्थे खाँ से युद्ध करने का समाचार कहलवा दिया। पंचों ने नौटकर कुमर्रा में स्थित नत्थे खाँ को झाँसी का समाचार दिया। कवि ने सभी वर्णनों में झाँसी को परम सबल एवं वैभव सम्पन्न बतलाया है। नत्थे खाँ की सेना यद्यपि संख्या में विशाल थी परन्तु झाँसी

पष्ठम भाग में नत्थे खाँ टहरी झाँसी रानी तथा दतियाधिपति के मध्य पत्रों के गमनागमन का वर्णन है। नत्थे खाँ की फौज के सिपाही उत्साहहीन होकर टीकमगढ़ की ओर भाग गए तो बड़ी मुश्किल में उसने समझा बुझा कर लौटा पाया। पंचों से सलाह करके नत्थे खाँ ने एक पत्र लिढ़ई सरकार के पास ओरछा भेजा जिसमें झाँसी के युद्ध में ओरछे की सेना की पराजय तथा भारी हानि के बारे में लिखा गया। एवं और सेना की माँग की गई थी। झाँसी का जीत लेने की आशा में ओरछे से नत्थे खाँ की सहायता के लिए और सेना भेजी गई, परन्तु पुनः झाँसी के साथ हुए युद्ध में वह भी आधी नष्ट हो गई। तब पुनः नत्थे खाँ ने ओरछे के लिए एक पत्र भेजा, जिसमें और सेना की माँग की गई थी। परन्तु लिढ़ई रानी ने और सेना नहीं भेजी। मन्त्रियों ने लिढ़ई रानी को सलाह दी कि नत्थे खाँ ओरछे की सेना और धन दोनों को नष्ट करने पर तुला हुआ है इसलिए अब शीघ्र झाँसी से युद्ध बन्द करवा दो। जब नत्थे खाँ को रानी की ओर से नकारात्मक उत्तर मिला तो उसने पंचों से मिल कर रानी लिढ़ई की ओर से दतियाधिपति के लिये एक दीनता पूर्ण पत्र लिखा। पंचों ने दतियाधिपति से लिढ़ई रानी की सहायता के लिये बहुत मिन्नत की परन्तु उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। नत्थे खाँ ने फिर भी हठ पूर्वक झाँसी को जीतने का अपना विचार न बदला और पुनः झाँसी के किले के चारों ओर अपनी सेना लगा दी। झाँसी की ओर से इस युद्ध के लिये मधुकर दीवान अपने छः सौ महतरों सहित तैयार हो गये। इस भाग में पुनः एक दो स्थानों पर अस्त्र शस्त्रों आदि की सूचियाँ गिनवाई गई हैं।

सातवें भाग में झाँसी वाली रानी की ओर से मधुकर और जरया वाले रघुनाथ सिंह के नत्थे खाँ की सेना के प्रमुख वीरों के साथ हुए भयंकर युद्ध का वर्णन है। वीरों की सजावट हाथी घोड़े हथियारों आदि के वर्णनों का वही पिष्ट पेषण है परन्तु कवि ने युद्ध की स्वाभाविक स्थिति का जैसा वास्तविक और वीर रसात्मक वर्णन इस भाग में किया है वैसा अन्य किसी कवि की रचना में दुर्लभ है। ऐसा वही कवि वर्णन कर सकता है जो कभी युद्ध के मैदान में ऐसी घटनाओं को भुगत चुका हो। युद्ध वर्णनों में वीरों की एक दूसरे से भिड़न्त, तलवार भाला, बरछी बन्दूक आदि के आघात प्रतिघात आदि का सुन्दर चित्रण किया है। मधुकर, खुदाबख्श, हृदेश कुमार, लछमनसिंह तथा जवाहरसिंह आदि झाँसी के प्रमुख वीरों के वीरगति प्राप्त हो जाने पर जब रानी लक्ष्मीबाई दुखी हुई तो काशीनाथ ने अत्यन्त वीरोचित साहस से उन्हें ढाढस बंधाया और अगले युद्ध का बीड़ा उठाया। रघुनाथ जरयावार ने काशीनाथ से कहा कि अभी आप युद्ध न करें, मेरा युद्ध देखिये। कवि ने रघुनाथ सिंह जरयावार के भीषण युद्ध का बड़ा स्वाभाविक वर्णन किया है। निम्न छन्दों में युद्ध वर्णन देखिये।

देखी मर्द फौज आई निज सैनिकों दबाई,
जब नैक हू न चाई धायो आगे मरदान।
लागो मुंड ढककान, जैसे भुंठन किसान,
सिरनि दारों के समान, मैल रन से चौगान।
भए बिन पगह थावोउ डोलें बिन मत्थ,
गिर गुत्थन सगुत्थन मर्दनमें गही म्यान।
तहां तेज की तमार कर कोप बेसुमार,
वार विचलो जरया झुक झारी किरवान।[76]
दग नत्थ खां दिमान, रघुनाथ सिंह ज्ञान,
खले रण की चौगान, सिंह छौना के समान।

जित गिर जाय बाज, तित पर जनु गाज
जसे पछिले के बाज, मुंह टोरें मरदान।
काऊ आव न नगीच मची शोणित की कीच,
सिरदारन की बीच बीच देख नर हान।
तहां, तेज की तमार, कर कोप बेसुमार,
वीर विचलो जरया झुकथारी किरवान॥[77]

वीर रस के सफल परिपाक के लिये कवि ने युद्ध स्थल में वीरों की स्थितियों दाव पेचों आदि का सुंदर समायोजन किया है।[78] इस भाग के पृष्ठ ६८ के छंद ४० से लेकर पृष्ठ १०१ के छन्द ६३ तक चौबीस छन्दों में कवि ने युद्ध की स्वाभाविक स्थिति का सफल निदर्शन किया है।

आठवें भाग में झांसी और ओरछा की सेनाओं के मध्य, झांसी शहर के बड़ गांव फाटक पर हुए युद्ध का वर्णन है। यह युद्ध इन दोनों सेनाओं के मध्य अंतिम और निर्णायक युद्ध था। पहले तोपों फिर बन्दूकों और अन्त में तलवारों के द्वारा भयंकर युद्ध हुआ। अन्ततः ओड़छे की सेना पराजित हुई जीत झांसी के हाथ लगी। नत्थे खां सैन्य एवं आर्थिक हानि से अत्यंत दुःखित हुआ और कुम्हर्रो में जाकर ठहर गया। एकाएक ओरछा जाने का उसे साहस नहीं हुआ।

इस भाग में भी सातवें भाग की भांति किरवान छन्दों में युद्ध की विकरालता का वर्णन किया गया है। कवि ने वर्णद्वित्व, संयुक्ताक्षर आदि के द्वारा भाषा को चमत्कारपूर्ण बनाया है। इसमें भाषा में क्लिष्टता आ गई है। कथानक का निर्वाह सफलतापूर्वक किया गया है।

आठवें भाग के इस युद्ध के वर्णन के पश्चात् इस रासो की प्रति खण्डित है। इसमें केवल नत्थे खां के साथ हुए युद्धों का ही वर्णन है। अनुमान है कि कवि ने झांसी की रानी और अंग्रेजों के मध्य हुए युद्धों का भी वर्णन अवश्य किया होगा

परन्तु समय माहात्म्य मे अंग्रेजी शासन मे आतंकित हो कवि ने उतना अंश फाडकर नष्ट कर दिया होगा। उपलब्ध अंश को पढकर हम सहज अनुमान लगा सकते हैं कि कवि के द्वारा लिखा गया रानी लक्ष्मीबाई और अंग्रेजो के बीच युद्ध का वर्णन अत्यंत प्रभावशाली, सुन्दर और विस्तृत रहा होगा। सम्भव है नष्ट हुआ अंश उपलब्ध अंश से आकार में कम नहीं रहा होगा।

अंतश्चेतना के प्रेरक तत्व एवं तत्कालीन परिस्थितियाँ

कवि युग दृष्टा होता है अतः उसके काव्य पर युग की बदलती हुई परिस्थितियो, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक घटनावलियो आदि का प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अवश्य पडता है। जो वह देखता है उसमें कल्पना का पुट देकर साहित्य सृजन करता है।

युद्ध के उस युग मे साहित्य निर्माता अपने आश्रयदाताओं का यशोगान करते हुए उन्हें युद्ध के लिए प्रोत्साहन देते थे। राज दरबारो के वैभव और विलास के वर्णन, राजाओं सामन्तो, सरदारो तथा उनके हाथी, घोडों और सेनाओ के वर्णन कवियो ने थोडे बहुत हेर फेर के साथ वैसे ही किए होगे जैसे कि उन्होंने उनके स्वरूप देखे होंगे अथवा सुने होंगे। अतः समय की परिस्थितियो के अनुरूप कवि के मन पर अपने चरित्र नायक के शौर्य आदि गुणो का प्रभाव पडा और उसी के अनुसार प्रशंसा काव्यो की रचना की गई। श्री हरि मोहनलाल श्रीवास्तव अपनी एक पुस्तक के वक्तव्य में लिखते हैं– 'शारीरिक वीरता के ह्रास के साथ खुशामद और चापलूसी के रूप में शाब्दिक वीरता जब बढती गई, तो कभी-कभी सामान्य स्तर की घटनाओं के अतिरंजित वर्णन भी छोटे छोटे 'रासो' ग्रंथो के रूप मे दिखाई दिए।'[7]

अंग्रेजी वैभव विस्तार के युग में जहाँ महाराजा पारीछत अंग्रेजो से मित्रता और सहयोग बढा रहे थे, वहाँ झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजी शासन का डटकर विरोध कर रही थी। दतिया और टीकमगढ़ तथा ग्वालियर के राज्यो के मध्य झाँसी ही एकमात्र अंग्रेजो का विरोधी शत्रु था। झाँसी के तत्कालीन कवियो ने इस प्रकार की परिस्थितियो का अपनी रचनाओ में उल्लेख किया है।

साहित्य जनप्रेरणा का प्रमुख साधन है। लोक की सार्वभौमिक एकता स्थापित करने के लिए कवियो ने प्रत्येक युग मे प्रशंसनीय प्रयास किए हैं, चाहे वह किसी भी रूप मे क्यो न किए गए हो। इन सभी कवियो के काव्य किसी एक चरित्र नायक के चारो ओर केंद्रित हैं और ये काव्य किसी राजा अथवा सामन्त का यशोगान ही क्यों न करते हो पर इनमें भारतीय काव्य की वीरात्मा का चतन्य भली प्रकार प्रकाशित किया गया है।[8] कुछ कवियों ने निर्लोभ होते हुए

राज्याश्रय म न रहकर अपने का य नायक के लोक कल्याणकारी गुणों से प्रेरणा प्राप्त कर ही का य रचना की। लक्ष्मीबाई रासो' के रचयिता प० मदन मोहन द्विवेदी 'मदनेश' झाँसी की जन क्रांति के लगभग दस वष पश्चात् उत्पन्न हुए थे तथा रानी लक्ष्मीबाई और अग्रेजो के मध्य हुए युद्ध के सतालीस वर्ष पश्चात् उहोने लक्ष्मीवाई रासो की रचना की। मदनेश' न तो रानी के समसामयिक थे और न राज्याश्रित। उन्होने तो एक महत् आदश से प्रेरणा लेकर ही काव्य रचना की। इसी प्रकार दतिया राज्य के दरवारी कवि प्रधान कल्याणसिंह कुडरा ने रानी लक्ष्मीवाई के महान आदश स प्रभावित हाकर ही झाँसी को राइसो की रचना की।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि इन कवियों को राजाओ, सामन्तो के वैभव, विलास तथा वीरतापूण कार्यों से काव्य प्रेरणा मिली। धन लोभ मान मर्यादा, आदि का लोभ केवल प्रशसा कार्यो की प्रेरणा का स्रोत रहा। वीर पूजा की भावना, धन लोभ तथा तत्कालीन परिस्थितियो न कवियो को वीर काव्य लिखने की ओर प्रेरित किया।

सन्दर्भ

१ दतिया दशन–स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १३
२ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तामर, प ३०
३ श्रीधर का पारीछत रायसा–श्री हरिमोहन श्रीवास्तव, पृ १२२, छन्द ३७८
४ वही प १२२ छन्द ३७५
५ वही, पृ ६१, छन्द १, २
६ वही प ६३, छन्द १४
७ वही, प ६३, छन्द १४
८ वही पृ ६६, छन्द ३७
९ वही, पृ ६५, ६६ छ ४०, ४१ प ६६ छन्द ४२, ४३, ४५, ४६, ४७
१० वही, प ६७ छ ५० ५१ प ६८ छन्द ५२ से ६३, प ६६, छन्द ६४ से ६७ प ७० छन्द ६८
११ वही प ७६ से ७८ छन्द ११६
१२ वही पृ ८० छ १४०, १४१ पृ ८१ छ १४२
१३ वही, पृ ८१, ८२ छन्द १४४ से १४६
१४ वही, प ८२ छन्द १४७ प ८३ छ १४८ से १५३, प ८४ छ १५४ से १६०, पृ ८५ स १६१ से १६६
१५ वही पृ ८१ छन्द २११
१६ वही पृ ६७, ६८ छ २४३ से २४५
१७ वही, पृ ८८ छन्द २४६
१८ वही, पृ ६६, छ २५६

१६ श्रीधर का पारीछत रायसा–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १०० छ २५७
२० वही, प १०१, छ २६८   २१ प १०६, छद ३१०
२२ वही, पृ १११, छद ३१६   २३ वही, प १११ से ११३ छ ३२०
२४ वही, पृ ११५, ११६ छ ३३२ से ३३७
२५ वही, पृ ११६ से ११७ छद ३४० स ३४२
२६ प ११८, १६६ छ ३५१ से ३५४
२७ वही प ११६ छ ३५५, ३५६ ३५७ ३५८
२८ वही, पृ ११८, छ ३५८   २६ वही, प १२० छ द ३६३
३० बाघाट रायसा (भारतीय साहित्य वष ६ अक्टूबर १८६१ प ६८ बाघाट से दतिया की फौज लगी, सो बाघाइट तीर लई। बडगयाँ हारे गा सब खबरें प्रधान आनदसिह न लिखी। जो विदीवार इसमवार सुन चाहै तो लाला सभासिह न बरनन करी है। सो पोथी उनसे है तामैं लिखी है सो सुन लेइ।' सभासिह कविता बडे आदि छद
३१ 'दतिया त चत्र सुदि १४ सवत् १८७३, अमल स १८७२ ता दिना दतिया से श्री दिमान् दिलीपसिह बु देला किशुनगढ क ते फौज सुध्धा गए सो उनाव डेरा करे। फेर दलीपनगर त वसाख वदि १४ सुक्र कौ प० श्री सिकदार धनसिह गए सो मौजे उनाव मे सब मेल भई।' (बाघाइट कौ राइसौ भारतीय साहित्य वष ६ अक्तूबर १६६१ पृ ८२)
३२ श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा राउराजा पारीछत बहादुर जू देव की फौज बाघाइट कौ गई–चत्र सुदि १४ सवतु १८७३, अमलु सवतु १८७२ की साल म (बाघाइट कौ राइसौ, पृ ८३)
३३ 'श्री महेद्र महाराज नैं तरीचर लेवे कौ मनसूबा करौ (बा रा पृ ८४)
३४ लघुजन हरि के भए राम सौं प्रीत जू।
वदक म परवीन रोगियन दुखु हर ॥
(अरिल्ल छद २, प ८४ बा रा)
३५ बाघाइट रासो, प ८१–सपादक क फुटनाट के अनुसार
३६ वही, प ६१ छद ६०
३७ बाघाट रासो म प्रारम्भ का गद्य भाग प ८२ व ८३, प ८८ छद क्र० २८ के पश्चात् एक पक्ति, प ६७ छद स० ११८ क पश्चात दो पक्तियाँ तथा बा रा के अन्त मे प ८८ म छद स १३१ के पश्चात तीन पक्तियाँ, बुदेली गद्य के सुदर उदाहरण हैं।
३८ बाघाट रासो प ८६ छ द स १६ की दूसरी पक्ति प ८८ छद ३० प ८६ छद ४२

३८ वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ६
४० वही वक्तव्य, पृ ५
४१ वही, प ११
४२ वही प ८
४३ वही पृ ८
४४ वही, पृ ६
४५ वही, प ८
४६ वही, प १३
४७ वही, प २४
४८ वहा, पृ २७
४८ वही, प ३२
५० वही, प २६
५१ वही पृ ३५ ३६
५२ वही प ३६
५३ वही, प ३६
५४ वही प ३६
५५ वही, पृ ४०
५६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ भगवानदास माहौर, भूमिका भाग पृ ४१
५७ वही, पृ ४५
५८ वही, पृ ४३
५६ वही, प ४६
६० वही प ४६ ५०
६१ वही, प ४४
६२ वही प ४४
६३ वही, प ८६
६४ वही, पृ ५१
६५ वही, भाग १, छन्द क्र० १, २ ३ ८,१०, २५ छन्द मे प्रारम्भ का दोहा, छन्द २८ तासरी पक्ति, छन्द ३० दूसरी पंक्ति। द्वितीय भाग छन्द ४, ५वाँ दोहा। सप्तम भाग छन्द क्र० ६ ८, ११ १३, २०-३२, ३४ ३५। अष्टम भाग छन्द ४२ की अंतिम पक्तियाँ एव ४३ से ४५ छन्द की अधिकाश पक्तियाँ।
६६ लक्ष्मीबाई रासो डा० भगवानदास माहौर भाग प्रथम, प १ छन्द ३
६७ वही, प २ छन्द ११ की प्रथम पक्ति
६८ वही प ४ छन्द १६ व १७
६६ वही, पृ ८ 'इति श्री लक्ष्मीबाई रायछे विज बहादुर भूप पत्रागमन नाम प्रथम भाग।'
७० वही, प २० छन्द म १३
७१ वही पृ २८ व ३० छन्द स ४२,४३
७२ वही, भाग ५, पृ ३८
७३ वही, भाग ५, पृ ४०
७४ वही पृ ४०
७५ वही भाग ५, प ४०
७६ वही, भाग ७, पृ ६७, छ ४८
७७ वही, पृ ४६
७८ वही, पृ ६५ छन्द स ४० से लगायत पृ १०१ छन्द स ६३ तक
७६ वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ३
८० लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर भूमिका पृ ७०

अध्याय षष्ठम

कटक ग्रन्थ

परिचय

वीर काव्य में अन्तर्गत रासो ग्रन्थों का प्रमुख स्थान है। आकार की बात इतनी नही है जितनी वर्णन की विशदता की है। छोटे से छोटे आकार से लेकर कई कई "समयो" (अध्यायो) मे समाप्त होने वाले रासो ग्रन्थ हिन्दी साहित्य मे वर्तमान हैं। सबसे भारी भरकम रासो ग्रन्थ जिसने अधिकाश कवियों को रासो लिखने के लिये प्रेरित किया चन्द बरदाई कृत *पृथ्वीराज रासो* है। इससे बहुत छोटे प्राय तीन सौ चार छन्दो म समाप्त होन वाले रासो नामधारी वीर काव्य भी हैं जो किन्ही सर्गों या अध्यायो म भी नही बाँटे गए हैं– ये केवल एक क्रमबद्ध विवरण के रूप म ही लिखे गय हैं।

रासो ग्रन्थों की परम्परा म ही कटक लिखे जाने की शली ने जन्म पाया। कटक नामधारी तीन महत्वपूर्ण काव्य हमारी शोध म प्राप्त हुये हैं। बहुत सम्भव है कि इस ढग के और भी कुछ कटक लिखे गए हो परन्तु वे काल के प्रभाव से बच नहीं सके। कटक नाम के ये काव्य नायक या नायिका के चरित का विशद वर्णन नही करते प्रत्युत किसी एक उल्लेखनीय सग्राम का विवरण प्रस्तुत करते हुए नायक के वीरत्व का बखान करते हैं।[1]

' ऐतिहासिक कालक्रम के अनुसार सर्वप्रथम हम श्री द्विज किशोर विरचित *'पारीछत को कटक'* की चर्चा करना चाहेंगे। ये पारीछत महाराज बुन्देल केशरी छत्रसाल के वश म हुए जतपुर के महाराजा के रूप म इन्होंने सन् १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता सग्राम से बहुत पहले विदेशी शासको से लोहा लेते हुये सराहनीय राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया। *'पारीछत को कटक'* आकार म बहुत छोटा है। यह बेलाताल को साको के नाम से भी प्रसिद्ध है। स्पष्ट है कि इस काव्य म बेला ताल की लडाई का वर्णन है। जतपुर के महाराज पारीछत के व्यक्तित्व और उनके द्वारा प्रदर्शित वीरता के विषय मे निम्नलिखित विवरण पठनीय है–

महाराज छत्रसाल के पुत्र जगतराज जतपुर की गद्दी पर आसीन हुए थे। जगतराज के मझले पुत्र पहाडसिंह की चौथी पीढी म केशरी सिंह के पुत्र महाराज

पारीछत जैतपुर की गद्दी के अधिकारी हुए। इन्ही महाराज पारीछत ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सत्ता के विरुद्ध सन् १८५७ से बहुत पहले विन्ध्यप्रदेश में प्रथम बार स्वाधीनता का बिगुल बजाया।[2] महाराज पारीछत की धमनियों में बुन्देल केसरी महाराज छत्रसाल का रक्त वेग से प्रवाहित हो उठा, और वे यह सहन न कर सके, कि उनके यशस्वी पूर्वज ने अपनी वृद्धावस्था में पेशवा को जो जागीर प्रदान की थी उसे व्यापारियों की एक टोली उनके मराठा भाइयों से छीनकर बुन्देलखण्ड पर अपना अधिकार जमावे। महाराज पारीछत ने कई बार और कई वर्ष तक अंग्रेजों की कम्पनी सरकार को काफी परेशान किया और उन्होंने झल्लाकर उन्हें लुटेरे की संज्ञा दे डाली।

जान सोर एजेन्ट ने मध्यप्रदेश में विजयराघव गढ राज्य के तत्कालीन नरेश ठाकुर प्रागदास को २० जनवरी सन् १८३७ ई० को उर्दू में जो पत्र लिखा उससे विदित होता है कि महाराज पारीछत १८५७ की क्रांति से कम से कम २० वर्ष पूर्व विद्रोह का झण्डा ऊंचा उठा चुके थे।[3] उक्त पत्र के अनुसार ठाकुर प्रागदास ने पारीछत को परास्त करते हुए उन्हें अंग्रेज अधिकारियों को सौंपा, जिसके पुरस्कार स्वरूप उन्हें अंग्रेजों ने तोप और पांच सौ पथरकला के अतिरिक्त पान के लिए बिल्हारी जागीर और जैतपुर का इलाका प्रदान किया।

ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि महाराज पारीछत चुप नहीं बैठे। उन्होंने फिर भी सिर उठाया और इस बार कुछ और भी हैरान किया। उर्दू में एक इश्तहार कचहरी एजेन्सी मुल्क बुन्देलखण्ड मुकाम जबलपुर खास तारीख २७ जनवरी सन् १८५७ ई० पाया जाता है, जिसमें पारीछत, साबिक राजा जैतपुर और उनके हमराही पहलवान सिंह के भी नाम हैं।[4]

उर्दू में ही एक रूपकार कचहरी अर्जेन्टी मुल्के बुन्देलखण्ड इजलास कर्नल विलियम हैनरी स्लीमान साहब अर्जेन्ट नवाब गवर्नर जनरल बहादुर बाके २४ दिसम्बर सन् १८४४ के अनुसार– 'अरसा करीब २ साल तक कम व बेस पारीछत खारिजुल रियासत जैतपुर किया गया। सर व फसाद मचाये रहा और रियाया कम्पनी अंग्रेज बहादुर को सताया किया और बावजूद ताकीदात मुकर्रर सिकरर निस्बत सब रईसों के कुछ उसका तदारुक किसी रईस ने न किया हालांकि बिल तहकीक मालूम हुआ कि उसने रियासत ओरछा में आकर पनाह पाई।[5] इस रूपकार के अनुसार पारीछत के भाईयों में से कुंवर मजबूत सिंह और कुंवर जालिम सिंह की योजना से राजा पारीछत स्वयं अपने साथी पहलवानसिंह समेत हाजिर हो गए। पारीछत की गिरफ्तारी पर दस हजार रुपया और पहलवानसिंह पर पांच हजार रुपया इनाम घोषित किया था। राजा पारीछत को दो हजार रुपया मासिक पेंशन देकर सन् १८४२ में कानपुर निर्वासित कर दिया गया।

कुछ दिना बाद व परमधाम का सिधार गये। उनकी वीरता की अकथ कहानियाँ लोकगीतो क माध्यम म आज भी भली प्रकार सुरक्षित हैं। इन्ही मे 'पारीछत कौ कटक' नामक काव्यमय वणन भी उपलब्ध है।

सन् १८५७ की क्रांति म लखरी (छतरपुर) क दिमान दशपत बुन्देला ने महाराज पारीछत की विधवा महारानी का पक्ष लेकर युद्ध छेड दिया और वे कुछ समय तक के लिये जतपुर लेन म भी सफल हुए। दिमान देशपत की हत्या का बदला लेने के लिए अक्टूबर १८६७ मे उनक भतीजे रघुनार्थासह ने कमर कसी।

"पारीछत कौ कटक' अधिकतर जनवाणी म सुरक्षित रहा। ऐसा जान पडता है कि इसे लिपिबद्ध करने के लिए रियासती जनता परवर्ती ब्रिटिश दबदबे के कारण घबराती रही। लोक रागिनी मे पारीछत के गुणगान के कितने ही छद क्रमश लुप्त होत चल गये हो, तो क्या अचरज है। कवि की वणन शली से प्रकट है कि उसन प्रचलित बुन्देली बोली म नायक की वीरता का सशक्त वणन किया है। महाराज पारीछत क हाथी का वणन करत हुए वह कहता है–

ज्यो पाठे म झरना झरत नइया
त्यो पारीछत कौ हाथी टरत नइया ॥[8]

पाठे का अथ है एक सपाट बडी चट्टान। शुद्ध बुन्देली शब्दावली म नइयाँ' (नहीं है) की मधुरता लेकर कवि ने जो ममता दिखाई है वह सवथा मौलिक है और महाराज पारीछत के हाथी को किसी बुन्देलखण्डी पाठे जसी दृढता स सम्पन्न बतलाती है।

चरित नायक महाराज पारीछत की वीरता और आत्म निर्भरता से शत्रु का दग रह जाना अत्यन्त सरल शब्दावली म निरूपित हुआ है।

'जब थान पडी मर प कोऊ न भओ सगी।
अजट घात जक्का है राजा जो जगी ॥ ९

बुन्देली बोली मे तनिक भी लगाव रखने वाल हिन्दी भाषी सहज म समझ सकग कि पोलिटिकल एजेन्ट का भारतीय करण 'अजट शब्द स हुआ है। जक्का खाना एक बुन्देली मुहावरा है जिसका बहुत मौजू (उपयुक्त) प्रयोग हुआ है–'चकित रह जाना मे कहीं अधिक जार दग रह जाने म माना जा सकता है, परन्तु हमारी समझ मे जक्का खाना म भय और विस्मय की सम्मिलित मात्रा सविशेष है।

पारीछत नरेश म वशगत वीरता का निम्न पक्तियो मे सुन्दर चित्रण हुआ है।

बसत सरसुती कठ म, जस अपजस कवि काह।
छत्रसाल के छत्र की पारीछत प छाह ॥ ९

पारीछत के कटक का निम्नलिखित छन्द वर्णन शैली का भली प्रकार परिचायक है—

'कर कूच जतपुर से वगौरा मे मेले ।
चौगान पकर गय मन्त्र अच्छी खेले ॥
बकसीस भई ज्वानन खाँ पगडी सेले ।
सब राजा दगा दे गय नप न्डे अकेले ॥
कर कुमुक जतपुर प चढ आओ फिरगी ।
हुसयार रहा राजा दुनिया है दुरगी ॥
जब आन परी मिर पै कोऊ न भओ सगी ।
अजन्ट खात जवबा है राजा जो जगी ॥
एक कोन जन्ट गओ, एकवोर जडैल ।
डाग वगौरा की घनी, भागत मिल न गल ॥'[9]

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि 'पारीछत का कटक' का बुन्देली रचनाओ म महत्वपूर्ण स्थान है । ऐतिहासिक दृष्टि स इस रचना का हिन्दी साहित्य म विशिष्ट महत्व है ।

झासी को कटक

दूसरा महत्वपूर्ण कटक भग्गी दाऊजू श्याम कृत झासी को कटक है । भग्गी दाऊजू श्यामी क जनकवि थे जो सन् १८५७ की क्रान्ति क प्रत्यक्षदर्शी थे । स्व० डॉ० वृन्दावन लाल वर्मा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'झासी की रानी म महारानी लक्ष्मीबाई के समकालीन कवियो मे इनका उल्लेख किया है । डा० भगवानदास माहौर ने मदनेश कृत 'लक्ष्मीबाई रासो नामक ग्रन्थ मे इनके सम्बन्ध म विस्तृत प्रकाश डाला है ।[10] भग्गी दाऊ जू एव अखाडिया उस्ताद कवि बताए जाते हैं जो सैरा और मजा जादि क रचयिता क रूप म फडवाजी के लिए विख्यात थे । कहा जाता है कि भग्गी दाऊजू ने रानी लक्ष्मीबाई के विषय म पूरा रायसा लिखा था, परन्तु "रायसा' कहा जाय अथवा उसका छोटा रूप "कटक उसके केवल ४२ छन्द विनाश से बच सके है । जितना कुछ अश एव खण्डित प्रति मे श्री भगवानदास माहौर को उपलब्ध हो सका है उसम तो यह एक 'कटक' ही सिद्ध होता है— 'रायसा" नहीं 'इति कटक सपूर्ण ।[11] पौष सुदी १४ सवत १९५७ मु० मौमी'[12] महारानी क समकालीन इस जनकवि न चार चरण वाले मज छन्द म जितना भी कुछ गेय प्रबन्ध रचा होगा वह रानी लक्ष्मीबाई तथा ओरछा क दीवान नत्थे खाँ क बीच होने वाले युद्ध क तुरन्त बाद रचा गया होगा—

"धन्य प्रताप श्री बाई साव की एसो नाव निकारो ।[13]

इस पंक्ति के पश्चात् यह रचना खण्डित है। सम्भवत बाद की रचना मे कवि ने १८५७ के स्वातन्त्र्य युद्ध का थोड़ा बहुत वर्णन अवश्य किया होगा, परन्तु वह सब लुप्त हो चुका है। 'भग्गी दाऊ जू' के कटक का बहुत कुछ अंश हमारे अनुमान से बहुत समय तक उनके द्वारा अथवा उनके शिष्यों के द्वारा मौखिक रूप से सुनाया जाता रहा होगा। स्मृति में जो कुछ सुरक्षित रह सका, उसे लिपिबद्ध करने का प्रयास उनके बाद ही किसी भक्त द्वारा हुआ है। खेद है कि वह प्रतिलिपि भी केवल खण्डित रूप मे बच पाई। कवि ने झाँसी के वीरों के उत्साह का, महारानी के शौर्य का तथा झाँसी की भूमि के प्रति अपने ममत्व का बहुत ओजपूर्ण वर्णन किया है। अधिकांश छन्दों की समाप्ति का चौथा चरण कवि की भावना का परिचय देते हुए अपने आप मे बहुत कुछ बता देता है—

'जो झाँसी की लटी तकै सुन ताय कालिका खाई।[13]

लटी का अर्थ है अवनति, तकै का अर्थ है देखना छन्द की मात्रा के विचार में सुन शब्द का प्रयोग हुआ है। इस प्रकार कवि की घोषणा है कि जो भी कोई झाँसी की अवनति देखना या सुनना चाहेगा, उसे कालिका खायेगी अर्थात वह जगदम्बा का कोप भाजन होगा।

'कटक' मे झाँसी के बसाये जाने का भी उल्लेख कवि ने बड़े स्वाभिमान से किया है—

"जा झाँसी सिव राव हरी की अतिशुभ घरी बसाई।[14]

अर्थात् झाँसी को शिव राव हरी नवालकर नाम के एक मराठा सरदार ने बसाया था।

नत्थे खाँ द्वारा सागर पर अधिकार करने के कारण पर भग्गी दाऊ जू इस प्रकार प्रकाश डालते है—

'निमक हराम बदल गए जासें तास सागर पाई।[15]

अर्थात सागर के कुछ नमक हराम सरदारों के विश्वासघात करने के कारण नत्थे खाँ को सागर पर विजय प्राप्त हुई।

कटक ग्रंथ मे झाँसी के प्रमुख सरदारों की वीरता का कवि ने अत्यन्त ओजपूर्ण वर्णन किया है। अपने पक्ष की बढ़ती तथा शत्रु पक्ष की दीनता का निम्न पंक्तियों में वर्णन देखने योग्य है—

'इत चन दिन रन ज्वान सब खात मान मिठाई।
उत खपरियन म लयैं महुआ भूंजत फिर सिपाई।।[16]

इस कटक मे युद्ध क्षेत्र की संक्षिप्त सी मारकाट का वर्णन है एवं वीभत्स चित्रणों का भी प्राय अभाव ही है। फिर भी सम्पूर्ण रचना ओज से पूर्ण है।

।। 'भिलसाय कौ कटक' अन्य कटक ग्रन्थो की अपेक्षा आकार म कुछ बडा है। इन कवियो की ये रचनायें अधिकतर लोगो के द्वारा सुनी सुनाई जाकर, केवल कण्ठ पर विद्यमान रहीं। बहुत पीछे उनका सकलन किया गया। यही कारण है कि बहुत कम रचनायें अपने मूल रूप मे उपलब्ध हो सकी हैं। अजयगढ के नरेश रणजोर सिंह ने भिलसाय कौ कटक अपनी एक पुस्तक मे परिशिष्ट म मुद्रित कराते हुए उसे भली प्रकार सुरक्षित कर दिया है।

'भिलसाय कौ कटक' म बुन्देलो और बघेलो की पारस्परिक शत्रुता का वणन किया गया है। इसमे कुटरा नामक स्थान पर हुए युद्ध का वणन है तथा कवि ने अर्जुनसिंह दीवान की आज्ञा से इस युद्ध का विवरण लिपिबद्ध किया, जैसा कि प्रस्तुत कटक के एक छन्द से ज्ञात होता है–

सुकवि सो भरोलाल को–हुकुम दियो सुख पाय।
कुटरे को सग्राम यह–कहै विचित्र बनाय॥
अर्जुन सिंह दिमान की, सुन आयसु अनुकूल,
वीर बुन्देल बघेल कर, सुयश कहौ सुख मूल॥'

भिलसाय कौ कटक म अजय गढ क दीवान केशरी सिंह और बाघेल वीर रणमतसिंह के युद्ध का वणन किया गया है। बाबा रणमतसिंह बघेलखण्ड क्षेत्र क माने हुए क्रान्तिकारी थे। य कोठी, जिला सतना के निकटवर्ती एक ग्राम मनकहरी के रहने वाल थे, जहाँ इनकी गढी का ध्वस आज भी विद्यमान है। सन् १८५७ क प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता सग्राम म इन्होन अत्यन्त नृशसतापूवक अग्रेजो का वध किया था। जब ब्रिटिश सरकार ने इनके द्वारा किये जाने वाले अत्याचारो का उत्तरदायित्व रीवा महाराज पर डाला तो वहाँ के दीवान दीनबन्धु न इन्हें आत्म समपण के लिए बाध्य कर दिया था। बाबा रणमतसिंह और उनके कतिपय साथियों को ब्रिटिश सरकार ने प्राण दण्ड दिया था। अजयगढ के बुन्देली राज्य स रणमत सिंह की लडाई काव्य के अन्तर्साक्ष्य के अनुसार इन्ही दिनो की है। भिलसाय कौ कटक मे युद्ध तिथि एक छन्द मे निम्न प्रकार दी हुई है–

'सवत् उन्नीस स सुनौ–शुभ चौदह् की साल।
कुटरे के मदान म ऐसौ बीतौ हाल॥

अर्थात यह युद्ध सवत् १८१४ विक्रमी तदनुसार सन् १८५७ ई० मे कुटर के मैदान म हुआ था। इस लडाई म जीत अजयगढ की हा हुई थी। बाद मे अग्रेजों ने भी बाघेल वीर रणमतसिंह को दण्ड दिया था। वतमान म बाबा रणमतसिंह को बघेलखण्ड क्षेत्र मे एक महान स्वतन्त्रता मनानी के रूप म स्मरण किया जाता है।

भिलसाय कौ कटक मे कवि द्वारा अजयगढ की सेना तथा रणमतसिंह की सेना, दोनो का ही वणन किया गया है, पर अजयगढ की सेना की कुछ अधिक प्रशसा की गई है। इस रचना मे युद्धस्थल की मारकाट के वणनो का साधारण रूप ही देखने को मिलता है। फिर भी कवि ने प्रमुख सरदारो और सामतो के नामा का विवरण दिया ही है। सेना प्रयाण के समय ललकारते हुए, उत्साह भरे वीरा से युक्त सेना का वणन निम्न छद म देखिये--

'कर शोर महा घनघोर घनो ललकार परी अलबलन की।
भर बाह तिवालन भालन सौं बगमेल चली हटहेलन की।
भट हाकत हूकत हूलत सूलत रूलन रेल सकेलन की।
रणधीर बुदेल अधीर भए, लख धावन वीर बघेलन की॥

उपयु क्त छद मे अतिम पक्ति म कवि न बघेला वीरों की भी प्रशसा कर दी है। ऐस वणनो की इस रचना म कमी नहीं है।

भिलसाय कौ कटक भाषा प्रयोग एव छद विधान की दृष्टियो से, पारीछत कौ कटक तथा 'झासी कौ कटक की अपेक्षा उत्कृष्ट रचना है। रचना को और अधिक विस्तार देकर कवि इसे एक रासो का रूप भी दे सकता था। पारीछत कौ कटक तथा 'झाँसी कौ कटक जन गीतात्मक शैली म लिखे गए काव्य हैं परत 'भिलसाय कौ कटक' म दोहा, कवित्त, छप्पय कुण्डलियाँ, घनाक्षरी, सवया सोरठा तथा मज आदि छद प्रयुक्त किए गए हैं तथा इस इतिवृत्तात्मक शैली म लिखा गया है। निष्कष रूप म कहा जाता है कि 'भिलसाय कौ कटक ऐतिहासिक एव साहित्यिक महत्व की रचना है।

सदभ

१ जतपुर के महाराज पारीछत--श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, विंध्य भूमि, वष २, अक ३, शरद २०११, प ३२
२ वही, पृ ३३
३ वही प ३३
४ वही, पृ ३३
५ वही, पृ ३३
६ वही पृ ३३
७ वही, पृ ३२
८ वही, पृ ३४
९ वही, पृ ३४
१० लक्ष्मीबाई रासो--स डा० भगवानदास माहौर, भूमिका, प १६ से १८
११ वही, परिशिष्ट २, पृ १२५
१२ वही, परिशिष्ट २ प १२५
१३ वही, पृ १२०
१४ वही परिशिष्ट २, पृ १२०
१५ वही, पृ १२१
१६ वही पृ १२२
१७ बुदेल वैभव भाग २, श्री गौरीशकर द्विवेदी, 'शकर पृ ५०३, ५०४
१८ वही पृ ५०३, ५०४

अध्याय सप्तम

हास्य रासो

परिचय

रासो काव्यों का प्रमुख उद्देश्य है समर भूमि में चरित्र-नायक के शौय का उच्चतम निदशन। उनका प्रमुख लक्षण है नायक द्वारा शत्रु को पराजित करने के प्रयासों के साथ युद्ध भूमि में स्वय भी जाना। परन्तु हास्य रासो मे दुखान्त न होकर सुखान्त ही होते हैं। वीरता के जोशीले वणन सुनते सुनाते हुए बुन्देली रसज्ञों मे ऐसा अनूठा जोश उमडा कि उन्होंने असम्भव को सम्भव कर दिखाया। रामायण की लोकप्रियता से रीझ कर जिस प्रकार लोगों ने मनोरंजन के लिए कुछ विशेष चौपाइयों की परौडी के द्वारा गडबड रामायण की सृष्टि की, उसी प्रकार बुन्देलखण्ड में कुछ थोडे से रचनाकारों ने हास्य रासो के रूप में एक नवीनता की सृष्टि की। आचार्यों ने वीर रस और हास्य रस के बीच प्रबल विरोध माना है, परन्तु हास्य रासो में दोनों में समन्वय का प्रयत्न किया गया है। उत्साह यदि धमनियों में रक्त का संचार बढा सकता है तो हास्य समस्त जीवन का पौष्टिक है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी हास्य जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। कोई भी व्यक्ति कभी भी चिन्तित अवस्था में क्यो न हो, हास्य का पुट अवश्य ही कुछ समय के लिये उसे अपना दुःख भुलाकर प्रसन्नता प्रदान करता है। इसी महत्वपूर्ण उद्देश्य की पूर्ति के लिये संस्कृत नाटकों में विदूषक नाम के एक पात्र की योजना की गई है। इसके अतिरिक्त बडे बडे महाकाव्यो नाटको, उपन्यासो व चलचित्रों आदि मे बीच बीच में हास्य का भी थोडा बहुत विधान ऊब हुए पाठकों व दर्शकों के मन को ताजगी व शक्ति देने के लिए किया गया है। मानसिक थकान के साथ साथ शारीरिक थकान को भी दूर करने में हास्य रस का अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

बुन्देली बोली में लिखे गये छोटे बडे तीन हास्य रासो उपलब्ध हुए हैं। छछूंदर रायसा, गाडर रायसा एवं घूस रायसा। यह रासो ग्रन्थ हास्य रस के सुन्दर परिपाक से युक्त किसी सरस कथानक के साथ रचे गये हैं।

इन बुन्देली प्रतीक रचनाओं में बुन्देली कवियों द्वारा 'वीरता' और "हास्य" का अद्भुत समन्वय बडी मौलिक सूझ बूझ के साथ किया गया है। इनके सम्बन्ध

म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव लिखते हैं– 'विरोधों को चुनौती देते हुए बुन्देली कवियों ने पिछले समय में 'छछूंदर रायसो, गाडर रायसो और घूस रायसो नामक कृतियों द्वारा मौलिक सूझ-बूझ का परिचय दिया।[1] वह वीरता का युग था। सर्वत्र वीरतापूर्ण कार्यों की चर्चा एवं आम जन भावना बन गई थी। आधुनिक फैशन की भांति उस युग में शौर्य वर्णन भी एक आम फैशन की तरह हो गया था।

हास्य रासो ग्रन्थों में जो प्रतीक अपनाये गये हैं और जिस प्रकार के कथानक की सृष्टि की गई है उसमें वास्तव का उपहास भले होता है, पर प्रबुद्ध वर्ग के लिए वे स्वस्थ मनोरंजन हैं एवं रासो काव्य रचना प्रियता के स्पष्ट प्रमाण भी हैं। उपलब्ध रासो काव्यों पर पृथक पृथक विवेचन निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है–

छछूंदर रायसा

छछूंदर रायसा आकार में बहुत ही छोटा है। इस रचना ने लगभग ७८ छन्द ही उपलब्ध हैं जिनमें इसका कथानक पूर्ण हो गया है। छछूंदर एक घृणा पैदा करने वाला प्राणी है जो एक विशेष प्रकार की दुर्गन्ध छोड़ता है। इस व्यंग्य रचना में एक लोकोक्ति "भई गति सांप छछूंदर केरी।" को आधार माना गया है। छछूंदर की यह विशेषता है कि यदि सांप उसे निगल ले तो या तो वह अन्धा हो जाता है अथवा मर जाता है तो दांतों की विशेष बनावट के कारण छछूंदर को बाहर उगल नहीं सकता एवं प्राण हानि के भय से वह उसे निगलना भी नहीं चाहता ऐसा परिस्थिति में फंसे सांप की गति को समान परिस्थितियों में फंसे व्यक्ति की तुलना में प्रतीक माना जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने इस लोकोक्ति को अपने रामचरित मानस में द्विविधा की स्थिति में फंसी कौशिल्या के लिये प्रयुक्त किया है। तुलसी के शब्दों में–

> "धरम सनेह उभय मति घेरा। भइ गति साँप छछूंदर केरी।
> राखउ सुतहि करउ अनुरोधू। धरम जाइ अरु बंधु विरोधू॥[2]

धर्म और स्नेह के बीच कौशिल्या की बुद्धि घिरा हुई थी और उनकी दशा साँप छछूंदर जसी हो रही थी। यदि वे हठपूर्वक राम को वन जाने से रोक लेती तो धर्म चला जाता और भाइयों में विरोध होता और यदि वे उन्हें वन जाने के लिए कहतीं तो इसमें बड़ी हानि थी। यह स्थिति बड़े धर्म संकट की थी। अतः साँप छछूंदर की गति वाली कहावत धर्म संकट की स्थिति के लिए ही उपयुक्त प्रतीत होती है।

'छछूंदर रायसा' में भी छछूंदर एक ऐसे विजातीय किन्तु शक्ति सम्पन्न सामन्त अथवा सरदार का प्रतीक होता है जो किसी गढ़ में सुरक्षित होकर रह

गया था किन्तु अपनी कुटिलता की विषाक्त गन्ध से शासक वर्ग को प्रभावित करता रहता था। पर यहाँ इस रायसे के प्रारम्भ की पंक्तियों से विदित होता है कि छछूंदर कुए में गिर पड़ी उसे बाहर कौन निकाले? किसकी भुजाओं में इतनी शक्ति है?

"गिरी छछूंदर कूप में भयौ चहूं दिसि सोर।
जो बाहर काढ़ कुआ को है भुजबल जोर॥"[3]

धमपाल नामक व्याल छछूंदर से युद्ध करने को तैयार होता है। यहाँ पर धमपाल साँप के स्वभाव वाले किसी व्यक्ति का प्रतीक है। छछूंदर कुए में गिरे तो यह स्पष्ट ही है कि वह पानी में भीग जायगी तथा यह चूहे की तरह का ही प्राणी है अतः पानी में गिरते ही शक्ति हीन हो जाता है जबकि सर्प पानी में भी शक्ति सम्पन्न रहता है। इस प्रकार सर्प के स्वभाव वाले किसी सामन्त द्वारा कुए में पड़ी हुई अशक्त छछूंदर के समान किसी दूसरे सरदार पर विजय पा लेने के प्रसंग पर छछूंदर रायसा तीव्र व्यंग्य है। झूठी प्रशंसा के युग में जब कविता भाजी रोटी हो गई थी उस समय में इन हास्य रचनाओं के रचनाकारों द्वारा उन कवियों और कपाल शासकों पर कठोर व्यंग्य है।

युद्धस्थल में दो वीरों के युद्ध के साथी भी होते हैं। छछूंदर रायसे में साँप और छछूंदर के मध्य हुए युद्ध के गवाह मेढक और ककड़े हैं। कुए में पड़ा हुआ मेढक— कूप मण्डूक विवेकहीनता या सीमित ज्ञान के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है। इस व्यंग्य रचना में भी कवि का यही दृष्टिकोण प्रतीत होता है। अर्थात् साँप और छछूंदर के स्वभाव वाले दो शासकों के इस युद्ध के साक्षी विवेक रहित या अल्पज्ञ व्यक्ति ही रहे होंगे।

छछूंदर पर विजय प्राप्त करके धमपाल व्याल कुए से बाहर निकला तो सारे जहान में यह समाचार फैल गया। उस समय धमपाल की स्थिति काली नाग को नाथ कर यमुना से बाहर निकले कृष्ण के समान थी। रासो की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

"धरम पाल बाहर कढ़ो जानी सकल जहान।
ज्यों काली कौ नाथ कें, बाहिर आयौ कान॥"[4]

परन्तु उपर्युक्त पंक्तियों में भी विजेता के ऊपर तीक्ष्ण व्यंग्य है। छछूंदर के समान दुर्बल धन बल वैभव रहित किसी छोटे मोटे सामंत को विजित कर लेने पर धमपाल व्याल के प्रतीक व्यक्ति के किसी खुशामदी कवि द्वारा उसकी विजय का अत्यन्त अतिरंजित वर्णन किया गया होगा। यहाँ इस रचना में धमपाल का अपना धर्म पालन करने अर्थात् छछूंदर के ऊपर विजय प्राप्त करने में श्रीकृष्ण तथा छछूंदर को काली नाग की उपमा देने में रचनाकार का झूठा विरद ढोने

वाले किसी व्यक्ति के ऊपर करारा व्यग्य है। सम्पूर्ण उक्ति अभिधा मे न होकर शुद्ध व्यजना म है।

छछ दर रायस के रचनाकार के जीवन वत्त एव उसकी जाति पाति के विषय म बहुत प्रयास किए जाने पर भी कुछ पता नही चल सका। परन्तु धमपाल नामक कवि ने कल्पित व्याल को प्रधान वश का बली बताया जाना सुरुचि का परिचायक नही है।[8] यहाँ बुन्देलखण्ड म प्रधान वश का आशय कायस्थ जाति से ग्रहण किया जाता है, और पिछल समय म कायस्थ प्रतीक रहा है अधिकारी वग का जन साधारण को अधिकारी वग स सामान्यत एक खीश रही है। बहुत सम्भव है कि रचनाकार को राज्य शासन से कुछ विशेष चिढ रही हो।

गाडर रायसा

छछून्दर रायसा' के पश्चात हास्य रासो क्रम म 'गाडर रायसा' है। बुन्देली बोली म 'गाडर" शब्द 'भेड के लिय प्रयोग किया जाता है। भेड एक नितान्त कायर, शक्ति हीन और अहिंसक पशु होता है। तथा यह समूहगामी प्राणी भी है। भेड की इसी प्रवृत्ति को लेकर 'भेडियाधसान' मुहावरा बना।

'गाडर रायसा एक व्यग्यात्मक हास्य रचना है। रचनाकार का मूल उद्देश्य बुन्देलखण्ड के किसी बनिया स्वभाव वाल ठाकुर पर व्यग्य करना है। प्रारम्भ स लेकर अन्त तक सम्पूर्ण कथानक व्यग्य स पूण है। "गाडर' किसी शक्तिहीन साम त का प्रतीक है तथा बनिया निबल ठाकुरो का प्रतीक है जो अपनी मिथ्या प्रशसा मे आदी हो चुके थे। एस ठाकुरो को यहाँ बु देलखण्ड म बनिया ठाकुर कहा जाता था। जाति शूर होन का उन्हे कोरा ही दभ था पर सचमुच वे बनिया जाति की भाँति कायर थे। इस रायसा मे वश्य जाति के जो आस्पद चुने गए हैं उनका भी एक विशेष अथ है, 'गाडर' के विरुद्ध बनिया की जो फौज तैयार हुई उसम मोर कीसी सजगता व तीक्ष्णता वाले 'मोर, बिलया जसी चालाकी वाले 'बिलया नाहर जसी शक्ति के प्रतीक 'नाहर' तथा इसी भाँति गधी, नगरिया आदि विशिष्ट वग के वश्य थ। य सभी वश्य जातिया ठाकुरो की विशेष उपजातियो पर व्यग्य हैं। वीरता क्षत्रियों का स्वाभाविक गुण माना जा सकता है पर नाम और जाति स भी वीरता का बाना धारण करते हुए कायरता दिखलान वाल ठाकुर को यहाँ व्यग्य का विषय बनाया गया है।

श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव इस कोरा हास्य एव मात्र मनोरजन मानते हैं। इनका मत है– हमारा तो विश्वास यही है कि वीरता जसे किसी भी सद्गुण पर किसी जाति उपजाति का एकाधिकार नही। परन्तु वैश्यो की व्यवसायिक शातिप्रियता का किसी अज्ञात पुराने कवि न मखौल उडाने के लिय ही उनके द्वारा इस प्रकार युद्ध का रूपक रच डाला है, जो मात्र मनोरजन के नाते क्षम्य है।[9]

'गाडर रायसा' को "मजाकिया रायसा" कहा जाना भी उपयुक्त नहीं है, जैसा कि श्री हरिमोहन लाल जी ने लिखा है।[7] और न यह मखौल उडान के लिये लिखा गया मनोरजन काव्य है। बुन्देलखण्ड के इतिहास म अवश्य ही ऐसी कोई घटना घटित हुई होगी, जिसमे किसी भेड जस शक्तिहीन सामन्त ने बनिया जसे निबल और डरपोक ठाकुरा पर आक्रमण किया हो और उन बनिया ठाकुरों न उससे टक्कर लेन के लिए अपनी सना इकट्ठी की हो, परन्तु फिर भी पराजय हाथ लगी हो और डाड चुकाना पड गया हो।

गाडर रायसा म बनिया ठाकुरो की वीरता एव सना का जो चित्रण कवि द्वारा किया गया है, वह इस प्रकार है—

> जह कौन की है बात उठ 'सेर मारे प्रात।
> लीनी सवारी वेस ओढ चिलता खेस॥
> जुर चले राजक सेन कामी कहै जव वन।
> अब खबर ले उमगाइ हुन नाउअ पठवाइ॥"[8]

भला बनिया ठाकुर प्रात काल उठकर शेर मार सकता है उपयुक्त पक्तिया म व्यग्यात्मक दष्टिकोण है। गाडर जसे निरीह प्राणी के लिए ऐस ऐसे व्यक्तियो का सेना सजाकर जाना जो घर मारन की शक्ति रखत हो। एस लाग भी लडने की योजना पर घर के कोन म बठकर काना फूसी करें। ठाकुर और चाकर 'सब एक स्वरूप' दिखलाई पडत हैं। अथात वश्य वग की पोशाक लगभग उस जमाने म एक सी ही हुआ करती थी। नीच लिखी पक्तिया म यह विवरण दखिय।

रासा मे एक स्थान पर कवि न बगली कतया पाग या पगडी, तथा धाती आदि वस्त्रो की चर्चा भी की है।[9] बगली व कनया नाम का ढीला ढाला कुर्ता आमतौर पर बुन्देलखण्ड म बनिया द्वारा पहना जाता था।

> ठाकुर चाकर चीन न पर एक रूप पनमगुर कर।
> लरव की मसलत सब घर, काना फूसी बठे कर॥[10]

इस प्रकार लडन का कोरा दभ रखन वाल झूठा प्रशसा करन वाल कायर और सामर्थ्यहीन लोग ही कोन म बठकर कानाफूसी करन वाल होत हैं। जब य बनिया ठाकुर गाडर म युद्ध के लिए प्रस्थान करा हैं तब कुजा नाम की स्त्री भूमियाँ नामक स्थानीय दवता स प्राथना करती है, कि जब साहु (बनिया ठाकर) जीत कर घर आवेंगे तो गुरया का राट चढ़ाऊगी गा-बजाकर सती का पूजा करूगी, आसा की पूजा उसारकर रख दू गी।[11] इस प्रकार अपन गुरु के चरणा की वन्दना करके परनया नामक व्यक्ति के नायकत्व म बनिया ठाकुरा की वह सना जब गरजती हुई 'गाडर' की तरफ जाती है, तब तक विधना

(भेडिया) गाडर पर हमला कर देते है। "विघना यहाँ तीसरे किसी अधिक शक्ति सम्पन्न सामन्त का प्रतीक है, जिसके अचानक आक्रमण से "गाडर' के प्रतीक सामन्त मैदान छोडकर भाग निकलते है। इस स्थिति को बनिया ठाकुर अपने ऊपर गाडरो का हमला समझ बठे और घबडा कर इधर उधर भागन लगे। "गाडर रायसा' म इस स्थिति का वणन निम्न पक्तियो मे देखिए–

"सरकत चले बानिया जबै,
सरकौआ दृग मूदे तब।
जौ लौ विघना परै बजाई,
गाडर रा भाग अकुलाई।
झपट गई भरका की गैल,
परी बानियन के दल ऐल॥'[12]

गाडर तो विघना के डर से भाग रही थी पर बनियो के समूह म खलबली मच गई। गाडरों ने तो मनुष्य समझकर सहारे की कामना से बनिया ठाकुरो का सामीप्य पकडा था।

मानस जान आसरो लयौ।
बनियन पसर जान भगदयौ॥"

परन्तु य बनिया ठाकुर इतने भीरू थे कि स्वय भी इतने भयभीत हो गये कि व कुए म गिर पडे और 'विघना' के डर से 'गाडर' भी ऊपर से गिर पडी। कुए म पडे हुए बनिया ठाकुरो की दयनाय दशा का कवि ने बहुत ही राचक चित्रण किया है।

'लख कासी रोवन जब लागौ,
वचौ कुआ न इनप भागौ।
हाथ जोर जब ही विघियाई,
आज न वा दल के हम आई॥"[13]

उपयुक्त पक्तियो म बनिया ठाकुर गाडर से प्रार्थना करता है कि मुझे वचने दो मैं उस दल का नही हू। यहाँ उस दल से अभिप्राय गाडर मे युद्ध करने भाई बनिया ठाकुरो की सेना स है।

गाडर कुए क जल म स्वय भयभीत होकर तर रही थी और बनिया ठाकुर करणा कर के उसके परो पर गिर रहा था तभी–

चरन छुवत गाडर सिर चढी,
विनवत करना करके बडी॥'[14]

गाडर बनिया ठाकुर के सिर पर चढ गई और वह अपने पुत्र की सौगन्ध खाकर पुन कहने लगा कि मैं उस दल का नही हू। इन पक्तियो मे कायरता की

पराकाष्ठा है। वह 'गाडर राय से दण्ड भरने के लिए कहता है। तब गडरिया आकर रस्सा का फँदा बनाकर गाडर का कुएँ से निकाल लेता है तथा बनिया ठाकुरों को निकाल देता है। बहुत पुराने समय से ही बुन्देलखण्ड के राज्यों में दण्ड भरा या चौथ वसूल करने की प्रथा विद्यमान थी। पराजित शासक विजेता राजा को चौथ देना स्वीकार कर संधि कर लेता था और एक दूसरे के सहयोगी हो जाते थे। गाडर रायसा' में भी कवि ने ऐसा ही वर्णन उपस्थित किया है। कवि के द्वारा दिया गया विवरण निम्न प्रकार है–

'घर ते ले रुपया जब ल्यय,
मिलो बेग परताई लय।
नजर मिलक मक्ही विधि करी
हिय भक्ति गाडर की परी
करी खातरी अधिक जब बसौ खुसी सो जाइ।
पटी हमारी में बसौ, खाखर लेउ बनाय॥[18]

गाडर रायसा विशुद्ध बुन्देली बोली में लिखा गया है। लिपिकारों ने अज्ञानतावश इस रचना के कुछ शब्दों में मनमाना हेर फेर कर लिए हैं जिनकी पाठ शुद्धि आवश्यक है। उदाहरण के लिए दगली' शब्द अशुद्ध है इसके स्थान पर 'बगली' शब्द होना चाहिए जिसका अर्थ एक वस्त्र विशेष से है जो पुराने लोग 'कनया नाम' के वस्त्र की तरह प्रयोग करते थे। इसी तरह दहुडा का दहोडा (गहरा भरा हुआ पानी का स्थान), ग्राजियो का बानियो (बनिया का बहुवचन क्योंकि बुन्देली में बाजियों' कोई शब्द नहीं है,) होना चाहिए। एक शब्द धूका जिसका अर्थ श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव ने 'धक्का से लिया है, जबकि यह शब्द विशुद्ध बुन्देली की बोली का है और इसका अर्थ एक जोरदार आवाज है, जो गडरिया लोग प्रायः भेड़ों को हाँकने के लिए प्रयोग करते हैं। ठेठ बुन्देली के कुछ शब्द सरसता और माधुर्य के साथ कवि द्वारा औचित्यपूर्ण ढंग से प्रयुक्त किए हैं, जैसे– खेसन के टूका हो गए अर्थात् खेस नामक वस्त्रों के टुकडे टुकडे हो गए। 'खेस बिल्कुल ग्रामीण बोली का शब्द है। इसी प्रकार सरकौआ (सरकते हुए) 'रिंगचल' (चल दिए), 'भरका (बीहड में टीलो के बीच की ऊबड खाबड ऊँची नीची जगह) 'आसरी (सहारा) पसर आदि शब्द हैं, जो बडी स्वाभाविकता के साथ प्रयुक्त हुए हैं।

घूस रायसा

गाडर रायसा के पश्चात घूस रायसा भी बुन्देली की एक व्यंग्य कृति ही है। इसके रचनाकार के विषय में कुछ भी विवरण उपलब्ध नहीं हो सका है, पर रासो की एक पंक्ति 'को बरने पृथीराज कहि, फिरक निकमी घूस'[19] के अनुसार

'पृथीराज' को इसका कवि माना जाना चाहिए। यह किसी कवि द्वारा धारण किया हुआ कल्पित नाम भी हो सकता है। इस सम्बन्ध में श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव का मत निम्नानुसार है– "यह 'घूस रायसा' पिछले समय में लिखे गए गाडर रायसा के कवि की एक अन्य रचना है जिसमें कुंजो नामक बुन्देलखण्डी स्त्री और कासी नामक सेठ के प्रतापी पूत परतया के शौर्य का ही वर्णन है, इस कवि का असली नाम तो हम विदित नहीं हो सका, परन्तु उसने 'रासो काव्य' को मजाक का विषय बनाते हुए 'पृथीराज' का कल्पित नाम भी धारण कर रखा था।"[11] परन्तु 'घूस रायसा' गाडर रायसा के कवि की अन्य रचना होने में सन्देह है क्योंकि एक तो गाडर रायसा में कवि के कल्पित नाम 'पृथीराज' का कहीं उल्लेख नहीं पाया जाता, दूसरे भाषा एवं छन्द शैली में भी दोनों रचनाओं में पर्याप्त अन्तर है। गाडर रायसा तथा घूस रायसा एक ही काल में लिखी गई रचनायें तो हो सकती हैं, पर यह दोनों एक ही कवि की दो रचनायें नहीं सकती। दोनों कृतियों में पात्रों के नाम के साम्य के कारण ही श्री हरिमोहन लाल ने इन्हें एक ही कवि के द्वारा लिखी गई माना है पर एक कवि के द्वारा चुने गए नामों को किसी अन्य कवि द्वारा भी तो अपनाया जाना सम्भव है।

घूस रायसा भी छोटी रचना ही है। इसमें कुल ३१ छन्द हैं। घूस चूहे के आकार का एक बड़ा जन्तु होता है। घूस के विकराल स्वरूप व उसके उत्पातों का वर्णन करके, कुंजा नाम की स्त्री और परताइ नामक वश्य का जो कथानक इसके साथ जोड़ा गया है, उसमें हास्य की अपेक्षा व्यंग्य ही अधिक है। उस युग में जबकि हर आम व खास में युद्ध व युद्ध की चर्चायें मानव जीवन का प्रमुख अंग थीं प्रत्येक सामन्त सरदार अथवा क्षत्रिय को युद्ध लड़ने ही पड़ते थे। युद्धों में मारकाट की भयंकरता कायरों को युद्ध क्षेत्र से भागने के लिए विवश कर देती थी, क्योंकि सभी क्षत्रिय शूर सपूत नहीं होते थे। बहुत से कायर सरदारों के युद्ध छोड़कर भागने के उदाहरण इतिहास में मिल जायेंगे। घूस रायसा में परतया को ऐसे ही किसी भगोड़े सरदार का प्रतीक माना गया है, जो शत्रु का सामना न कर पीठ देकर भागा हो।

रायसे में कवि ने कुंजो के द्वारा अपने पति की वीरता पर किए गए व्यंग्य को निम्न प्रकार चित्रित किया है–

'पिया अधिक सुकुमार,
करो घूस सौं रार जिन।
खाल डार है फार,
तुम रोवत लग्गा लग॥'[12]

उपर्युक्त पंक्तियों में कायर क्षत्रियत्व पर तीव्र व्यंग्य है। भारी भारी हथियार धारण करने वाले तथा दुर्दांत शत्रुओं का सामना करने वाले क्षत्रियों और सरदारों को कोमलता नहीं कठोरता शोभा देती है। परताई की तरह वे लम्बा जगने पर रोते नहीं हैं। हथियारों के घाव खाकर वे मुस्कराते हैं पर कुंजों के सामने निरीह परताई भी अपनी बहादुरी का सिक्का जमाना चाहता है। ऐसे लोगों को घर का शेर कहते हैं। अपने घर में बैठकर दुनियाँ को जीतने की योजनायें गढ़ेंगे, पर मोर्चे पर जाने में इनकी पिंडलियाँ काँपती हैं। ऐसे लोग अपने घर की स्त्रियों पर ही रौब जमा लेते हैं। घूस रायसा में कवि ने इस स्थिति का इस प्रकार स्पष्ट किया है—

"सुन दौकन नारी सौं लगौ,
कवै देख संग्राम में भगौ।"[19]

उपर्युक्त उदाहरण की दूसरी पंक्ति से यह स्पष्ट होता है कि परताई अपनी पत्नी पर रौब जमाता हुआ कहता है कि संग्राम को देखकर मैं कब भागा हूँ? यहाँ अप्रत्यक्ष रूप से युद्ध से भागने की स्थिति पर ही व्यंग्य है।

घूस रायसे में युद्ध का वर्णन भी बड़ा विचित्र एवं व्यंग्यपूर्ण है। जब 'दौआ (एक विशिष्ट व्यक्ति या मुखिया जो प्रायः अहीर या यादव जाति से सम्बन्ध रखता है) से पुकार की गई तो तलवारें ले लेकर घूसों को मारने के लिए मर्द (वीर पुरुष) दौड़ पड़े। बड़े-बड़े मचान बनाकर उन पर योद्धा लोग डट गए और पनालों की राह रोककर बैठ गए। इसी समय दीपक बुझ गया और घूसों का घेरा पड़ गया अर्थात् घूसों ने निकल कर हमला कर दिया। परिणाम यह हुआ कि सारे योद्धा एक-दूसरे को रौंदने और कुचलने लगे। वे सब लोग आपस में ही लड़ बैठे। यहाँ पर व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण यह है कि जब विवेक का दिया (दीपक) बुझ गया तो वे सब योद्धा घर में आकर आपस में ही लड़ मरे। रायसे में उल्लिखित पंक्तियाँ निम्नानुसार हैं—

"दिया बुझौ तिहि बार"

o o

"आपुस ही में लर मरे,
हम घर ही में आइ।"[20]

और आगे कवि लिखता है—

'राइकपरिया झूट,
कहा करतार बनाई।
आपुस ही में लर मर
मूढ़ बानि में मूस।'[21]

उपयु क्त पंक्तियों मे किन्ही सामन्तों, सरदारों आदि की विवेक शून्यता पर स्पष्ट व्यग्य है।

रायस के अन्तिम वणन म दिखलाया गया है कि दानो पक्षो म सुलह हो गइ। घूस कृपाल हो गई। उसने साहु को पगडी दी। जमीन दी और अभय किया। सहुआइन (मौदिन) को रेशमी लहगा तथा चुनरी दी।

घूस रायस म कवि की भाषा प्रयोग म पर्याप्त सफलता मिली है। कुछ बुन्देली के ग्रामीण माधुय युक्त सम्बोधन बडी स्वाभाविकता म प्रयुक्त किए गए हैं– जस मोन्दिन (साहु अर्थात वश्य की पत्नी) लागा (लहगा) गदवद (शीघ्रता पूवक), चिच्याइ (चिल्लाये) आदि। इसी प्रकार कुछ पंक्तियो म भी अथवत्ता एव भाषा सौन्दय दखा जा सकता है। जैसे–

१ तुम रोवत लपा लगै।'

२ 'भरा घर जुझार।'

३ "मसडा मैडी मइ। आदि[२२]

निष्कप रूप मे यह कहा जा सकता है कि हास्य व्यग्य काव्य की दष्टि से छछू दर रायसा गाडर रायसा तथा घूस रायसा का महत्वपूण स्थान है।

सन्दभ

१ हास्य रस के तीन बुदेली रायसे श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव मध्य प्रदेश सन्देश मई १९७५ प २१

२ रामचरित मानस प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर–अयोध्याकाण्ड प ३७८

३ हास्य रस के तीन बुन्देली रायस –श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव मध्य प्रदेश सन्देश मई १९७५ पृ २१

४ वही पृ २२

५ वही प २२

६ वही प २२

७ वही प २२

८ वही प २३

९ वही प २३

१०–वही, पृ २३

११ वही पृ २३

१२ वहा पृ २३

१३ वही प २३

१४ वही, प २३

१५ वही पृ २३

१६ वही पृ २४

१७ वही पृ २३ २४

१८ वही, प २४

१९ वही पृ २४

२० वही पृ २४

२१ वही पृ २४

२२ वही प २४

अध्याय अष्टम्

रासो काव्यो की साहित्यिक अभिव्यक्ति

प्रकृति चित्रण

दरबारी मनोवृत्ति वाले आश्रित कवि अद्भुत उक्तियों से अपने आश्रय दाताओ को रिझाने का प्रयत्न मात्र करते रहे हैं। फिर उनके आख्यानक काव्यो मे दृश्य वर्णन अत्यल्प स्थान पा सका है। जहाँ कुछ मिलता भी है वह अलकारो की छटा मे ओझल सा प्रतीत होता है।

ऐसा लगता है कि प्रकृति चित्रण इस परम्परा मे कुछ उपेक्षित सा रहा है जो कि एक परम्परा के अनुसरण मे सीमित सा है। वीर काव्यो मे भी यही बँधी बँधाई प्रकृति चित्रण परम्परा देखने को मिलती है।[1]

अद्भुत कल्पना जाल से सवारे गए इन रीति युगीन रासो काव्यो मे अधि काश ऐश्वर्य विलास नायक की शौर्य प्रशसा वीरता, युद्ध पराक्रम युद्ध की सामग्री तथा वीरो की सज धज एव तत्सम्बन्धी सामग्री का बडे विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। नाम परिगणनात्मक शैली का अनुकरण करने के कारण सामग्रिया की सूचिया इतनी लम्बी हो गई हैं जिसमे प्रकृति वर्णन मे अस्वाभाविकता सा आ गयी है।

इन कवियो ने प्रकृति वर्णन के उद्दीपन रूप को ही लिया है जो सस्कृत की आप्त शैली से प्रभावित है।[2] कुछ कवियो के ऐसे भी प्रकृति चित्रण देखने को मिलते हैं जिनसे उनकी मौलिकता एव स्वाभाविकता उनके प्रकृति प्रेम की ओर ईषत सकेत करती है। राजनैतिक परिस्थितियो की गम्भीरता के कारण वे प्रकृति निरीक्षण का अधिक अवसर नही पा सके।

विवेच्य रासो काव्यो मे न्यूनाधिक रूप मे उपलब्ध प्रकृति चित्रण निम्ना नुसार प्रस्तुत किया जा रहा है।

दलपति राव रायसे मे प्रकृति चित्रण का अभाव सा ही है। एक दो स्थलो पर कवि ने युद्ध वर्णन के अन्तर्गत प्रकृति का उद्दीपन रूप मे वर्णन किया है।

एक छन्द मे युद्ध का एक वर्षा रूपक प्रस्तुत किया गया है। उदाहरण निम्नानुसार है —

वर्षा ऋतु

सायें बादलों की घटा तलवारों की चमक बिजली, चातक के सदृश बन्दीजन का गान आदि।

उदाहरणार्थ

"जहाँ घन लौं घुमड दल उमड अनीप जुर
तडता तडप कडी पईक कृपान।
जहा औज साग नेजे वझे वेझलौं करेज
रहे मानो पौन घेरे छूट धुरवा धुरान॥
जहाँ त्याग, तन हुम श्रौन वरषा लगी है
जगी चातक लौं वदीजन करत वखान॥ आदि[7]

शरद ऋतु

कई हजार तलवारों की श्वेत चमक मानो कास फूल गया है पथिक का मार्ग चलना मानो वीरों का प्राण पयान करना है चन्द्रिका के समान कीर्ति प्रकाशित होना कमल के समान मुख पर निर्मल ओज रूपी जल आदि का वर्णन निम्नलिखित छन्द में देखा जा सकता है—

जहा कइयक हजार तरवार कढी दोऊ
कास फूलो जनु कास धरा द वन निदान।
जहाँ फूट जात सीस सोप कट जात गात
कर पथिक लौं प्रान आसमान कौ पयान॥
जहा चारु चन्द्रकासी धामी कीरत प्रकासी
लसै पानिय विमल मुष कमल प्रमान।' आदि[8]

शिशिर ऋतु

जहाँ लाग मुख घाउ फिरैं चाहुड सौ चमूमें
लत रुधिर अत्र हूम घूमैं चावे जनु पान।
जहाँ एक बीर वरहू वरगना वरनत
एक वास कर मारतण्ड मण्डल महान॥
जहाँ ऐकन के भाग भए पापर के पात
सोप सीत के सताए मुख कमल निदान॥ आदि[9]

आगे कवि ने हेमन्त ऋतु के स्थान पर होली का एक युद्ध रूपक प्रस्तुत किया है जिसमें प्रकृति चित्रण नहीं पाया जाता है।[10]

पारीछत रायसा में प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण किया गया है। निम्नलिखित छन्द में वर्षा का एक युद्ध रूपक देखने योग्य है—

"बड सोर रहो दसहू दिसान।
घहरात घोर बज्जे निसान ॥
जनु प्रलय काल के मेघमाल।
क इन्द्र वज्र बल कों जु घाल ॥
उठ जन्न विरीऊग तमक।
मन मघा नखत बिज्जुल चमक ॥
घर परसु बुन्द गाली समान।
बदीजन चात्रक करत गान ॥
वगपत परीछत सुजस छाहि।
वरपोम रूप रन यों मचाई ॥"[11]

वर्षा के प्रतीक चिह्न चातक, जलबून्द, बिजली की चमक, बादलो का गरजना आदि का प्रयोग वन्दीजन, बाण वर्षा, तलवार नगाडे, आदि के लिए किया गया है।

एक अन्य छन्द म प्रकृति का वीभत्स वर्णन किया गया है। युद्ध के मदान मे शोणित की नदी बहना उसमे योद्धाओ क कटे हुए हाथ हथेली सहित नालयुक्त कमल के समान लग रह हैं तथा केश सिवार घास के समान हैं। उदाहरण निम्न प्रकार है–

"बँध लुथ्थन की जह पार गई।
भर श्रोनित वारत जग भई ॥
जह जम्बुप मीन विराजत है।
कर कज सनालन राजत हैं ॥
रहे केस सिवाल सुछाइ जहाँ।
मच आमिष की बहु कीच तहाँ ॥
डरि ढाल सुकच्छप रूप मडे।
वकपत सुकीरत सौम मडे।[12]

एक क्रवान' छन्द म कवि ने उद्दीपन रूप मे वर्षा का युद्ध रूपक निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है–

जहा तापन की घाई घन घाई सी मचाई
वीर माचौ धुधकार धूम धुरवा समान।
जहा थाकौ रथभान पर दिस्ट मे न आन,
ससिहू के उनमान स्यार कप भयमान ॥
जहा वन्दीजन चातक पढावत उमाह हिए,
बरषत बुन्द बान बरषा समान।

तहा माची घमसान सुमसान भौ दिसान,
लर दीरघ दिमान वीर वाहक श्वान ।।[13]

उपयुक्त छन्द मे तोपो के चलने, वीरो की दौड धूप स उठी धूल, वंदीजन बाण, आदि के लिए क्रमश मेघ गजन, काली तथा घूमरी घटाओ के घुरवो, चातक तथा बूद आदि प्रतीका का प्रयोग किया गया है।

एक छन्द मैं प्रकृति का भयानक रूप म वणन भी उपलब्ध होता है। उदाहरण निम्न प्रकार है–

'कधौं बडवागिन की प्रगटी प्रचण्ड ज्वाल,
कधौं ये दवागिन की उलहत साखा है।
o o o
' कधौं जुर होरी ज्वाल छाये हैं पहारन प
लगत गढोहिन को काल कसे नाखा है।। [14]

इस प्रकार पारीछत रायसा मे प्रकृति का कई रूपा मे चित्रण उपलब्ध होता है।

बाघाट रायसा" मे प्रकृति चित्रण अत्यल्प माता म पाया जाता है। केवल दो स्थानो पर उद्दीपन रूप मे प्रकृति का साधारण वणन किया गया है। उदाहरण निम्नानुसार हैं–

तोप घल जब होइ अवाज। परहि मनौ भादौं की गाज ।।[15]

तथा

घला समसेरे सिरोही, भई तेगन मार।
चमक जाती बीजुरी सी कौनु सकहि निहार।। [16]

उपयुक्त उदाहरणो मे तोप की आवाज के लिए गाज गिरना तथा तलवारो की चमक के लिये बिजली क प्रतीक चुने गय हैं।

'झासी कौ राइसौ' मैं प्रकृति चित्रण नगण्य है। केवल एकाध स्थान पर एकाध पक्ति म उद्दीपन रूप म प्रकृति वणन देखने को मिलता है जसे–

"उडे जितहीतित तुड वितुड।
झिर झिरना भर श्रोनित कुड ।।[17]

तथा

'घटा सी उठी रैन जब सैन धाई।'[18]

उपयुक्त उदाहरणो म युद्ध क्षेत्र मे रक्त के झरने बहना तथा सेना क चलने से उठी धूल को काली घटा के रूप मे चित्रित किया है।

लक्ष्मीबाई रासो प्रकृति चित्रण--

इस धारा के अन्य रासो ग्रन्था की भाति ही मदनेश कृत लक्ष्मीबाई रासो

म भी प्रकृति का उद्दीपन एव अप्रस्तुत स्वरूप ही परिलक्षित होता है। इस कवि का प्रमुख लक्ष्य युद्ध का वणन एव उस युद्ध म अपने पक्ष के नायक का वीरोत्तेजक स्वरूप वणन ही है अत प्रकृति वणन म कोई रुचि नहीं दिखलाई गई है। ऐसे ग्रथो मे प्रकृति वणन अगण्य सा ही है। वैसे युद्ध के वणना म भी प्रकृति के आलबन एव उद्दीपन दोना पक्षो का सुदर वणन किया जा सकता है परन्तु इन कवियों ने इस ओर उदासीनता ही दिखलाई है। लक्ष्मीबाई रासो मे युद्ध क्षेत्र म प्रकृति के उद्दीपन स्वरूप का एक निम्न उदाहरण इस प्रकार है—

> "उत रिपुदल सेना उमड़ आइ। चहु ओर मनो घन घटा छाइ।
> बरछिन की माल चमक रही। सोउ दामिन मनो दमक रही॥
> जह तह तोपन को होत सोर। सोई मानो हो रई घटा घोर॥
> गज खच्चर बाज चिकारत हैं। पिक कोकिल मोर अलापत हैं॥
> उठ धुआ गुग नभ लेत गहे। मानों धुर चौगुद टूट रहे॥
> सबकी बातन की मची सोर। है मनो पवन की जोर तोर॥[19]

उपयुक्त छद म युद्ध क्षेत्र म उत्प्रेक्षा से पुष्ट रूपक अलकार म प्रकृति का वणन है। शत्रु सेना का घन घटा बरछियो की फलक का बिजली की चमक, तोपों क चलने की आवाज को घन घटा की गज, हाथी खच्चर घोडों आदि की ध्वनियो को कोयल और मोर क आलाप धुआ उठने का धुरवा टूटन सब लोगों की बातों के शोर का पवन के प्रचड वग के रूप म वणन किया गया है। यहाँ पर हाथी, खच्चर घोडो आदि की चिघाड ढेंचू व हिनहिनाहट की तुलना कवि ने मोर व कोयल की ध्वनि से की है जो असगत ही है।

स्पष्ट है कि कवि ने प्रकृति वणन के प्रति या तो उदासीनता दिखलाई है अथवा स्थिति वैषम्य को एकत्रित भर किया है।

शैली एव भाषा--

आलोच्य रासो काव्यो मे शैलियों की विविधता है।[20] कुछ कवियो न वणनात्मक शैली अपनाई है तो कुछ ने 'सयुक्ताक्षर' और ध्वन्यात्मक शैली मे काव्य रचना की। अधिकाश कवि राज्याश्रित दरबारी मनोवृत्ति वाले थे, जो एक बधी बधाई परिपाटी को ही अपनाए रहे। ऐसे कवियो के द्वारा किये गय वणनो में अस्वाभाविकता का समावेश हो गया है। 'नाम परिगणात्मक शैली' के अ तगत कवियो द्वारा वस्तुओं और नामों की लम्बी-लम्बी सूचियो का प्रयोग कर भाषा प्रवाह को शिथिल कर दिया गया है। बु देल खण्ड के रासो काव्यो की भाषा मूल रूप म बु देली ही है, पर कुछ रासो ग्रथो की भाषा अल्प मात्रा म 'बृज' से प्रभावित भी है। 'झासी को राइसो, पारीछत रायसा, बाघाट का रासो,

'छछूंदर रायसा' गाडर रायसा 'घूस रायसा' आदि विशुद्ध बुंदेली की रचनायें है।

इन कवियों ने प्रयुक्त काव्य भाषा में साथ उर्दू, अरबी, फारसी तथा अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं के शब्दों का तोड मरोड कर स्थानीय बोली के अनुरूप प्रयुक्त किया है। कुछ कवियों ने शुद्ध तत्सम शब्दावली का प्रयोग भी किया है। 'जोगीदास' किशुनेश 'श्रीधर', 'गुलाब तथा मदनेश आदि की भाषा न्यूनाधिक रूप म सस्कृत शब्दावली से प्रभावित भी हैं। परन्तु बुन्देलखण्ड के रासो ग्रन्थो म बुन्देली बोली के अत्यन्त स्वाभाविक और सरस प्रयोग देखने को मिलते हैं। आगे प्रत्येक रासो की भाषा और शैली का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

दलपति राव रायसा मे वणनात्मक शली का प्रमुख रूप से प्रयोग किया गया है। पर जहाँ कवि ने युद्ध की विकरालता वीरा के शौय प्रदशन एव सेना प्रयाण आदि का ओज पूण वणन किया है वहाँ 'नादात्मक शली का प्रयोग किया गया है। सयुक्ताक्षर शली भी रासो परम्परा के अनुकूल यत्र तत्र अपनाई गई है। वर्णद्वित्व तथा अनुस्वारात शब्दावली का कवि ने तडक भडक पूण वणनो म प्रयोग किया है। अनुस्वारात शब्द प्रयोग तो बुन्देली भाषा की अपनी विशेषता है।

बुन्देली रासो काव्यो म प्रमुख रूप स दलपति राव रायसा की भाषा एव शली पर पृथ्वीराज रासो की भाषा शली का पर्याप्त प्रभाव दष्टिगोचर होता है। डॉ० भगवानदास माहौर न लिखा है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा शली का प्रभाव इन बुन्देली रासो ग्रन्थो तक चला आया है यह स्पष्ट दिखता है। इनकी भाषा यद्यपि है बुन्देली ही तथापि पृथ्वीराज रासो की तरह उसमे वण द्वित्व अपभ्रशाभासत्व, अनुस्वारात पदावली आदि की प्रवत्ति पर्याप्त मात्रा मे परिलक्षित होती है।'[81] प्राचीन रासो परम्परा से प्रभावित दलपतिराय रायसा के निम्न छन्द देखिये—

"भयौ जग माझ सुमार अपार। बही श्रोन धार सुनार पनार।
करकत टोपन्न सार अनग। तरकृत जार वप्पर सुतेग॥
करक्कत्त हाड्य सपर्ग धार। लरत सुघोरन्न में अस्सवार।
फर्रकत धाइल्ल ज बौत चाय। सरक्कत्त हाथिन्न सौं ज सुपाय॥[82]

उपर्युक्त छन्द मे वर्णद्वित्व, अनुस्वारात शब्दावली एव अपभ्रशाभासत्व देखा जा सकता है।

निम्नलिखित छन्द में बुन्देली बोली का सामान्य रूप म सुन्दर प्रयोग है—

'नाहर मे नाहर सजे सजे सग जवार।
सज राउ दलपत सग और सूर अपार॥

दान क्रवान प्रवान मो रहत सदा जो वीर ।
स्वाम धम क कारो, अर्पेरहत शरीर ।।'[23]

इस प्रकार एक ओर तो दलपति राय रायसा मे पथ्वीराज रासो की परम्परा युक्त भाषा शैली का प्रयोग हुआ है तो दूसरी ओर बुन्देली बोली का स्वाभाविक स्वरूप भी देखने को मिल जाता है।

करहिया को रायसो प्रमुखत वणनात्मक शैली म लिखा गया है। वीरों के नाम, राजपूत जातिया के नाम आदि के गिनाने म नाम परिगणात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। कही-कही चारण परम्परा की भाति सयुक्ताक्षर एवं वर्णद्वित्व शैली का बेढगा सा प्रयोग भाषा प्रवाह मे अरोचकता एव कथाप्रवाह म व्यवधान सा उपस्थित कर देता है। निम्नांकित पक्तियों मे सयुक्ताक्षर शैली का प्रयोग दृष्टव्य है–

झुडड्डुरिग प्रचर्डडडढ करि मुडडडरिपिय ।
भुसुडिडढ करि तुडड्डभ कि चमुडड्डुगरिय ।।
रुद्धरिन अरिद ड्डुरिय अरभम्भुज परं ।
रभगन किय मग्गग्गति चल कद्द्दसिवर ।।'

उपयुक्त उदाहरण मे कवि ने वर्णों का कैसा अस्वाभाविक मेल उपस्थित किया है कि अथ का अभाव तो हो ही गया, कथा प्रवाह एव भाषा प्रवाह मे भी शिथिलता एव अरोचकता आ गई है। किन्तु गुलाब कवि ने इस प्रकार के वणन बहुत कम किये हैं। कवि न बार-बार छन्दा का परिवतन किया है इस कारण रचना म रोचकता की वद्धि हुई है।

करहिया को रायसो यद्यपि बुन्देली भाषा म लिखा गया है तथापि यत्र तत्र कुछ वणना से यह कहा जा सकता है कि कवि पर बज का पर्याप्त प्रभाव था। कुछ पक्तियाँ यहाँ उद्धत का जा रही हैं–

(१) देवीजू के चरन सरोज उर ल्याउ रे।
(२) दवनि के देव श्री गणेश जू को गावही।
(३) जग जोर जालिम जवर प्रगट करहिया बार।

उपयुक्त पक्तियो म कुछ बुन्देली शब्द यथा स्थान मणि की तरह जडे हुए हैं। इस तरह की और भी पक्तिया इस काय ग्रथ म उपलब्ध होती हैं। सम्पूण रूप म यह काव्य ग्रथ बुन्देली भाषा के खाते म ही जमा किया जायेगा।

शत्रुजीत रासो म भी परम्परा युक्त शैलियो का ही प्रयोग किया गया है। इस रासो ग्रथ म वणनात्मक, ध्वन्यात्मक सयुक्ताक्षर आदि शैलिया का प्रयोग हुआ है। वीरा के नामा और उनकी जातिया तथा हथियारा आदि की सूची गिनान

म परिगणनात्मक शैली भी प्रयुक्त हुई है। जैसे बधाई परम्परा म अटको न रह गया होता तो इस ग्रन्थ का कवि अपने समय का एक विद्वान काव्य ममज्ञ था।

शत्रुजीत रासो म बुन्देली भाषा को अपनाया गया है। कवि को भाषा प्रयोग मे पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। बुन्देली की शब्दावली का बडा स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। जस 'जडाको करैं, 'हम पाव, मरोर' के साथ उर्दू आदि भाषाओ क शब्दो का भी कवि ने बुन्देली सस्करण क रूप म प्रयुक्त किया है। जस 'तफसील' का तपसील' होश्यार का हुसयार आदि। यथा स्थान कहावतो एव मुहावरो के प्रयोग न भाषा की शक्ति को परिवर्धित किया है–

१ सहज सजीलौ सिंह तौ तिहि पर पक्खर जोर ।[25]

२ 'कान पूछँ मरोर ।[25]

३ 'करी मीचनैं नीचकी मीच नीची

हृद पैठकैं युद्ध की आग मींची' ।[26]

४ हमें पाव ।[27]

५ मर्नांहि कचाइक ।[28]

बुन्देली रासो काव्यों की भाषा प्राचीन रासो काव्यो की भाषा से प्रभावित है।[29] यद्यपि पारीछत रायसा की भाषा विशुद्ध बुन्देली है तथापि कहीं कहीं तडक भडक वाली, चमत्कार उपस्थित करन वाली शब्दावली का प्रयोग भी किया गया है। वर्णद्वित्व, अपभ्रशाभासरूप सयुक्ताक्षर शैली एव अनुस्वारान्त पदावली का प्रयोग प्रचुरता के साथ किया गया है।

शब्दान्त इ तथा उ' को अ म परिवर्तित कर देना इस भाषा की अपनी विशेषता है। महाप्राण ध्वनियो म 'घ', 'ख' आदि को अल्पप्राण ग, 'क आदि कर दिया जाता हैं। शब्दान्त व्यजन 'ह' क बाद स्वर होने पर व्यजन ह का लोप हो जाता है। जस 'रहे' का रए। रहौ का 'रऔ आदि।

निम्नाकित उदाहरण म अनुस्वारान्त शब्दावली का स्वरूप देखा जा सकता है–

"सज्जे पमार मॅगुआवार अनी अयार वीर वली।

सज्ज पडहार सूर जुझार धरभुजभार रन अदनी ॥ आदि"[30]

उपर्युक्त उदाहरण में पमार, वार अयार, पडहार, जुझार तथा भार अनुस्वारान्त शब्द हैं।

एक अन्य उदाहरण म वर्णद्वित्व युक्त शब्दावली का प्रयोग इस प्रकार है–

करक्कहि म्याढन भारत कोल, सरक्कहि ससन कुल्लहि कौल।

भरक्कहि कूरम चक्कियि भान धरक्कहि दिग्गज सुप्पत जान ॥ [31]

एमी शब्दावली क प्रयोग स भाषा प्रवाह म बाधा उपस्थित हुई है।

'बाघाट रासो' सीधी सादी वर्णनात्मक शैली मे लिखा गया है। न तो कवि ने संयुक्ताक्षर शैली का प्रयोग कर भाषा को दुरूहता दी है और न नादात्मक शैली के द्वारा शब्दाडम्बर ही उत्पन्न किया है। वस्तुओं और नामों की अस्वाभाविकता उत्पन्न करने वाली लम्बी लम्बी सूचियां भी गिनाने के लिए कवि ने कहीं भी प्रयास नहीं किया है। अलंकारों आदि के द्वारा भाषा को चमत्कारिक भी नहीं बनाया गया। सूक्ष्म वर्णन के द्वारा घटनाओं को शीघ्रतापूर्वक जोड़कर कथानक को समाप्त कर दिया गया है।

बुन्देली बोली कोमलता और मिठास के लिए प्रसिद्ध है। इसमें अधिकांश शब्द ओकारांत तथा 'औकारांत' पाए जाते हैं। जैसे खड़ी बोली का का को रूप। बुन्देली में आनुनासिकता पर भी अधिक बल दिया जाता है। हिन्दी में 'म' व्यंजन स्वयं सानुनासिक है पर बुन्देली प्रयोगों में 'म' के ऊपर भी अनुस्वार लगाये जाने का प्रचलन है। जैसे–'विमान' का 'दिमान', 'जगह' का जागा, हनूमान का 'हनूमान', जमान का अमान आदि।[32] बुन्देलखण्डी क्रु को 'क्र' रूप में लिखते हैं। 'य' के स्थान पर 'अ' तथा 'व' के स्थान पर 'उ' का अधिकांश प्रयोग किया जाता है। जैसे राउराजा' (राव राजा) जैली तरफ, रायिजै आदि।[33]

कवि ने विदेशी शब्दों को भी तोड़ मरोड़ कर बुन्देलीकरण किया है। हुक्म का 'हुकुम', 'जुरत का 'जुरियत आदि। कहीं कहीं इन विदेशी शब्दों को स्वाभाविक रूप से 'विभक्ति' का रूप दे दिया है। जैसे 'हुकम को' का लघु रूप 'हुकुम, 'दतिया' का दतिअ' आदि[34] बुन्देली बोली का अंग्रेज शब्द प्रबन्ध व्यवस्था या बन्दोबस्त का ही प्यारा मोहक रूप है।

यथास्थान मुहावरों और वक्रोक्तियों के प्रयोग से भाषा सरस सशक्त और प्रांजल हो गई है। इस ग्रन्थ में बुन्देली गद्य का स्वरूप भी देखने को मिलता है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि भाषा की दृष्टि से अन्य बुन्देली रासो काव्यों की अपेक्षा 'बाघाइट की रायसौ अधिक समृद्ध है।

प्रधान कल्याणसिंह कुड़रा कृत 'झाँसी कौ राइसौ बुन्देली बोली में लिखा गया है। बुन्देली स्वाभाविकता सरसता, सरलता आदि गुणों से सम्पन्न तो है ही। कवि का भाषा पर असाधारण अधिकार दृष्टिगोचर होता है। घटनावली के संयोजन में कवि को पूर्ण सफलता मिली है। कहीं भी अनावश्यक शब्दों की तोड़ मरोड़ अथवा अनुचित प्रयोग नहीं किया गया है। उर्दू, अंग्रेजी के व्यावहारिक शब्दों का बुन्देली रूप भी अपनी एक अलग विशेषता प्रदर्शित करता है। जैसे बख्शी का बगसी, फतह का फत्ते हिस्सा का हिस्सा सिपाही का सिपाई जुल्म का जुलम, कौनिश का कुर्नस, दोस्त का दोस, कोतवाल का कुतवाल, कचहरी का कचैरी आदि

म परिगणात्मक शैली भी प्रयुक्त हुई है। बँधी बँधाई परम्परा म अटका न रह गया होता तो इस ग्रन्थ का कवि अपने समय का एक विद्वान काव्य ममज्ञ था।

शत्रुजीत रासो मे बुन्दली भाषा को अपनाया गया है। कवि को भाषा प्रयोग म पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। बुन्देली की शब्दावली का बडा स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। जस, 'जडाकौ कर डगे पाव', मरोर के साथ उद्दू आदि भाषाओ के शब्दो को भी कवि ने बुन्देली सस्करण के रूप मे प्रयुक्त किया है। जस 'तफसील' का 'तपसील' 'हाशयार' का हुसयार आदि। यथा स्थान कहावतो एव मुहावरा के प्रयोग ने भाषा की शक्ति को परिवर्धित किया है–

१ सहज सजीलौ सिंह तौ तिहि पर पख्खर जोर ।[24]

२ 'वाल पूछँ मरोर ।[25]

३ करी मीचनैं कीचकी धीच नीची
हृदै पैठकें बुध्य की आख मीची ।[26]

४ 'डगे पाव ।[27]

५ 'मनहिं कचाइक' ।[28]

बुन्देली रासो काव्यो की भाषा प्राचीन रासो काव्यो की भाषा से प्रभावित है।[29] यद्यपि पारीछत रायसा की भाषा विशुद्ध बुन्देली है तथापि कही-कही तडक भडक वाली चमत्कार उपस्थित करने वाली शब्दावली का प्रयोग भी किया गया है। वर्णद्वित्व, अपभ्रशाभासत्व सयुक्ताक्षर शली एव अनुस्वारात पदावली का प्रयोग प्रचुरता के साथ किया गया है।

शब्दात इ तथा उ को 'अ' म परिवर्तित कर देना इस भाषा की अपनी विशेषता है। महाप्राण ध्वनियो म 'घ, ख आदि का अल्पप्राण द, 'क आदि कर दिया जाता हैं। शब्दान्त व्यजन 'ह के बाद स्वर होने पर व्यजन ह का लोप हो जाता है। जैसे रहे का रए। रहौ का 'रऔ आदि।

निम्नाकित उदाहरण म अनुस्वारान्त शब्दावली का स्वरूप देखा जा सकता है–

'सज्जे पमार सगुआवार अनी अन्यार वीर वली।
सज्जे पड्हार मूर जुझार धरभुजभार रन अदनी ॥ आदि [30]

उपयुक्त उदाहरण म पमार वार अन्यार, पड्हार, जुझार तथा भार अनुस्वारान्त शब्द हैं।

एक अन्य उदाहरण मे वर्णद्वित्व युक्त शब्दावली का प्रयोग इस प्रकार है–

करक्कहि डाढन मारन कोल मरक्कहि मेसन बुल्लहि बोल।
भरक्कहि कूरम चप्पिय भान धरक्कहि दिग्गज सुप्पत जान ॥ [31]

ऐसी शब्दावली के प्रयोग स भाषा प्रवाह म बाधा उपस्थित हुई है।

'बाघाट रासौ' सीधी सादी वर्णनात्मक शैली में लिखा गया है। न तो कवि ने संयुक्ताक्षर शैली का प्रयोग कर भाषा को दुरूहता दी है और न नादात्मक शैली के द्वारा शब्दाडम्बर ही उत्पन्न किया है। वस्तुओं और नामों की अस्वाभाविकता उत्पन्न करने वाली लम्बी-लम्बी सूचियाँ भी गिनाने के लिए कवि ने कहीं भी प्रयास नहीं किया है। अलंकारों आदि के द्वारा भाषा को चमत्कारिक भी नहीं बनाया गया। सूक्ष्म वर्णन के द्वारा घटनाओं को शीघ्रतापूर्वक जोड़कर कथानक को समाप्त कर दिया गया है।

'बुंदेली बोली कोमलता और मिठास के लिए प्रसिद्ध है। इसमें अधिकांश शब्द 'ओकारांत' तथा 'औकारांत' पाए जाते हैं। जैसे खड़ी बोली 'का' का 'कौ' रूप। बुंदेली में आनुनासिकता पर भी अधिक बल दिया जाता है। हिंदी में 'म' व्यंजन स्वयं सानुनासिक है, पर बुंदेली प्रयोगों में 'म' के ऊपर भी अनुस्वार लगाये जाने का प्रचलन है। जैसे– दिमान' का दिमान, 'जगह' का जागा, हनूमान' का हनूमान' 'जमान' का अमान' आदि।[32] बुंदेलखण्डी 'कृ' को 'क्र' रूप में लिखते हैं। 'य' के स्थान पर 'ज' तथा 'व' के स्थान पर 'उ' का अधिकांश प्रयोग किया जाता है। जैसे 'राउराजा' (राव राजा), अैती तरफ', रापिअै आदि।[33]

कवि ने विदेशी शब्दों का भी तोड़ मरोड़ कर बुंदेलीकरण किया है। 'हुक्म' का 'हुकुम' 'जुरत' का 'जुरियत' आदि। कहीं-कहीं इन विदेशी शब्दों को स्वाभाविक रूप से 'विभक्ति' का रूप दे दिया है। जैसे 'हुक्म को' का लघु रूप 'हुकुम', 'दतिया' का 'दतिअ' आदि[34] बुंदेली वालों का 'बंदेज' शब्द प्रबन्ध, व्यवस्था या बन्दोबस्त का ही प्यारा मोहक रूप है।

यथास्थान मुहावरों और वक्रोक्तियों के प्रयोग से भाषा सरस सशक्त और प्रांजल हो गई है। इस ग्रन्थ में बुंदेली गद्य का स्वरूप भी देखने को मिलता है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि भाषा की दृष्टि से अन्य बुंदेली रासो काव्यों की अपेक्षा 'बाघाइट कौ रायसौ' अधिक समृद्ध है।

प्रधान कल्याणसिंह कुडरा कृत 'झांसी कौ राइसौ' बुन्देली बोली में लिखा गया है। बुंदेली स्वाभाविकता सरसता सरलता आदि गुणों से सम्पन्न तो है ही। कवि का भाषा पर असाधारण अधिकार दृष्टिगोचर होता है। घटनावली के गठन में कवि को पूर्ण सफलता मिली है। कहीं भी अनावश्यक शब्दों की तोड़ मरोड़ अथवा अनुचित प्रयोग नहीं किया गया है। उर्दू, अंग्रेजी के व्यावहारिक शब्दों का बुंदेली रूप भी अपनी एक अलग विशेषता प्रदर्शित करता है। जैसे बख्शी का बगसी, फतह का फत्त, हिस्सा का हिसा, सिपाही का सिपाई, जुल्म का जुलम, कौनिश का कुरनस, दोस्त का दोस, कोतवाल का कुतवाल, कचहरी का कचरी आदि

उर्दू भाषा के शब्दों का बुंदेली संस्करण देखा जा सकता है। अंग्रेजी भाषा व्यावहारिक शब्द जनरल का जर्नेल, एजेंट का अजंट, राइफल का रफल्ल आदि इसी प्रकार के शब्द हैं। इसी प्रकार झाँसी की राइसो में कवि ने हिंदी की बुंदेली बोली के साथ-साथ उर्दू व अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। चमत्कार की सृष्टि करने वाले द्वित्व वर्ण युक्त शब्दों का प्रयोग न होने से भाषा के स्वाभाविक प्रवाह एवं अर्थ बोध में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पाई है। कुछ वीर रस के वर्णनों में ओज उत्पन्न करने के लिए अवश्य टवर्ग युक्त शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

ऐतिहासिक घटना प्रधान होने के कारण झाँसी की राइसो में प्रमुख रूप से वर्णनात्मक शैली को अपनाया गया है। नामों और वस्तुओं की लम्बी-लम्बी सूचियों का अभाव होने के कारण वर्णन अरुचिकर और नीरस होने से बच गये हैं। कवि ने संयुक्ताक्षर शैली का भी प्रयोग नहीं किया है। छन्दों का शीघ्रता पूर्वक परिवर्तन होने से शैली में रोचकता आ गई है। युद्ध वर्णन एवं वीर रस के वर्णन में नादात्मकता अवश्य उत्पन्न हुई है। रायसे का कथा सूत्रता में नत्थे खाँ के साथ हुए युद्ध के पश्चात् कुछ शिथिलता आ गई लगती हैं। सम्भवतः उतना अंश पीछे से कवि ने कई टुकड़ों में लिखा हो। फिर भी यह स्पष्ट है कि कल्याणसिंह को भाषा एवं शैली की दृष्टि से पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है।

प० मदनेश ने अपने रासो ग्रन्थ में अपने समय तक प्रचलित परम्परायुक्त काव्य शैलियों का ही प्रयोग किया है। ऐतिहासिक इतिवृत्तात्मक कथानक का प्रमुख रूप से वर्णनात्मक शैली में व्यक्त किया गया है। कहीं कहीं संवाद योजना भी की गई है। कुछ भागों में छन्दों में बारबार परिवर्तन करके शैली को रुचिर बनाने की चेष्टा की गई है।

संयुक्ताक्षर एवं नादात्मक शैली[35] का कवि ने रासो ग्रन्थ के अष्टम भाग में अधिक प्रयोग किया है। इस शैली में टकार एवं डकार युक्त शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है। इस धारा के अनेक कवियों ने वस्तुओं की लम्बी लम्बी सूचियाँ गिनवाई हैं। मदनेश जी भी वस्तुओं की नाम सूची गिनवाने का लोभ संवरण नहीं कर सके। इन्होंने भी कई स्थानों पर आभूषणों हथियारों एवं सरदारों तथा जातियों की नाम सूची का वर्णन किया है।[36] एक दो स्थलों पर इन सूचियों ने काव्य में अस्वाभाविकता भी उपस्थित की है। शकुन एवं अपशकुन विचार का कवि ने कई स्थलों पर विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है।[37] इस प्रकार के वर्णन भी काव्य शैली को बोझिल बनाने वाले हैं। मदनेश जी ने पृथ्वीराज रासो की छन्द शैली एवं रामचरित मानस का दोहा चौपाई का अनुसरण किया है तथा भाग चार एवं पाँच में आल्हा छन्द का प्रयोग कर आल्हा रायसा की शैली भी अपनाई है।

लक्ष्मीबाई रासा म शुद्ध बुन्देली बोली का प्रयोग किया गया है। यद्यपि इसक पूव के अनक बुदेनी काव्य ग्रथ व्र भाषा काव्या की कोटि म माने जाते रहे हैं तथापि यह अपन आपम एक एसा गौरव ग्रथ है जिसम विशुद्ध बुदेली को अपनाया गया है। कवि ने न तो निरथक शब्दो के घटाटोप की ही सृष्टि की है और न अनावश्यक रूप से शब्दो की तोड मरोड कर ही रखा है। सरल शब्दावली क साथ-साथ सुसस्कृत शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। बुदेली के साथ उदू, फारसी आदि के शब्दो को भी प्रसगानुकूल स्थान दिया गया है। युग प्रभावेण कवि खडी बोली की चपेट म भी आ गया है। यथा मुलक मदान को पिदान फारडारा है। का फार डारा शब्द खडी बोली 'फाड डाला का ही बुन्देली रूप है। ' ऽ।'

रस

वीर रस

जोगीदास द्वारा दलपति रायसा म रासो काव्या की प्रवृत्ति के अनुरूप वीर रस का प्रधानता दी गई है। वीर रस के अन्तगत युद्ध वीर एव दानवीर के उदाहरण इस रायसे म पाये जाते हैं। युद्ध वीर एव दानवीर का एक एक उदाहरण निम्नलिखित है—

युद्ध वीर

कहत दरिपनिय सकल नउ धर बाँध सन सब।
आज प्रलय कर दउ लूट कर लेउ अरन अब॥
की धरहु अब सब अन्न सत्र छाडहु सूर सब।
होउ नार क भेप जाउ फिर वेग अप्प घर॥
इम दाव रहे सूबहि सकल अक्त विकल तह सन मह।
नहि चलत चातुरी एक हू फौजदार तवत तह॥' ⁸⁸

उपयु क्त छन्द म वीरा म युद्ध क लिए उत्तेजक शब्दो क द्वारा युद्ध करने की प्ररणा का सचार किया जा रहा है। उन्ह चुनौती देकर उत्साहित किया जा रहा है कि या तो युद्ध क्षेत्र म प्रलय मचा दो अथवा सार हथियार यही डाल कर स्त्री का वप धारण कर अपन घर जाओ।

तथा

करन क बाज बग बहुतक भीरभजा कीनो बान ऊपर किमी न करी गोल म।
बाजो पलताला मानी फिरत खुमाना हानी लाला लघ काली कत फिरत कलाल म।
हार मघडम्बर आडम्बर अराव छूट बानत विहारी की डगो न डगाडोर म।
मुन्शा के मारे हाथा हाथिन क मार साथी आगर उमड लरौ गगाराम गोल में। ⁸⁹

उपयु क्त छन्द म गगाराम नाम क एक वीर सरदार के युद्ध का वीर रस पूण तडक भडक से युक्त शब्दावली म वणन किया गया है।

दानवीर

¹ निम्नलिखित एक कवित्त म राजा दलपति राव की दानवीरता का चित्रण किया गया हैं। उनके द्वारा ब्राह्मणों, भाटो को दिये गये दान का अतिशयोक्तिपूर्ण शब्दावली में वणन किया गया है–

'विप्रन को विध सौ बनाय के सुवेदरीत पुम्न पन प्रीत राजनीति के विचार के।
भाटन को जस कै प्रगास कहि जोगीदास करत कवित्त गितदान हथियार के॥
छत्रिन को छत्रधर धम दप सारधार और सेवादार गुन वारिन उदार के।
पचम श्री दलपत राउ दान दिलीप से कयकन हाथी दये कयक हजार के॥[40]

शृगार रस–

'दलपति राव रायसा मे शृगार को स्थान नही दिया गया है।

रौद्र रस–

प्रस्तुत रासो ग्रथ मे रौद्र रस के यत्र तत्र उदाहरण प्राप्त हो जाते है। वीर रस के पश्चात वीर काव्या म इस रस का प्रमुख स्थान है। एक छन्द मे महाराजा दलपति राव द्वारा आजम शाह मे कही गई दप पूण उक्तियो का सुदर चित्रण देखिए–

'सुनत यहै दलपत राउ तबही कर जोरेउ।
दान क्रवान प्रवान जग कह मुखनहि मोरेउ॥
करहु मार असरार सत्र की सन विडारहु।
श्रानित की कर कीच सीस ईसह सर डारहु॥
बुन्देलखण्ड बुन्देल स्वाम काज चित्त धरहु।
इन भुजन खेल आलम्य दल पारथ सम भारथ करहु॥[41]

भयानक–

युद्ध क्षेत्र मे कई स्थलो पर ऐसे वणन उपस्थित किए गए हैं। एक छन्द देखिये–

'सजै जिहि सैन चौन जात है गनीमन को बसे करपचम सौपज के अरत है।
चकट मवासे उदवासे जिहि जीत करे बसत सुवास रास दड जे भरत है।
सूर सुभ साह सुयवाति प्रवल हुय पारथ समान भिरभारथ करत है।
कहै जोगीदास राउ दलपत जू क त्रास साहन के शत्रु अत्र छोर के धरत है।[42]

वीभत्स–

युद्ध क्षेत्र मे वीभत्स रस के वणन इस रायसे म बहुलता स पाये जाते है। वीरो के सिर, हाथ, पैर कटने, चील गिद्ध, काली भूत प्रेत योगिनी आदि की जमातों का वीभत्स वणन इन स्थलो पर किया गया है। एक चित्र देखिये–

'जहाँ धौंसन बजावें बाडी मारू रागगावें देव देवन सुभावें छावें गगन विमान।
जहा गौरी हरषावें भूतप्रेत हुव भावें देप जुग्गिन सिहावें करें नारद बखान ।।
जहा चिल्ल गिद्ध ग्यात काग अत मडडात आये आलम की सैन जान घनो पकवान।
तहा पचम प्रचड महाराज मुभसाहनद आजम की बान लसे रावरी भुजान ।।'[43]

उपयुक्त रसो के अतिरिक्त करुण हास्य आदि का दलपति राय रायसे म पूणत अभाव है।

करहिया को रायसो–

गुलाब कवि की यह कृति रस परिपाक की दृष्टि से समृद्ध नहीं है। इसम थोडे से रसों का चित्रण किया गया है। वीर एव वीभत्स के अतिरिक्त अन्य रसों के दशन नहीं होते।

वीर रस–

वीर रस के अनेक उदाहरण इस ग्रन्थ म मिल जाते है। एक छन्द म तो वीर रस के तीन भेदों का एकत्र वणन किया गया है। छन्द निम्न प्रकार है–

दान तेग सूरे बल विक्रम से रूरे पुण्य
पूरे पुरुपारथ को सुकृती उदार है।
गावे कविराज यश पावे मन भायो तहा,
वण धम चारु सुदर मुढार है ।।
राजत करहिया म नीत के सदन सदा
पोपक प्रजा के प्रभुताई हुसयार है।
जग अरवीले दल भजन अरिदन के,
विदित जहान जग उदित परमार है ।।[44]

वीर रस का एक दूसरा उदाहरण नीचे दिया जा रहा है जिसम कवि ने अपने आश्रयदाता का सुयश वणन अत्यन्त ओजपूण शब्दो मे किया है–

मेड राखो हिन्द की उमडि दल जाटन के
एडिक्र कीनो छित सुयश सपूती को।
प्रबल पमारो यारो धरा राखी धीरज सों,
कीनो घमसान खगमग्ग मजबूती को।।
राख्यो नाम निपुन नरिदन के मरिन को,
कहत गुलाब त्याग आलस कपूती को।
सरय राख्यो धम राख्यो साहिबी सयान राख्यो,
राख्यो पज पानी इन मूछो रजपूती को ।।[45]

निम्नलिखित एक और छन्द म युद्ध क्षेत्र म जाट सरदार जवाहरसिंह एव पंचमसिंह के मध्य हुए युद्ध म वीर रस की झाँकी देखिय–

'गज छोडके अश्व सवार भयौ। तलवार जवाहिर जाय गयौ।
विरच्यौ इत कहरि सिद्ध मरम। कर इष्ट उचारन शुद्ध मरम॥
पहुच्यौ रन पचमसिंह मरद्द। कर मुक्कार अरीन गरद्द।
रूप्यौ इतजाट निराट बनी मुखते रटना मुचितान भली॥[46]

वीभत्स—

इस रस के भी कुछ उदाहरण करहिया की रायसौ मे उपलब्ध हो जाते हैं। निम्नांकित छन्दो की पंक्तिया उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की जा रही है—

कटि मूडनि शूरन श्रोन मचे, तहा वेगि सदाशिव नाच सच।
कर जुगिन चौसठ नच्चपगम्, इमदेखिकै कायर नेह डगम॥[47]

तथा—

'ससहार गिद्धन कीन, नच जुगिनी परवीन।
कहू भूत भरो प्रेत चुनि मुड मालनि हेत॥
तहा हुलस काली आय, पल चरन मगल गाय।
कर खान पान नवीन बहु भात आशिख दीन॥[48]

वीभत्स मे परम्परागत प्रतीको को ही चुना गया है।

इस प्रकार करहिया की रायसौ म रस चित्रण की न्यूनता है। इसका कारण ग्रथ का लघु आकार एव केवल वीर रस को ही प्रमुखता देना हो सकता है।

शत्रुजीत रासो—

शत्रुजीत रासो मे प्रमुख रूप से वीर रस का चित्रण किया गया है। रौद्र भयानक और, वीभत्स का भी युद्ध की घटनाओ मे यथास्थान वणन किया गया है। पूर्ण रूपेण वीर काव्य होने की दृष्टि म शत्रुजीत रासो मे शृगार को स्थान नही मिल सका। सेना, राजा, सरदारो आदि की सज्जा का कहीं कही शृगार पूर्ण वणन अवश्य पाया जाता है। परतु इस ग्रथ म शृगार रस की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है।

वीर—

वीर रस के अंतगत युद्धवीर का ही सवत्र चित्रण पाया जाता है। एक स्थल पर राजा के द्वारा दान देने का भी वणन किया गया है—

युद्धवीर—

विहस बदन नरनाह सहज बुंल्लव वरं बानिय।
वीर अंग अनभग जग रगहि सरसानिय॥
मैं अमवहु दल भार सार धारहिं झक्झारहु।
फटक काट कर वीर सिंधु सरिता मह बोरहु॥

मम वाह छाह छितपाल तुम सहित सेन निरसक रहि।
इम प्रबल परीछत छत्रपत सत्रजीत सुत अत्र गहि ॥[49]

दानवीर–

'अस्नान कर गोदान दीनैं सुध्य विप्र बुलाइ कैं।
वर वाउ पाउ पपार सिचहु देह सब सुख पाइ कैं ॥[50]

शृंगार–

शत्रुजीत रासो में कवि ने कुछ गीतिका छन्दों म युद्धक्षेत्र मे स्थित महाराज शत्रुजीत सिंह की सजावट शृंगार वर्णन किया है–

उदाहरण– 'सुजसीस पाग सुपन कम सिर पज जव जवाहिरी।
कलगी जराऊ जगमगे सब रग सोभाडार हो ॥
जर गोट हीरा जटित बधव तुरत तोरा तोर कौ।
मन मुक्त माल विसाल तुरा मौर सुभ सिर मौर कौ ॥' आदि[51]

भयानक–

निम्नलिखित एक छप्पय मे शिव के भयानक रूप का चित्रण किया गया है–

टर समाधि निहि वार हरप क हरगढ दिप्पव।
सत्रजीत रन काज चढव हयराज विसिप्पव ॥
गवरहार अरधग गग उतमग उतारिय।
इचिय भुजन भुजग चद खिचिय त्रिपुरारिय।
गरमाल गरन त्यागउ तुरत धौर धवल चढपथ लियव।
उठ चु ग तु ग चपिय धरन गग्द गु ग गगनहि गयव ॥[52]

वीभत्स–

शत्रुजीत रासो म अनक किरवान छन्दो मे वीभत्स वर्णन पाये जाते हैं। निम्नलिखित छन्द म युद्ध के क्षेत्र म बहती हुई नदी, वानो की लटो सहित तरते कटे हुए मु ड, योगिनियो आदि का चित्रण किया गया है–

'जहाँ माटी जाघ धारन मसाई मोद मोटी भई।
रुधिर अहौटी तज दीन पात पांन ॥
जहां सट का रपट उठा ठठ की चुचात चाटी।
फिरै बाह आटी जुर जुगिन गुजान ॥'[53] आदि।

रौद्र रस–

महाराज शत्रुजीत और सिंधिया की सेना के गुत्तानुमक शीत के सम्मन्न युद्ध में रौद्र रस का परिपाक निम्न प्रकार है–

"करी अरज सिकदार, सुनहु पचम दिमान अवि ।
सुभट सूर सामन्त दहु मम सन सग मवि ॥
पकर लउ गधप जाइ वाघाइट जारहु ।
सवल गडोइन दण्ड धरा सबकी सु उजारहु ॥
आन फेर नराथ फी करहु शत्रु सब काल वस ।
महाराज हुकुम आपुन हुकुम कर दीज मर्दों सुजस ॥'[60]

भयानक

पारीछत रायसे मे भयानक रस के भी कुछ उदाहरण उपलब्ध हो जाते हैं । दिमान अमान सिंह की सेना के आतक से दसा दिशाओ म भय व्याप्त हो गया है । निम्नांकित छन्द मे चित्रण इस प्रकार है–

कपत धरन चल दलन के पातन लौं,
चपत पनाली फन होत पसेमान है ।
कूरम कराहैं कोल डाढ भार डौर देत,
दिग्गज चिकार कर दस हू दिसान है ॥
धूर पूर अम्बर पहारन की चूर होत,
सूरज की जात लग चन्द क ममान हैं ।
कामी सुर पचम जमान स्वाम कारज कौं
साज दल चलौ वीर प्रवल दिमान है ॥ [61]

भक्ति रस

पारीछत रायसा म ब्रह्म वाला जी की भक्तिपूर्ण स्तुति म भक्ति रस की सृष्टि हुई है । उदाहरण निम्न प्रकार है–

"तुही आदि ब्रह्म निराकार जोत ।
तुही त सब विस्व उत्पन्न होत ॥
तुही विस्न ब्रह्मा तुहीं रुद्र जानौ ।
तुही त प्रगट सब औतार मानौ ॥ [62]

बाघाट रायसा म प्रधान आनन्द सिंह कुडरा न रस परिपाक क सम्बन्ध म पूर्ण उपेक्षा दिखलाई है । इस रायस मे किसी भी रस की निष्पत्ति नहीं होन पाई । वीर रस का काव्य होते हुए भी सम्पूर्ण रासो ग्रन्थ म वीर रस के उदाहरणो का प्राय अभाव है । इसका कारण यह भी हो सकता है कि इस रचना म घटनाओ का सयोजन कवि ने बडी शीघ्रता से किया है तथा वर्णन सक्षिप्तता क कारण भी कवि को रस आदि की सृष्टि का अवसर नहीं मिल पाया होगा ।

झांसी कौ रायसौ

रस

झांसी कौ राइसौ म रस चित्रण अल्प मात्रा मे किया गया है। केवल तान उदाहरण वीर रस[62] के तथा दो दो वीभत्स[63] और करुण[64] रस के हैं। यहां इन रसो के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं–

वीर रस

जायौ कड उकड अना त वौ पलेरा वार,
मन पुरा क मधुकर निहारौ नैन जाइकै।
दोऊ वर वाहन खिचौ है तेग एक सग,
इतवित उछाह भौ बडाई बड पाइक ॥
वहत कल्यान रनधीर की कृपान घली
दख दरम्यान लई ढालेनि वरकाइकै।
क्रोध कर मधुकर वसुधि कर प्रहारी तेग
गरदन समेत सिर गिरौ महि आइक ॥

उपयु क्त उदाहरण म दा सना नायको पलेरावार तथा मनपुरा के मधुकर क द्वन्द्व युद्ध का वीररस व्यजक वणन किया गया है। वीररस वणन के लिए कवि न कवित्त, छप्पय तथा कृपाण आदि छन्द का प्रयाग किया है।

वीभत्स रस

लग खग झुण्डन आमिष खान। जबुक कूकर और मसान।

वीभत्स रस चित्रण भी अधूरा सा ही है। पूण स्पष्ण रस सृष्टि कवि न उपस्थित कर नहीं पाई है।

करुण रस

'मार्से लन सोचत सकोच कर नत्यै म्हौ,
पूछै गिरवार तिन वा नहि समझाइहौं।
उडो है गुजानो लरो तान महीना लौं दल
सकल विलानौ मु तौ कौन कौन गाइ हौं ॥
वहत कलियान वान बीत गई झांसी प,
गांसा सा टहरी सांहि हांसी न कराइ हौं।
विजन बराइहौं अगरेज सौं सराइ हौं
तौ सइई महारानी कौं वदन बताइहौं।"

तथा–

पावहि नन न नीद बहुत मुख बात न आवहि ॥

करुण रस के उपयुक्त उदाहरणों मे टेहरी (ओरछा) राज्य के मुख्तयार नत्थे खाँ की झाँसी म भयकर पराजय के पश्चात् की मनोदशा का करुण चित्रण करने का प्रयास किया गया है। वणनो से यह स्पष्ट होता है कि इस ग्रथ म रस चित्रण साधारण कोटि का ही है।

'मदनेश कृत लक्ष्मीबाई रासो म प्रधानता तो वीर रस की ही है, जसी कि रासो काव्यो म होनी चाहिए परन्तु कवि न प्रसगानुकूल कथावस्तु का रस मय बनान के लिए शृगारपूण स्थलो की सृष्टि क द्वारा वीर क विरोधी रस शृगार को भी उपयुक्त स्थान दिया है। इसके साथ ही युद्ध क मदान म रौद्र भयानक और वीभत्स रस का भी अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया गया है। कहीं-कही हास्य एव अद्भुत रस के भी दशन होते हैं।

वीर रस

लक्ष्मीबाई रासो म युद्ध के अनक स्थलो पर कवि न वीर रस के समायोजन म सफलता प्राप्त की है। मारकाट[66], पतरे[67], हथियारो[68], घोडो[69] सरदारो की उक्तियो[70] युद्ध सचालन[71] आदि स्थितियो क अनक उदाहरण इस ग्रथ म उपलब्ध होते हैं।

जसे–

'कपत फिर कायर सपूत सतरात फिर
भहरात वीर बही चहु आर धारा है।
गजब गिरौ है क परौ है वज्र टूटि कधा
छूटौ विष्णु चक्र भगु फरस प्रहारा है।
मुलकन म नामी सनमाना महीपन की
ताकी जि दगानी कर दई धूरछारा है।
मदनेश किले की कमानी मिजमानी करी,
मुलक मैदान को पिदान फार डारा है॥ [72]

उपयुक्त छन्द मे महारानी लक्ष्मीबाई के तोपची दोस्तखा क द्वारा चलाई गई कमानी नामक तोप के द्वारा नत्थे खा की नामी तोप मुलक मदान का पिदान अर्थात तोप का ऊपरी भाग फाड डालने का ओजस्वी वणन किया गया है।

यही नही, झासा की निम्न मानी जाने वाली जातियो क लोगो के द्वारा दिखलाई गई वीरता का वणन भी कवि ने बडे ओजपूण शब्दा म किया है–

यथा–

'लपट झपट क कुरिया धाये गहि कठिन क्रपान।
जह तह गुदलन लाग, बड टाकम गढ के ज्वान॥

चमरा द द गारी उर मार बरछी बान ।
बाडई हनै बसूला, चीडारे सिरकी सान ।।
हन दुट्टू, तव कैं, काछी कुलार कधान ।
वका बसोर चलावै, काटैं मूरा अनुमान ।।
हन सुनार हतौरा, खुल जाय खोपडा ।बान ।
फूट जाय बगा सौ सौ लौऊ पिचक प्रवान ।[73] आदि

स्पष्ट है कि रासो ग्रन्थ मे कवि ने वीर रस वणन मे कुशलता का परिचय दया है ।

श्रृंगार--

वीर रस प्रधान ग्रन्थ होते हुए भी लक्ष्मीबाई रासो में कुछ स्थलो पर श्रृंगार रस का परम्परायुक्त वणन किया है । सावन के भुजरियो के त्योहार के अवसर पर झासी की युवतियो का नखसिख सौदय वणन[74], नत्थे खाँ के पचो के पहुचने पर झासी रगमहल की सजावट[75], आदि का श्रृंगारपूण वणन किया गया है । इनके अतिरिक्त युद्धस्थल म वीरो की सजावट[76], हाथी व घोडो व ऊटो की सजावट[77] का वणन, युद्ध वेष धारण करते हुए महारानी लक्ष्माबाई[78] का भी श्रृंगारयुक्त वणन है । एक दो उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए जाते है–

'तन कु दन चपक सी मुलाम । मृगनयनी सुक्नासिकी बाम ।'

o o o

'बहु मृगनयनी नाजुक शरीर । कट केहर नाभी अति गम्भीर ।

उपयु क्त छन्दो के नारी सौदय वणन म कवि ने आभूषणो की गिनती गिनाकर रस चित्रण म किंचित अस्वाभाविक्ता उत्पन्न कर दी है । इसी प्रकार सरदारो सिपाहियो हाथी घोडो की सजावट के वणनों मे भी आभूषणा की सूचियाँ गिनाई गई हैं ।

करुण

नत्थे खाँ की हार का समाचार सुनकर टेहरी वाली रानी लिडई सरकार के शोक सतप्त होने तथा झासी के वीरो के युद्ध भूमि म मारे जाने का समाचार सुनकर महारानी लक्ष्मीबाई की शोकाकुल स्थिति का वणन करने म करुण रस की सृष्टि हुई है । उदाहरण निम्न प्रकार दिए जा रहे हैं ।

'सुन पाती मुरझाय गिरी भूपर जाई ।
नत्थ खाँ न झासी की खबर पठाई ।।
तब दौर ताय परिन नें लई उठाई ।
ण्चत उसास ऊची मुख वचन न आई ।।

कँपत शरीर पीर बडी उर मे छाई।
नैनन से नीर डारे मुख गयौ सुखाई ॥
हाँ राम भई कैसी का करौं उपाई।
दैव कटौ माल लुटौ और भई हसाई ॥ [79]

उपयुक्त छन्दो मे लिडई सरकार की शोकातुर स्थिति का स्वाभाविक चित्र अंकित करने का प्रयास किया गया है। दुख की स्थिति मे मूछित होना, उच्छ्वास-निश्वास खीचना, वाणी रुधना कापना, आसू गिरना, प्रलाप आदि करुण रस की पुष्टि करने वाले अवयव है।

मधुकर की मृत्यु का समाचार सुनने के पश्चात रानी लक्ष्मीबाई की दुखमय दशा देखिये।

'मधुकर, मरन सुनौ है जबही भई बाई व्याकुल अत तबही।
हा मधुकर सुत आनाकारी, तुम बल रोर लई ती रारी।
अब केहि के बल करौ लराई, अस विचार जिय जागहु भाई।
छिन मोहि दुखित न देखहु वीरा अब का होत न तन मैं पीरा।
पुन पुन लोचन मोचत बारी निरख दशा भटभए दुखारी ॥ [80]

कहना न होगा कि उपयुक्त छन्द मे कवि ने करुण रस उत्पन्न कर दिया है। मधुकर की मृत्यु से रानी लक्ष्मीबाई को तो दुख हुआ ही वरन रानी की दशा देखकर उपस्थित वीर सरदार भी दुखी हो गये।

वीभत्स

इस कवि ने अपने ग्रथ मे दो तीन स्थलो[81] पर युद्ध क्षेत्र मे वीभत्स वर्णन किये हैं। श्रोणित कीच चील गिद्ध श्वान, वायस, सियारो आदि का लाशे खींचना भूत प्रेत, पिशाच पिशाचिनी आदि के समूहो का रक्त पान करके युद्ध क्षेत्र मे नाचना लाशो का ढेर रक्त की नदी, हाड मास आदि के द्वारा वीभत्स चित्र उपस्थित किये गये हैं। नीचे एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है-

'जौ तौ लरत भट स्रवत शोणित वीर सन्मुख धावहीं।
मारहिं परस्पर क्रोध कर धर मार मार सुनावही।
कौउ नयन कर पग हीन डोलत भूमि बोल अधमरे।
गई धरा शोणित भीज धारा बहत भू गडडा भर।
बहु गृद्ध स्वान श्रगाल वायस झुड आमिष खावहीं।
बहु भूत प्रेत पिशाच जोगिन ताल दै द गावही ॥' [82]

रौद्र एवं भयानक-

युद्ध क्षेत्र के वातावरण की विकरालता मे इन रसो का प्रसगवश वर्णन आ गया है। ऐसे स्थल[83] इस ग्रथ मे अधिक नही हैं। परन्तु जितना भी वर्णन

किया गया है वह अच्छा ही है। कुछ अमृत ध्वनि[84] छन्दों म भी रौद्र और भयानक का चित्रण किया गया है। नीचे उक्त रसा के एक दो उदाहरण दिये जा रह हैं–

दोऊ ओर तन बोल धर मार बानी। झपट्टं करे सूर कैइक गुमानी ॥[85]

० ० ०

तथा

दोऊ भिरे बलबीर काटे भटन के उर भुज शिरा।
रन नगन महि मैं परत पुन उठ भिरत धावें मिरमिरा ॥
भसनेह की दर्शाउ तब तरवार ल आग बढी।
इतत सु केरआ की कुअर कर क्रोध सामें जा अडी ॥'[86]

हास्य रस–

वीर रस प्रधान रचना होते हुए भी मदनेश जी ने इसम हास्य रस की योजना की है। नत्थे खाँ की फौज के सिपाहिया का हतोत्साह होकर बीमारी का बहाना करना खोवा भर गुरधानी बाटना सिपाहियों का भूखा मरना आदि का हास्यपूर्ण चित्र निम्नांकित पक्तियो म देखा जा सकता है–

'महिना हौन लगो इक आई। लाग भूकन मरन सिपाई ॥
यही ठाट नत्थे खाँ ठाटे। खोवा भर गुरधानी बाटे।
जुडरी चना चून तिन पौआ। मब रात क बाटे दौआ।
टुटी दार की सन तन नौना। पान तमाखू कछू बचौ ना।
अब विचार सब कर सिपाई। कम हु भाग चलौ रे भाई।
जो बीमारी को मिम लेव। नत्थ खाँ छुट्टी नहिं देवें ॥
कर और इक अति कठिनाई। ताकी देव लाग घटाई।
मरे दो दिना भूकन जोई। कहन लगे अच्छे भए सोई ॥[87]

छन्द

उपलब्ध रासो ग्रथा मे प्राचीन काव्य परम्परा क अनुसार ही छन्द विधान का स्वरूप पाया जाता है। अधिकाश कवियो के छन्द प्रयोग बहुत कुछ एक जसे हैं। आलोच्य कवियो क द्वारा प्रयुक्त छन्दो का समीक्षा निम्न प्रकार प्रस्तुत की जा रही है–

'धन्द' न परिमान रासो म अनेक छन्दो का प्रयोग किया होगा परतु उपलब्ध अंश मे ५ प्रकार के छदा का प्रयाग मिलता है। इन्होंने भुजगी, भुजंग प्रयात एव छप्पय का अधिक प्रयाग किया है। इनके अतिरिक्त दोहा तथा अरिल्ल छन्द प्रयुक्त हुए हैं।

दलपति राव रासो म जोगीदास न दोहा, कवित्त छन्द, छप्पय भुजगी,

सोरठा, पध्धरी नगस्वरूपिणी, मोती दाम, नराच, अरिल्ल, अर्धनराच कजा, पद्धर रोला, त्रिभंगी, भुजंग प्रयात, क्रिरवान आदि अठारह प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। कवि ने 'छन्द नाम के छन्द' को तीन रूपों मे प्रयोग किया है। प्रथम रूप म १२ वर्ण हैं जो भजंगी छन्द के अधिक निकट हैं। दूसरे प्रकार म छन्द के प्रत्येक चरण म १० वर्ण एवं तीसरे के छन्द मे ८, ८ वर्णों की यति से चार चरण हैं।

करहिया को राइसो म गुलाब कवि न तरह प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है, चौपाई, पद्धरी दोहा, अमृतध्वनि, कुंडलिया, छप्पय भुजंगी, मोतीदाम मालती, दुर्मिल सवया, कवित्त तथा हनूफाल आदि। छन्दों के लक्षणों की दृष्टिगत रखकर गुलाब कवि न छन्द योजना नहीं की जान पडती है। अत अधिकाश छन्द दोष पूर्ण है। प्राय मोतीदाम, मालती तथा दुर्मिल दोषपूर्ण है।

शत्रुजीत रासा म मुख्यत दोहा, कवित्त छप्पय तोटक या ताडक हनूफाल भुजंगा, छन्द, भुजंग प्रयात गीतिका, चौपही त्रिभंगी, मोती दाम या मोती, माधुरी, पाधरी या पध्धरी तथा क्रिरवान आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है। उपर्युक्त तोटक या ताडक प्राय त्रोटक का तद्भव रूप ह। इसी प्रकार मोतीदाम तथा मोती छन्द भी एक ही हैं।

श्रीधर कवि न भी पारीछत रायसा म तेरह प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है जो इस प्रकार ह– छप्पय, दोहा सोरठा, छद, कवित्त भुजंगी त्रिभंगी, त्रोटक, मोतीदाम, कुंडरिया नराच तोमर तथा क्रवान। छन्द नाम के छन्द को कई रूपो मे प्रयुक्त किया गया है।

बाघाट रासा म दोहा अरिल्ल कवित्त कुंडरिया, तथा छन्द आदि केवल पाच प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया गया है। छन्द योजना कहीं कहीं सन्तोष भी है।

'झासी को राइसो म कल्याणसिंह कुडरा ने दोहा[88] सोरठा[89] कुंडलिया[90] कवित्त[91] छप्पय[92], कृपाण[93] सवया[94], अमृत ध्वनि[95] तथा छन्द[96] आदि[97] प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। सवया मालती है केवल एक स्थान पर इसका प्रयोग किया गया है। कवित्त छद म १६ १५ की यति पर कुल ३१ वर्ण होते हैं, परन्तु कल्याणसिंह ने कतिपय स्थानो पर इस छन्द की वर्ण सख्या म मनमानी की है।[98] इन स्थानो पर वर्ण सख्या ३१ के स्थान पर ३३ एवं ३२ हो गई है। प्रधान कल्याण सिंह न जिस छन्द को केवल छन्द नाम से प्रयोग किया है उसे पांच प्रकार के छन्दों म विभक्त किया जा सकता है। यह छद भुजंगी मोतीदाम, हनूफाल त्रोटक एवं माधुरी है। अमृत ध्वनि नाम के छन्द म एक दोहा और एक रोला होता है, परन्तु प्रधान कल्याण सिंह ने केवल रोला ही प्रयुक्त किया है।

लक्ष्मीबाई रासो

छन्द– मदनेश जी ने प्राय कल्याणसिंह कुडरा की छ द शली को अपनाया है। कडरा कृत यासी कौ राइसौ' म छन्दो के नाम न दिये जाकर सबका छ द के नाम स ही रखा गया है। कवल दोहा, चौपाई, कवित्त आदि को ही कवि ने स्पष्ट नाम दिया है। मदनेश जी न भी लक्ष्मीबाई रासो मे हरिगीतिका[98] मोती दाम[99] पद्धरी[100] आदि छदो का नाम न देकर केवल छद मात्र लिख दिया है। ऐस ही कुछ और भी छद हैं जिनका कवि ने नामकरण नही किया है। उदाहरण स्वरूप– 'जब करन चही पयान। गधव सुनाई तान। इस धारा के अन्य कुछ कवियो के ग्रन्थो मे भी इस छन्द का नाम नही दिया गया है। उपयु क्त के अतिरिक्त इस रायसो मे दोहा, चौपाई, सोरठा कुण्डलिया, कवित्त आल्हा चौपाई, सिहर या सर, अमत ध्वनि, किरवान तथा छप्पय आदि छन्दो का प्रयोग किया गया है। साकी नाम का छन्द प्राय दोहा छन्द का ही रूप है। दोहे को गेय बनाने के लिए उसमे कुछ और शब्द या श ब्दाश जोड कर प्राय ग्रामीण लागो को बमभोला गात भी सुना जा सकता है। कवि ने सिहर या सर तथा आल्हा चौपाई छन्दो के साथ साकी छन्द का प्रयोग किया है। स्पष्ट है कि ये दोनो छ द गय हैं और इनके साथ सगति बिठाने के लिए दोहे का इस रूप मे प्रस्तुत किया गया है। पहले दोहे को गवया उतार चढाव के साथ ध्वनि खीचकर सयत रूप से गाता है और फिर ओज पूण रूप मे आल्हा चौपाई पढता है। साकी और आल्हा चौपाई का एक उदाहरण इस प्रकार है।

साकी– सकल सेन तौ अब विचला दई, जा पौंच बाई क पास।
कुनस करतन बाई लख उर मैं उपजो अधिक हुलास ॥[101]

आल्हा चौपाई– तन मन मुस्क्याकें रानी, सो सबहि कहा समुझाय।
, आज बात चपा नें, है मेरी राखी आय ॥[102] आदि,

उपयु क्त पक्तियो मे साकी छन्द और आल्हा चौपाई का तालमेल ठीक दिखलाई पडता है। बस ऊपर के साकी छन्द का दोहा रूप निम्न प्रकार होगा।

'सकल सेन बिचला दई, पौच बाई पास।
कुनस करतन बाई लख, उपजो अधिक हुलास ॥

डॉ० भगवानदास माहौर ने ग्रन्थ के भूमिका भाग म इस छन्द का हवाला दिया है।[103] उन्ह झासी के ही श्री नारायण प्रसाद रावत ने साकी को दीघ दोहा बतलाया था। जिस प्रकार के आल्हा छन्द का प्रयोग मदनेश जी ने किया है उसम प्रथम और तृतीय चरण में १२–१२ एव द्वितीय तथा चतुथ चरण म १३–१३ मात्रायें हैं जो आल्हा छन्द जिसे वीर छन्द कहते हैं की श्रेणी म नहा आता क्योकि वीर के प्रत्येक चरण म ३१ मात्रायें, एव अत म गुरु लघु होता है।

सिहर नाम का छन्द बुन्देलखण्ड म प्रचलित सर छन्द ही है। अमत ध्वनियो का प्रयोग युद्ध वणनो म किया गया है। इस छद के प्रत्यक चरण म २४ २४ मात्रायें एव छै चरण हाते हैं पर मदनेश जी ने अमृत ध्वनिया म पहले दोहे की दो पक्तिया फिर चार पक्तिया अमत ध्वनि की रखी है। ऐसा भी देखने को मिलता है कि किसी किसी अमृतध्वनि के चरणो मे मात्रायें कम व अधिक भी हैं। इस दृष्टि स इस रासो ग्रथ म प्रयुक्त छन्द शैली कुछ विशिष्टता स पूण है। मदनेश जी ने प्रचलित छन्दो को भी कुछ नवीन रूप दकर रखा है। छन्दा के उतार चढाव आदि म काई विशेष अन्तर नही आया है।

'भिलमाय की कटक' म भैंरोलाल ने दोहा, छप्प कवित्त सोरठा, घनाक्षरी सवैया तथा मज आदि सात प्रकार के छन्दो का प्रयोग किया है। झाँसी की कटक' मज नाम के छन्दो म लिखा गया है।

'छछू दर रायसा म दोहा तथा नराच छन्दा का प्रयाग किया गया है। 'गाडर रायसा म कुण्डरिया, छन्द आदि का प्रयाग किया गया है। 'छन्द नाम के छन्द को दा तीन रूपो म प्रयुक्त किया गया है। 'घूस रायसा म दोहा, कुण्डरिया, सोरठा, भुजग प्रयात तथा कवित्त छन्दो का प्रयोग किया गया है।

आलोच्य काव्या म प्रयुक्त छन्दो का विभाजन निम्न प्रकार किया जा रहा है–

१ मात्रिक छन्द (अ) सम (ब) अद्ध सम।
२ वर्णिक छ द (अ) सम (ब) मुक्तक।
३ अनिश्चित छन्द–मात्रिक वर्णिक।

(१) अ–मात्रिक सम छन्द

क्रम स	छन्द	कवि	विवरण
१	तोमर	श्रीधर	(१२ मात्रा अन्त म एक गुरु एक लघु) श्रीधर कवि क द्वारा प्रयुक्त छन्दा म मात्रा का उचित प्रयोग दिखलाई पडता है परन्तु इस कवि न छन्द की चरण सख्या निर्धारित नही रखी है। प्राय दो दो पष्ठो तक एक ही छद समाप्त हुआ है।[104]
२	चौपाई चौपही	विशुनेश मदनेश गाडर रायसा	(१६ मात्रा अन्त मे गुरु लघु) विशुनेश के द्वारा प्रयुक्त इस छन्द मे १६ मात्रा पाई जाती हैं और यह चौपाई के अधिक निकट है। इन्होने इस छन्द के द्वारा सेनापतियो की भाग दौड का वणन किया है।[105] मदनेश ने इस छन्द का प्रयोग नाम मात्र को किया है। इन्होन चौपही तथा चौपाई नाम स जिस छन्द का

प्रयोग किया है वह १६ मात्रा वाली चौपाई छन्द के अधिक निकट है, अत इसका अध्ययन चौपाई छन्द के अन्तरगत किया जायगा।

'गाडर रायसा' म कुछ स्थानो पर इसका प्रयोग किया गया है। कवि ने इस छद मे १५ मात्रा तथा ऽ। का पूर्ण निर्वाह किया है।

३ चौपाई गुलाब मदनश गाडर रायसा

(१६ मात्रा अन्त म, गुरु लघु वर्जित)

मदनश जी न इस छन्द क प्रयोग म बहुत असावधानी की है। मात्राओ की सख्या १५ से लेकर १७ तक पाई जाती है। पर इस प्रकार की चौपाइयाँ कम ही हैं। अधिकाशत १६ मात्रायें ही हैं। १५ मात्रा का उदाहरण निम्न प्रकार है—

तुरत बाइ जब पौंची तहाँ। तोप कमानी लागी जहा ॥[106]

। । । ऽ । । । ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽऽ । ऽ

१५ मात्रा १५ मात्रा

१७ मात्रा का उदाहरण निम्नानुसार है—

'ताक गर हार साइ दीना। बोली रानी वचन प्रवीना ॥'[107]

ऽ ऽ । ऽऽ । ऽ । ऽऽ ऽ ऽ ऽऽ । । । ऽऽऽ

१७ मात्रा १७ मात्रा

मदनश जी ने एक स्थान पर इसका नाम चौपदी लिया है परन्तु वास्तव म वह है चौपाई ही।[108]

गाडर रायसा म इस छन्द का अल्प प्रयोग किया गया है। छन्द शास्त्र की दृष्टि से चौपाइया ठीक हैं। यथा—

कासी लौट घर जब आए। चिट्ठी लिखी नाऊ पठवाए ॥

ऽ ऽ ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ । । ऽऽ

१६ मात्रा १६ मात्रा

४ अरिल्ल चन्द जोगीदास प्रधान आनन्द सिंह कुडरा

१६ मात्रा तथा अन्त म ।। अथवा । ऽ ।

चन्द द्वारा प्रयुक्त इस छन्द म १६ मात्राय तथा ।। हैं।

जोगीदास न दलपति राव रायस म एक स्थान पर केवल चार अरिल्ल छन्दों का प्रयोग किया है।[109] इनके द्वारा प्रयुक्त सभी अरिल्ल सदोष है। उनमे से किसी भी छन्द म किसी भी चरण मे मात्राओं का उचित निर्वाह

नहीं किया गया है । प्राय १८ १६, २०, २१ तथा २२ मात्राओ वाले चरण पाये जाते हैं । दलपति राव रासो म इस छन्द म शुभकण और दलपति राव की विजय का वणन किया गया है ।

प्रधान आनन्द सिंह कुडरा ने 'बाघाट की रासो' म एक स्थान पर चार तथा दूसरे स्थान पर एक केवल पाच अरिल्ला का प्रयोग किया है । वे सभी दोषपूर्ण हैं । छन्द के चारो चरणो म २२-२१ तथा २१ २२ मात्राओ का क्रम पाया जाता है ।[110] इन्होने इस छन्द के द्वारा सलाह मशविरा तथा सेना प्रयाण का वणन किया है ।

५ पद्धरी — जोगीदास, गुलाब, बिशुनेश, मदनेश — १६ मात्रा अन्त म नगण ।

जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त यह छन्द सदोष है । कहीं कहीं १५ मात्रा तथा अन्त म नगण पाया जाता है ।[111] एकाध स्थान पर चरणान्त म ऽ ऽ । भी तथा चरण सख्या ४ के स्थान पर ८ हो गई है ।[112] एक स्थान पर तो चरण सख्या ४० पाई जाती है अथवा लिपिकारो के प्रमाद से छन्द गणना म यह भूल हुई है ।[113] दलपति राव रासो म इस छन्द के द्वारा सेना की कूच तथा दूत गमनागमन का वणन किया गया है । इन्होने इस छन्द का नाम पद्धर भी लिखा है ।[114]

शत्रुजीत रासो म बिशुनेश भाट ने एक स्थान पर केवल ५ पद्धरी छन्द दिए हैं ।[115] इन्होने इस छन्द द्वारा अवतार वणन एव राजा के यश का वणन किया है ।

'मदनेश' ने जिस छन्द को केवल 'छन्द' नाम दिया है, उनमे से बहुत से पद्धरी छन्द हैं ।[116] इन छन्दो द्वारा कवि ने सेना प्रयाण युद्ध लूट तथा युद्ध सामग्रिया का वणन किया है ।

६ रोला — जोगीदास — (११ १३ की यति स २४ मात्रायें) ।

दलपति राव रासो म प्रयुक्त इस छन्द म मात्राओ की शुद्धता पर तो ध्यान दिया गया पर एक ही छन्द मे १० चरण रख देने से छन्द दोषपूर्ण हो गया है ।[117] जोगीदास ने इस छन्द के द्वारा शूरवीरो का वणन किया है ।

७ गीतिका विशुनेश (२६ मात्रा, १४ १२, अन्त मे लघु गुरु)

शत्रुजीत रासो म तीन स्थानों पर इस छन्द का प्रयोग हुआ है।[118] इस रासो म ३० गीतिका छन्द हैं, जिनम तीन छन्दो म चार चार चरण हैं। शेष सभी छन्दों मे दो-दो चरण रखे गए हैं। विशुनेश ने हरि गीतिका छन्द को ही गीतिका के नाम से प्रयुक्त कर दिया है। क्योकि इनके द्वारा प्रयुक्त गीतिका छन्दों मे २८ मात्राओं वाले चरण पाये जाते हैं। इस छन्द के द्वारा इस ग्रन्थ मे सेना प्रयाण राजा का युद्ध के लिए सजकर तैयार होने तथा युद्ध प्रयाण का वणन किया गया है।

८: हरि गीतिका मदनेश (१६, १२ कुल २८ मात्राओं का चरण अन्त म लघु गुरु)

मदनेश ने इस छन्द की पद सख्या पर ध्यान नहीं दिया है।[119] इस छन्द के द्वारा युद्ध क्षेत्र म वीरो के युद्ध कौशल पतरे बाजी का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

८ त्रिभगी जोगीदास विशुनेश श्रीधर (१० ८ ८ ६ की यति पर ३२ मात्रा तथा अन्त म गुरु वण)

जोगीदास ने केवल एक स्थान पर एक छन्द का प्रयोग किया है, जिसमे छ चरण हैं। इस छन्द क द्वारा पठानो की जातियो का वणन किया गया है।[120]

विशुनेश के ग्रन्थ म कुल चार त्रिभगी छन्द हैं।[121] इनके द्वारा प्रयुक्त इस छन्द म चार चरण हैं। इन्होने इस छन्द के द्वारा सैन्य शक्ति तथा वीरत्व का ओजपूण वणन किया है।

श्रीधर ने इस छन्द के द्वारा वीरो और सरदारों की युद्ध सज्जा तथा वीर जातियो का वणन किया है। इनके द्वारा प्रयुक्त इस छन्द मे ८ चरण पाए जाते हैं।[122]

उपयु क्त विवरण से स्पष्ट होता है कि इन कवियों न इस छन्द की चरण सख्या निर्धारित नही रखी है, परन्तु सबने मात्राओ आदि के अनुसार छन्दो का ठीक प्रयोग किया है।

१० आल्हा चौपाई मदनेश 'मदनेश' जी द्वारा प्रयुक्त आल्हा चौपाई छन्द के प्रथम और तृतीय चरण म १२ १२ मात्रायें, दूसरे और चौथे चरण म १३ १३ मात्रायें चरणान्त में सामान्यत रगण

नहीं किया गया है। प्राय १९, १८, २०, २१ तथा २२ मात्राओ वाले चरण पाये जाते हैं। दलपति राव रासा म इस छन्द म शुभकण और दलपति राव की विजय का वर्णन किया गया है।

प्रधान आन द सिंह कुडरा न वाघाट की रासो मे एक स्थान पर चार तथा दूसरे स्थान पर एक कुल पाच अरिल्ला का प्रयोग किया है। व सभी दोषपूण हैं। छन्द के चारो चरणो मे २२ २१ तथा २१ २२ मात्राओ का क्रम पाया जाता है।[110] इन्होंने इस छन्द के द्वारा सलाह मशविरा तथा सेना प्रयाण का वणन किया है।

पद्धरी जागीदास १६ मात्रा अन्त म जगण।

गुलाव विशुनेश मदनेश

जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त यह छन्द सदोष है। कहीं कहीं १५ मात्रा तथा अन्त म नगण पाया जाता है।[111] एकाध स्थान पर चरणान्त म ऽ ऽ। भी तथा चरण संख्या ४ के स्थान पर ८ हो गई है।[112] एक स्थान पर तो चरण संख्या ४० पाई जाती है अथवा लिपिकारो के प्रमाद से छन्द गणना म यह भूल हुई है।[113] दलपति राव रासो म इस छन्द के द्वारा सेना की कूच तथा दूत गमनागमन का वणन किया गया है। इन्होंने इस छन्द का नाम पद्धर भी लिखा है।[114]

शत्रुजीत रासो म किशुनश भाट ने एक स्थान पर केवल ५ पद्धरी छन्द दिए है।[115] इन्होंने इस छन्द द्वारा अवतार वणन एव राजा के यश का वणन किया है।

'मदनेश ने जिस छन्द को केवल 'छन्द नाम दिया है, उनमे से बहुत स पद्धरी छन्द हैं।[116] इन छन्दो द्वारा कवि ने सेना प्रयाण युद्ध लूट तथा युद्ध सामग्रियो का वणन किया है।

रोला जोगीदास (११ १३ की यति से २४ मात्रायें)।

दलपति राव रासो म प्रयुक्त इस छन्द म मात्राओ की शुद्धता पर तो ध्यान दिया गया पर एक ही छन्द मे १० चरण रख देने से छन्द दोषपूण हो गया है।[117] जोगीदास न इस छन्द के द्वारा शूरवीरो का वणन किया है।

७ गीतिका विशुनश (२६ मात्रा, १४ १२, अन्त मे लघु गुरु)

शत्रुजीत रासो मे तीन स्थानो पर इस छन्द का प्रयोग हुआ है।[११९] इस रासो म ३० गीतिका छन्द हैं, जिनम तीन छन्दो मे चार चार चरण हैं। शेष सभी छन्दा म दो दो चरण रख गए हैं। विशुनेश ने हरि गीतिका छन्द को ही गीतिका के नाम से प्रयुक्त कर दिया है। क्योंकि इनके द्वारा प्रयुक्त गीतिका छन्दा म २८ मात्राओ वाले चरण पाये जाते हैं। इस छन्द के द्वारा इस ग्रन्थ म सेना प्रयाण राजा का युद्ध के लिए सजकर तैयार होने तथा युद्ध प्रयाण का वणन किया गया है।

८ हरि गीतिका मदनेश (१६, १२ कुल २८ मात्राओ का चरण अन्त म लघु गुरु)

'मदनश' ने इस छन्द की पद सख्या पर ध्यान नहीं दिया है।[११९] इस छन्द के द्वारा युद्ध क्षेत्र मे वीरो के युद्ध कौशल पतरे बाजी का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

९ त्रिभगी जोगीदास विशुनेश श्रीधर (१०, ८ ८ ६ की यति पर ३२ मात्रा तथा अन्त मे गुरु वण)

जोगीदास ने केवल एक स्थान पर एक छन्द का प्रयोग किया है, जिसमे छ चरण हैं। इस छन्द के द्वारा पठाना की जातियो का वणन किया गया है।[१२०]

विशुनश के ग्रन्थ म कुल चार त्रिभगी छन्द हैं।[१२१] इनके द्वारा प्रयुक्त इस छन्द मे चार चरण हैं। इन्होने इस छन्द के द्वारा सैन्य शक्ति तथा वीरत्व का ओजपूण वणन किया है।

श्रीधर ने इस छन्द के द्वारा वीरो और सरदारो की युद्ध सज्जा तथा वीर जातियो का वणन किया है। इनके द्वारा प्रयुक्त इस छन्द मे ८ चरण पाए जाते हैं।[१२२]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि इन कवियों ने इस छन्द की चरण सख्या निर्धारित नही रखी है, परन्तु सबने मात्राओ आदि के अनुसार छन्दों का ठीक प्रयोग किया है।

१० आल्हा चौपाई मदनेश 'मदनेश' जी द्वारा प्रयुक्त आल्हा चौपाई छन्द के प्रथम और तृतीय चरण म १२ १२ मात्रायें, दूसरे और चौथे चरण म १३ १३ मात्रायें, चरणान्त म सामान्यत रगण

(ऽ।ऽ) और जगण (।ऽ।) नही आता, अन्त म । होता है। यह छन्द तुकात होता है इसे प्राय द्रुत दादरा ताल में गाया जाता है। यह ३१ मात्राओ और अन्त मे गुरु लघु वाले आल्हा छन्द मे भिन्न है।

११ सिहर 'मदनेश'

मदनेश द्वारा प्रयुक्त सिहर सर ही है। साधारण तौर पर सैर के प्रारम्भ म एक दोहा रखा गया है, पश्चात २२ मात्राओ की दादरा ताल की दो पक्तियाँ होती हैं, जिसकी अतिम पक्ति टेक (ध्रुव पक्ति) होती है, फिर उसी तरह के चार चार चरणा के चार चौके होते हैं। सभी चौकों के अन्तिम चरण मे वही ध्रुव पक्ति होती है। मदनेश के सरो म आठ-आठ पक्तियो के चार चार चौके पाए जाते हैं।[123] सैर छन्द बुन्देलखण्ड म ग्रामीण अचलो मे आज भी जनप्रिय है। सैर गायक मण्डलियाँ बाँधकर ढोलक पर इसे गाते हैं।

मदनेश ने लक्ष्मीबाई रासो के छठवें भाग म सभी सिहर या सर छन्द ही रखे हैं तथा समाप्ति पुष्पिका मे भी छन्द का उल्लेख इस प्रकार किया है– ' सिहर छन्दानुसारेण पत्र गमनागमन नाम षष्ट भाग सम्पूर्ण'[124] इस छन्द के द्वारा मदनेश ने पत्र के आने जाने तथा झाँसी म पराजय के पश्चात हुई भारी हानि से दुखी टेहरी वाली रानी के दुख और पश्चाताप का वर्णन किया है।

१२ दोहा, दोहरा

चद जोगीदास गुलाब किशुनेश, श्रीधर प्रधान आनन्द सिंह प्रधान कल्याणसिंह मदनेश, भैरोंलाल छछूदर रायसा घूस रायसा (पृथीराज)

(विषम चरणो मे १३ १३ एव सम चरणो म ११ ११ मात्रायें अन्त मे ऽ।) दोहा छन्द का प्रयोग प्राय सभी कवियो ने किया है। सरलता के कारण ही इसे अधिक अपनाया गया है।

उन्होंने इस छन्द के द्वारा चिट्ठी भेजने, सेना प्रयाण सरस्वती, गणेश आदि देवताओ तथा गुरु और ईश्वर की वन्दना, राज्य वंशों का वर्णन, ग्रन्थ निर्माण का उद्देश्य कवि परिचय, तिथि निर्देश, आश्रयदाता की प्रशसा युद्ध की तयारी उपदेश, नीति आदि विषयो का प्रतिपादन किया है। घटना का परिचयात्मक रूप प्रस्तुत करने के लिए भी इस छन्द का प्रयोग किया गया है।

उपयुक्त दोहा छन्द के दो नाम मिलते हैं दोहा और दोहरा। दोहरा दोहा का ही राजस्थानी संस्करण है। प्रधान आनन्द सिंह कुडरा ने 'खाधाट का रासो' मे सभी स्थानों पर दोहरा नाम का ही प्रयोग किया है केवल एक स्थान पर 'दोहा' नाम प्रयुक्त हुआ है।[185]

१३ साकी मदनेश

साकी या साखी वास्तव मे दोहा ही है। दोहा की भांति ही इसमें भी मात्राओं का क्रम १३ ११ ही होना चाहिए। परन्तु गाने वालो ने गेयता के लिए मुख सुख की दृष्टि मे इसमे कुछ और शब्द या शब्दांश जोड़कर साकी नाम दे दिया। बस भोला गाने वालो के मुह से भी दोहा का परिवर्तित गेय रूप सुना जा सकता है। 'मदनेश' द्वारा प्रयुक्त साकी छन्द का एक उदाहरण निम्न प्रकार है–

'इतलख आवत बाई साब कौं, सूरन कौं चडौ रन चाउ।
मरबे को जे डरपें नहिं, उर ओडें, सनमुख घाउ ॥[186]

उपयुक्त साकी का दोहा रूप निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है–

'इत लख बाई साब को, सूरन का रन चाउ।
मरबे का डरपें नहिं, ओडें सनमुख घाउ ॥

कहीं-कहीं पर तो 'मदनेश' जी ने शुद्ध दोहा ही साका के नाम से लिख दिया है।[187] तथा किसी छन्द में साकी और दोहा का मिला जुला रूप देखा जा सकता है–

कसक रयौ है कोमल जाघ में, गोली कीनो घाउ।
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ।
तुरत मुसाफ बुलाय कें, तब ताकौ जतन कराउ ॥[188]
। । । । ऽ । । ऽ । ऽ

उपयुक्त साकी के द्वितीय चरण में ११ तथा तृतीय चरण में १३ मात्रायें हैं जसा कि दोहे में होना चाहिए।

एक स्थान पर आधी साकी और आधा दोहा रखा गया है–

अस कहक बाई ने सब खुस कर लये और विदा करी है फेर।
लेउ बुलाय वजीर खाँ मन्न न लागें दर ॥[189]

उपयुक्त छन्द में प्रथम पंक्ति साकी की और दूसरी पंक्ति दोहा की है।

किसी किसी साकी की लय आल्हा चौपाई से मिलती हुई है।[130] अगल म आल्हा चौपाई के पूव साकी का प्रयोग गेयता और लय वद्धता की दृष्टि से ही किया गया है।

१४ सोरठा जोगीदास (विषम चरण म ११ सम चरण म १३ कुल २४ मात्रायें)
श्रीधर यह छन्द दोहा का उल्टा रूप है।
कल्याणसिंह जोगीदास ने इस छन्द द्वारा युद्ध तथा युद्ध विजय की
मदनेश सूचना देने, स्थान व घटना आदि का सूत्र रूप म परिचय
भैरोलाल देने, समाचार भेजने, मुसलमान सरदारो की युद्ध की
छछू दर रायसा सज्जा आदि का वणन किया है।
घूस रायसा श्रीधर ने सेना प्रयाण युद्ध सज्जा घोडा की
(पृथाराज) जातियो आदि का वणन सोरठा द्वारा किया गया है।

कल्याण सिंह ने इस छन्द के द्वारा वीरो का नाम उल्लेख, युद्ध नीति की चर्चा, वीर प्रशसा आदि विषयो का वणन किया है।

मदनेश ने दूतो, वकीलो, पत्रो आदि की बातचीत तथा तोप का गोला चलन का वणन इस छद म किया है।

भैरो लाल ने धावन भेजने, समाचार ले जाने के वणन ही इस छन्द के द्वारा किए हैं।

पृथीराज ने अपने घूस रायसा म केवल तीन सोरठा छन्द प्रयुक्त किए हैं। इनमे से दो के सभी चरणो म १३ १३ मात्रायें पाई जाती हैं।

१५ अमृत गुलाब (एक दोहा–एक रोला) इस छन्द के रोला म ८ ८
ध्वनि कल्याण मात्राओ की यति पर यमक को तीन बार क्रमबद्ध के
सिंह साथ रखा जाता है। रोला के चारो चरणो म २४ २४
मदनेश मात्रायें होती है। इस प्रकार इस छन्द के कुल ६ चरणो म १४४ मात्रायें होती हैं।

प्रधान कल्याण सिंह ने जिस अमृतध्वनि का प्रयोग किया है, उसमे केवल रोला ही है। इनके द्वारा प्रयुक्त इस छन्द म ८–८–८–६ की यति पर प्रत्येक चरण म ३० ३० मात्राए पाई जाती हैं तथा चरण के अंतिम शब्द या शब्दांश से अगले चरण का प्रारम्भ किया गया है।[131]

मदनेश द्वारा प्रयुक्त अमृतध्वनियो म पहले दोहा फिर रोला है, तथा दोहे के अंतिम चरण से रोला का

प्रारम्भ किया गया है। वास्तव म अमत ध्वनि में ७–७ मात्राओ के तीन खण्ड होते है, जिनमे कुल २१ मात्रायें होती है परन्तु छन्द के चरण मे प्रयुक्त शब्दो के वर्णों म ध्वन्यात्मकता के लिए द्वित्व उत्पन्न करके कुछ और मात्रायें बढ़ाकर उस २४ मात्राओ का कर लिया जाता है।

'मदनेश जी ने कई प्रकार की अमतध्वनियो का प्रयोग किया है। डा० भगवान दास माहौर के अनुसार 'इनका सामान्य लक्षण यही है कि इनके आरम्भ म एक दोहा होता है और फिर दोहे के अतिम शब्दो का दुहरा कर कोई अन्य छन्द आता है तदनन्तर एक उल्लाला छन्द। इन छन्दो मे आन्तरिक अनुप्रास जिसे 'जमक' भी कहते हैं उसी प्रकार होता है जसे नियमित टकसाली अमत-ध्वनि म और अन्तिम चरण के अन्त के अन्त मे वे ही शब्द आते हैं जो दोहे के आदि म।[132]

मदनेश की एक अमृतध्वनि की रचना कुछ विशेष निराली है। इसमे इन्होंने पहले दोहा फिर १६ मात्रा वाले दो चरण तथा अतिम दो चरण २८ मात्रा वाले हैं।[133] कुछ अमतध्वनियो म पहले दोहा है फिर ३२ मात्रा वाले दो रोला के चरण तथा दो २४ मात्राओ वाले रोला के चरण पाये जाते हैं।[134] एक अमतध्वनि मे पहले दोहा फिर दो चरण ४० मात्रा वाले तथा बाद म २४ मात्रा वाले दो चरण हैं।[135] एक अमत ध्वनि में दोहे के पश्चात् २८–२८ मात्राओं के दो चरण फिर २६ मात्रा का एक चरण फिर १ चरण २८ मात्रा का है।[136] सभवत इस छन्द म कवि सभी चरण २८ मात्राओ के ही रखना चाहता होगा पर भूल से एक चरण में २६ मात्राये रह गई हैं। जिस छन्द का नाम 'मदनेश' ने 'अमत ध्वनि दूसरी' लिखा है, उसमे पहले दोहा फिर २४–२४ मात्रा वाले रोला के चार चरण प्रयुक्त किए हैं।[137]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस छन्द को भिन्न भिन्न प्रकार से प्रयुक्त करने की क्षमता मदनेश म थी अथवा उन्होंने कवि स्वातन्त्र्य के नाम पर कुछ असावधानी की है।

१६ कुण्डलिया गुलाब कुण्डरिया श्रीधर प्रधान आनन्दसिंह, प्रधान कल्यानसिंह मदनेश, गाडर रायसा घूस रायसा (पृथीराज)	(दोहा+रोला कुल ६ चरण और १४४ मात्रायें) विभिन्न कवियों ने इस छन्द के द्वारा नीति, विचार प्रधान, विमर्श तथा युद्ध चर्चा आदि का वर्णन किया है।
१७ छप्पय चंद छप्प जोगीदास छप्प गुलाब	रोला और उल्लाला को मिलाकर छप्पय बनता है। पहले चार पद रोला के फिर दो पद उल्लाला के होते हैं। उल्लाला में कहीं २६ कहीं २८ मात्रायें होती हैं और पूरे छप्पय में कुल १४८ या १५२ मात्रायें होती हैं। चंद ने इस छन्द का प्रयोग विभिन्न विषयों के वर्णन के लिये किया है, किन्तु परिमाल रासो के उपलब्ध अंश में केवल एक छप्पय पारस्परिक चर्चा के विषय में प्रस्तुत किया गया है।

जोगीदास ने इस छन्द के द्वारा राजा के शौर्य एवं वैभव की प्रशंसा[138] युद्धस्थल मे वीरों की दर्पोक्तियां[139] सेना प्रयाण[140], सेना की गणना व युद्ध वर्णन[141] वीरों के नामों व जातियों का वर्णन[142] समाचार प्रेषण[143] युद्ध के वीभत्स चित्रण[144] नीति[145] वीरों का युद्ध के लिए तैयार होना[146], दलपति राव की मृत्यु[147] दलपति राव की दाह क्रिया[148], दान वैभव[149], आदि विषयों का वर्णन किया है। कहीं-कहीं इनके छप्पय सदोष हैं। एक छप्पय के रोला के तीसरे चरण में २२ मात्रायें ही हैं तथा उल्लाला में एक ही चरण है तथा यह छप्पय दो को मिलाकर एक है इसकी पद संख्या ११ है।[150] यहाँ छन्द गणना मे भूल हुई लगती है।[151] एक स्थान पर प्रयुक्त छप्पय के रोला के चारों चरणों की मात्राओं में व्यतिक्रम पाया जाता है। क्रमशः २० २४ २३ २४ मात्रायें रखी गई हैं।[152] एक छप्पय मे ११ चरण पाये जाते हैं जिसमें प्रत्येक चरण में १४ १५ अथवा १६ मात्रायें रखी गई हैं। उन्होंने छप्पय, छप्प नाम इस छन्द को दिये हैं।[153]

किशुनेश ने इस छन्द द्वारा आश्रयदाता की प्रशंसा, वीरों की दर्पोक्ति, सेना की गणना युद्ध की भयंकरता

आदि का वर्णन किया है। इनके छप्पय छन्द शास्त्र के अनुसार ठीक हैं। केवल एक छप्पय मे रोला का द्वितीय चरण नही पाया जाता है।[154]

श्रीधर ने पारीछत रायसा म छप्पय द्वारा गणेश वन्दना, राजा का यश, वीरो की दर्पोक्ति, सेना तथा युद्ध के वर्णन किए हैं।

प्रधान कल्याण सिंह ने छप्पय द्वारा राज मर्यादा, राजनीति, सत्य, युद्ध क्षेत्र मे हथियारो के चलने युद्ध म वीरो को प्रोत्साहन देन आदि का वर्णन किया गया है।

मदनेश ने केवल एक छप्पय मे युद्ध क्षेत्र म दोनों सेनाओ की भिड़न्त तथा हथियारों के चलने, घायलो के घूमने, तथा वीरों के युद्ध क्षेत्र मे 'मार मार' उच्चारण आदि विषयों का वर्णन किया है।[155]

भैरोलाल ने इसका नाम छप्पै दिया है, परन्तु यह छन्द छप्पय का आभास मात्र है क्योंकि इसम मात्रा व चरण आदि की दृष्टि से अशुद्धियां हैं।

१८ कजा जोगीदास

इस छन्द म १३-१३ की यति पर प्रत्येक चरण मे २६ मात्रायें होती है। अधिकांशत अनुस्वारान्त शब्दावली का प्रयोग किया गया है। पद संख्या अनिश्चित है। इस छन्द द्वारा युद्ध की भयंकरता का वर्णन किया गया है। यह छन्द आलोच्य काव्यों म केवल दलपति राव रासोकार जोगीदास ने प्रयुक्त किया है। छन्द का उदाहरण निम्नानुसार है।

कांपता श्री दलपत्त, धापता तह सुहत्त।
वाहता जोर समथ्थ, चाहता और न सथ्थ॥'[156]

१९ मंज भैरोलाल, भग्गी दाऊजू 'श्याम'

मंज म २८-२८ मात्राओ वाले चार चरण होते हैं। यह गेय छन्द है। भैरोलाल ने केवल एक मंज म श्यामल सिंह व केशरीसिंह आदि वीर सरदारों की पारस्परिक चर्चा का वर्णन किया है। भग्गी दाऊ जू श्याम ने अपने 'झांसी कौ कटक' म मंज का सफल प्रयोग किया है। इन्होंने पूरा कटक मंज छन्द म ही लिखा है। इसमें मंज के पहले एक दोहा रखा गया है फिर चार-चार पदों के मंज हैं, जिनम प्रत्येक की चौथी पंक्ति टेक के रूप म बार

१६ कुण्डलिया गुलाब कुण्डरिया श्रीधर प्रधान आनन्दसिंह, प्रधान कल्यानसिंह मदनेश, गाडर रायसा घूस रायसा (पृथीराज)	(दोहा+रोला कुल ६ चरण और १४४ मात्रायें) विभिन्न कवियो ने इस छन्द के द्वारा नीति, विचार विमश तथा युद्ध चर्चा आदि का वणन किया है।
१७ छप्पय चद छप्प जागीदास छप्प गुलाव	रोला और उल्लाला को मिलाकर छप्पय बनता है। पहले चार पद रोला के फिर दो पद उल्लाला क होते हैं। उल्लाला मे कही २६ कही २८ मात्रायें होती हैं और पूरे छप्पय मे कुल १४८ या १५२ मात्रायें होती हैं। चद ने इस छन्द का प्रयोग विभिन्न विपयो के वणन के लिये किया है, किन्तु परिमाल रासो क उपलब्ध अश मे केवल एक छप्पय पारस्परिक चर्चा के विषय मे प्रस्तुत किया गया है।

जोगीदास न इस छन्द के द्वारा राजा के शौय एव वभव की प्रशसा[138] युद्धस्थल म वीरा की दर्पोक्तिया[139] सना प्रयाण[140], सेना की गणना व युद्ध वणन[141] वीरो के नामा व जातियो का वणन[142] समाचार प्रेपण[143] युद्ध के वीभत्स चित्रण[144] नीति[145], वीरो का युद्ध के लिए तैयार होना[146], दलपति राव की मृत्यु[147] दलपति राव की दाह क्रिया[148], दान वभव[149] आदि विपया का वणन किया है। कही-कही इनके छप्पय सदोप हैं। एक छप्पय के रोला के तीसरे चरण म २२ मात्रायें ही हैं, तथा उल्लाला मे एक ही चरण है तथा यह छप्पय दो को मिलाकर एक है इसकी पद सख्या ११ है।[150] यहाँ छन्द गणना म भूल हुई लगती है।[151] एक स्थान पर प्रयुक्त छप्पय क राला के चारो चरणो की मात्राओ म व्यतिक्रम पाया जाता है। क्रमश २० २४, २३ २४ मात्रायें रखी गई हैं।[152] एक छप्पय मे ११ चरण पाय जाते हैं, जिसम प्रत्यक चरण मे १४ १५ अथवा १६ मात्रायें रखी गई हैं। उन्होने छप्पय, छप्य नाम इस छन्द को दिये हैं।[153]

किशुनेश ने इस छन्द द्वारा आश्रयदाता की प्रशसा वीरा की दर्पोक्ति, सेना की गणना युद्ध की भयकरता

श्रीधर के द्वारा प्रयुक्त भुजगी छन्द म १२ १३ व १४ वण पाए जाते हैं। इस छन्द द्वारा उन्होने वीर जातियो गना, युद्ध प्रयाण आदि के वणन किये हैं। इनका भी यह छन्द भुजग प्रयात क अधिक निकट है। विवचन से स्पष्ट है कि उपयुक्त कविया के द्वारा प्रयुक्त यह छन्द भुजंग प्रयात के ही अधिक निकट ह।

२३ तोटक किशुनेश, तोटक श्रीधर तोडक टोटक — (१२ वण ४ सगण) किशुनेश ने इस छन्द का सवत्र शुद्ध रूप म प्रयोग किया है। उन्होने आश्रयदाता क शौय परामश सन्य युद्ध क्षेत्र की मारकाट, नीति आदि का वणन इस छन्द म किया है।

श्रीधर के द्वारा इस छन्द के प्रयोग म खूब मनमानी की गई है। इन्होंने प्रत्यक चरण में ८ या १० वण रखे हैं तथा गण दोप भी पाया जाता है। छन्द की पद सख्या अनिश्चित है। एक उदाहरण निम्न प्रकार है–

'बुधवत जो इमि होइ, तैं काल जान सोइ।
अति तेज तरन प्रकाश सतवत वदउ जास ॥[165]

उपयुक्त पक्तियो में वण सख्या क्रमश ८ ७, १० व ८ है।

इन कवियो द्वारा इसका तोटक तोडक, टोटक आदि नामो से प्रयोग किया गया है।

२४ भुजग प्रयात चन्द जोगीदास किशुनेश घूसरायसा (पृथ्वाराज) — (प्रति चरण १२ वण तथा य य य य होते हैं) चद न कही कही १३ तथा १४ वण तक एक चरण में रखे हैं पर अधिकाश १२ वर्ण ही है। इन्होंने इस छन्द द्वारा युद्ध म जान वाले वीरो की नामावली तथा युद्ध का उल्लेख किया है।

जोगीदास न इस छन्द का एक स्थान पर दलपति राव के युद्ध वणन क लिए प्रयोग किया है। छन्द की पद सख्या अनिश्चित है तथा गणदोप भी पाया जाता है। उदाहरण निम्न प्रकार है–

हस देखिनारद सारद गाव।
लग वीर कर आप ठाडो वजाव।[166]

उपयुक्त छन्दाश की द्वितीय पक्ति में १३ वर्ण हैं तथा यगण का क्रम दानो पदो में दोषपूर्ण है।

बार दुहराई गई है। इस प्रकार य मज अच्छे ग्रामे गीत का सा आनन्द प्रदान करते दिखाई देते हैं।

वर्णिक सम चतुष्पदी

२० अद्ध नाराच — जोगीदास — प्रत्येक चरण मे कुल ८ वण तथा जगण रगण एव लघु गुरु होते हैं। जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त अद्ध-नाराच पूणतया शुद्ध है। इनके द्वारा कवि ने सना की सजावट, सेना प्रयाण, नगाडो का बजना, कायरो का पलायन आदि का वणन किया है।[157]

२१ नाग सरूपिनी (नग स्वरूपिणी) — जोगीदास — अद्ध नाराच की भाँति ही इस छ द म भी प्रत्यक चरण म ८ वण तथा ज र ल ग होते हैं। जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त इस छ द की पद सख्या अनिश्चित है।[158] इन्होने इस छन्द द्वारा सन्य वणन व युद्ध वणन किया है।

२२ भुजगी चद — जोगीदास गुलाब, बिशुनेश, श्रीधर। — ११ वण, तीन यगण अ त मे दो गुरु वण।

चद के भुजगी छन्दो म १२ तथा कही १३ वण भी हैं तथा अत म ल ग है। इस छन्द द्वारा उन्होने सेना सचालन तथा युद्ध आदि का वणन किया है। जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त भुजगी मे भी सवत्र १२ वण ही रखे गये है। इस छन्द में इन्होन सना की तयारी व चढाई, वीरो का नामोल्लेख[159] युद्ध क मोर्चे लगाना सन्य व्यवस्था तथा युद्ध क्षेत्र म मारकाट[160], वीर जातिया तथा स्थाना के नामो का उल्लेख[161] किया है। जोगीदास ने पद सख्या मे बहुत मनमानी की है। इनके इस छन्द मे चरण सख्या क्रमश ३८ ७४, १००, १२ ८ ६ १०, १६ व १० पाई जाती है।[162] गुलाब कवि ने भी इस छन्द म १२ वण प्रत्येक चरण म रखे हैं। इन्होने इस छन्द म युद्ध का वणन किया है।

बिशुनेश ने भी सवत्र १२ वर्णों का ही प्रयोग किया है तथा पद सख्या चार रखी है परन्तु एक स्थान पर पद सख्या २-२[163] तथा एक स्थान पर ८ पाई जाती है।[164] इन्होंने इस छन्द के द्वारा युद्ध प्रयाण, सन्य वणन, परामर्श कूच लूट युद्ध मे तोप चलने व उससे गोलो क टकरान का रोमाचकारी वणन, राजा की प्रशसा तथा युद्धस्थल म मारकाट का वणन किया है।

२८ दुर्मिल गुलाब — इसमें प्रत्येक चरण में २४ वर्ण तथा आठ सगण होते हैं। गुलाब के द्वारा प्रयुक्त दुर्मिल सदोष है। इनके इस छन्द की प्रथम पंक्ति में २२ वर्ण तथा चतुर्थ पंक्ति में यति भंग दोष पाया जाता है।[171]

२८ सवैया प्रधान कल्याण सिंह भैरोलाल — प्रधान कल्याणसिंह के द्वारा प्रयुक्त किया गया सवैया मालती सवैया है। इस छन्द द्वारा इन्होंने यात्रा का साधारण सा वर्णन किया है।[172] भैरोलाल का सवैया भी मालती ही है। इनके सवैया में यत्र तत्र गण दोष पाया जाता है। इस छन्द द्वारा इन्होंने यात्रा, परामर्श, वीर दर्पोक्ति युद्ध प्रयाण तथा युद्ध वर्णन किया है।

वर्ण मुक्त वृत्त

३० कवित्त जोगीदास गुलाब किशुनेश श्रीधर प्रधान आनन्दसिंह प्रधान कल्याणसिंह मदनेश' भैरो लाल पृथीराज (धम रायसा) — (प्रत्येक चरण में ८, ८, ८, ७ की यति पर अथवा १६, १५ कुल ३१ वर्ण होते हैं।)

यह छन्द पुराने कवियों द्वारा बहुत अपनाया गया है। जोगीदास ने दलपतिराव रासो में २३ कवित्त छन्द दिए हैं। इनके इन छन्दों में वर्ण संख्या निश्चित नहीं रखी गई है। कुछ कवित्त छन्द शास्त्र की दृष्टि से ठीक हैं।[173] एक स्थान पर सभी चरणों में ३२-३२ वर्ण रखे गए हैं।[174] कुछ कवित्तों में वर्ण संख्या में पर्याप्त असावधानी से वर्ण रखे हैं। इनमें वर्ण क्रम २६ से लेकर ३५ तक पाया जाता है। एक छन्द में वर्ण क्रम ३२ ३०, ३२, ३१[175] तथा एक स्थान पर ३१ ३२, ३०, ३१[176] है। एक छन्द के अन्तिम चरण में १६+१३=२६ वर्ण[177], एक कवित्त के दूसरे व तीसरे चरण में ३०–३० वर्ण[178] हैं एक स्थान पर कवित्त के दूसरे चरण में ३३ वर्ण[179] एक छन्द की प्रथम पंक्ति में ३५ वर्ण[180] तथा एक के चौथे चरण में ३० वर्ण[181] पाये जाते हैं।

दो कवित्तों में वर्ण क्रम २३–२३[182] रखा गया है। इन्हीं में से एक के तीसरे चरण में २४ वर्ण पाये जाते हैं।[183] यह कवित्त सवैया के जैसे ही हैं। जोगीदास के दो कवित्तों पर छन्द का प्रभाव ही नहीं डाला गया है।[184]

विशुनेश द्वारा प्रयोग किये गयेभुजंगप्रयात में वर्ण तथा गण क्रम शुद्ध प्रतीत होता है पर पद संख्या इन्होने भी निश्चित नहीं रखी है। अधिकांश स्थानों पर पद संख्या चार है, एक स्थान पर आठ पद एक छन्द में पाये जाते हैं।[167] इस छन्द के द्वारा विशुनेश ने सेना युद्ध के समय परामर्श तथा तोप चलने और डंका बजने आदि का वर्णन किया है।

पृथ्वीराज कवि ने घूस रायसा में घूस के रौद्र रूप का वर्णन करने के लिये इस छन्द का प्रयोग किया है।

२५ मोतीदाम जोगीदास मुतियादाम गुलाव, मोती श्रीधर (१२ वर्ण चार जगण प्रत्येक चरण मे होते हैं)

जोगीदास ने इस छन्द द्वारा सेनाओं के जूझने, हथियारों की मारकाट, शूरवीरों की युद्ध सज्जा आदि का वर्णन किया है। गुलाब ने युद्धस्थल के बीभत्स चित्रण मे इसका प्रयोग किया है। विशुनेश ने इस छन्द को मोतीदाम तथा मोती दो नामो से प्रयुक्त किया है। इसके द्वारा इन्होने सेना दूत प्रेषण युद्धस्थल की मारकाट तथा दाँव-पेंच आदि का वर्णन किया है। श्रीधर ने इस छन्द द्वारा आश्रयदाता का शौर्य सेना प्रयाण युद्ध आदि का वर्णन किया है। इनके इस छन्द की पद संख्या अनिश्चित है।

२६ नाराच जोगीदास श्रीधर छछूंदर रायसा (प्रति चरण १६ वर्ण ज र ज र ज ग होते हैं।)

जोगीदास ने इस छन्द द्वारा हथियारों की मारकाट का स्वाभाविक वर्णन किया है। इनके इस छन्द की पद संख्या अनिश्चित है।[168]

श्रीधर ने शूरवीरों की युद्ध सज्जा तथा सेना प्रयाण आदि के वर्णन के लिये इस छन्द का प्रयोग किया है।

छछूंदर रायसा मे कवि ने इस छन्द द्वारा छछूंदर के रौद्र रूप का चित्रण बड़े स्वाभाविक ढंग से किया है। इसमे पद संख्या १६ पाई जाती है।[169]

२७ मालती गुलाब (प्रत्येक पद मे २३ वर्ण ७ भगण तथा अंत मे दो गुरु वर्ण होते हैं।)

गुलाब द्वारा प्रयुक्त मालती सदैव दोष पूर्ण हैं। डा० टीकमसिंह तोमर ने भी इन्हें सदोष बतलाया है।[170]

२८ दुर्मिल गुलाब

इसमें प्रत्यक चरण में २४ वण तथा आठ सगण होते हैं। गुलाब के द्वारा प्रयुक्त दुर्मिल सदोप है। इनके इस छन्द की प्रथम पक्ति में २२ वर्ण तथा चतुथ पक्ति में यति भग दोप पाया जाता है।[171]

२६ सवया प्रधान कल्याण सिंह भरोलाल

प्रधान कल्याणसिंह के द्वारा प्रयुक्त किया गया सवया मालती सवया है। इस छन्द द्वारा इन्होंने यात्रा का साधारण सा वणन किया है।[172] भैरोलाल का सवया भी मालती ही है। इनके सवैया म यत्र तत्र गण दोप पाया जाता है। इस छन्द द्वारा इन्होंने यात्रा, परामश वीर दर्पोक्ति, युद्ध प्रयाण तथा युद्ध वर्णन किया है।

वर्ण मुक्त वृत्त

३० कवित्त जागीदास गुलाब किशुनेश श्रीधर प्रधान आनन्दसिंह प्रधान कल्याणसिंह, 'मदनेश भैरो लाल पथीराज (घम रायसा)

(प्रत्येक चरण म ८, ८, ८, ७ की यति पर अथवा १६, १५ कुल ३१ वण होते है।)

यह छन्द पुराने कवियो द्वारा बहुत अपनाया गया है। जोगीदास न दलपतिराव रासो म २३ कवित्त छन्द दिए हैं। इनके इन छन्दा मे वण सख्या निश्चित नही रखी गई है। कुछ कवित्त छन्द शास्त्र की दृष्टि से ठीक हैं।[173] एक स्थान पर सभी चरणो म ३२ ३२ वण रखे गए हैं।[174] कुछ कवित्तो मे वण सख्या म पर्याप्त असावधानी से वण रखे हैं। इनम वण क्रम २८ स लेकर ३५ तक पाया जाता है। एक छन्द म वण क्रम ३२ ३०, ३२, ३१[175] तथा एक स्थान पर ३१ ३२, ३०, ३१[176] है। एक छन्द के अंतिम चरण म १६+१३=२८ वण[177], एक कवित्त के दूसरे व तीसरे चरण म ३०–३० वण[178] हैं एक स्थान पर कवित्त के दूसरे चरण म ३३ वण[179], एक छन्द की प्रथम पक्ति मे ३५ वण [180] तथा एक के चौथे चरण मे ३० वण[181] पाये जाते हैं।

दो कवित्तो मे वर्ण क्रम २३–२३[182] रखा गया है। इन्ही म से एक के तीसरे चरण म २४ वण पाये जाते हैं।[183] यह कवित्त सवया क जस ही हैं। जोगीदास क दो कवित्ता पर छन्द का प्रभाव ही नही डाला गया है।[184]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि जोगीदास के द्वारा प्रयुक्त कवित्त विभिन्न प्रकार के है। इस छन्द द्वारा इन्होंने गणेश वन्दना राजा का यश, शौर्य, विभिन्न युद्धों में वीरों और सरदारों की वीरता, राजा की उदारता, महगाई के कारण उत्पन्न स्थिति शत्रुओं की दीनता, नीति तथा परामर्श युद्ध की भीषणता आक्रमण तथा सेना प्रयाण के वर्णन किए है।

गुलाब कवि ने इस छन्द द्वारा सरस्वती और गणेश की वन्दना अपने आश्रयदाता की प्रशंसा तथा आश्रयदाता के शौर्य आदि का ओजपूर्ण वर्णन किया है।

किशुनेश ने ६ स्थानों पर इस छन्द का प्रयोग किया है। इनके एक कवित्त के प्रथम चरण में १६+११=२७ वर्ण[185] तथा एक के तृतीय चरण में १६+१७=३३ वर्ण [186] पाये जाते हैं। एक कवित्त में वर्णों का क्रम २३ २३ रखा गया है[187], जो सवैया छन्द के निकट है। इन्होंने कवित्तों द्वारा आश्रयदाता के वंश का विस्तृत वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त राजा के शौर्य प्रशंसा सैनिकों व सरदारों की वीरता का भी ओजपूर्ण वर्णन किया गया है।

श्रीधर ने इस छन्द द्वारा अपने आश्रयदाता की प्रशंसा एवं उसके शौर्य का वर्णन किया है। भूषण की तरह शत्रुओं की स्त्रियों की विपत्तिग्रस्त स्थिति का वर्णन भी किया गया है।[188]

प्रधान आनन्द सिंह ने केवल दो कवित्तों का प्रयोग किया है। एक में वर्णक्रम ३२ ३२ ३२ ३५[189] तथा दूसरे में ३१ ३२ ३२ ३२[190] रखा गया है। इस छन्द के द्वारा इन्होंने पत्रों द्वारा युद्ध के परामर्श, युद्ध सामग्री की तयारी का वर्णन किया है।

प्रधान कल्याण सिंह ने झाँसी को राइसो में कुल १० कवित्त प्रयुक्त किये हैं। इनमें से एक में वर्णक्रम ३३ ३२ ३२ ३३ है।[191] एक स्थान पर ३२, ३१ ३१ ३२ वर्ण क्रम है।[192] इस छन्द द्वारा इन्होंने परामर्श सैनिकों व सरदारों का शौर्य, युद्ध की घटनाओं शत्रु पक्ष

की शोक पूर्ण स्थिति अंग्रेजों की शक्ति सम्पन्नता दार्शनिक चिंतन युद्ध स्थल में मारकाट, युद्ध सज्जा, रानी लक्ष्मी बाई के स्वर्गारोहण आदि विषयों का प्रतिपादन किया है।

मदनेश' का कवित्तों के प्रयोग में कुछ अच्छी सफलता प्राप्त हुई है। इन्होंने सात स्थानों पर इसका प्रयोग किया है। इनके अधिकांश कवित्त छन्द शास्त्र के नियमों के अनुसार लिखे गये हैं। केवल दो स्थानों पर वर्ण क्रम में साधारण हेर फेर है। इन स्थानों पर कवित्तों के प्रथम चरण में १५+१५=३० तथा १६+१७=३३ वर्ण पाये जाते हैं।[193] मदनेश जी ने झांसी की कमानी नामक तोप के चलने का इस छन्द में अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया है। इसके लिए कवि ने तीन छन्दों का एक झला दिया है, जिसकी ध्रुव पंक्ति–'मुलक मदान को पिदान फार डारा है" तीनों कवित्तों के अंतिम चरण में दुहराई गई है।[194] इन्होंने इस छन्द द्वारा रानी लक्ष्मीबाई के शौर्य, तोप के गोले चलने तोपचियों की कुशलता सरदारों की वीरता आदि का अच्छा वर्णन किया है। इन कवित्तों में ध्वनि अनुकरण मूलक शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है, जिससे रसात्मकता में भी वृद्धि हुई है।

भैरो लाल के कवित्त दो रूपों में उपलब्ध होते हैं। इनके कुछ कवित्तों में २३ २३ वर्ण प्रत्येक चरण में होने से सवैया छन्द के ही अधिक निकट हैं। शेष कवित्तों में ३१ वर्ण क्रम पाया जाता है। इस छन्द द्वारा इन्होंने युद्ध के निमंत्रण भेजने, युद्ध के लिए वीरों के सजने, वीरों की दर्पोक्तियों, सैनिकों की भगदड़, क्रोधित होकर सैनिकों के युद्ध करने आदि का वर्णन किया है।

पृथ्वीराज ने एक कवित्त में काँसी नाम के एक व्यक्ति तथा घूस के हास्यात्मक युद्ध का वर्णन किया है।

२१ घनाक्षरी भैरोलाल भैरो लाल की घनाक्षरी में १६+१५=३१ वर्ण तथा अंत में गुरु वर्ण पाया जाता है। यह छन्द कवित्त के ही समान हो गया है। इन्होंने कुल आठ घनाक्षरी छन्द अपने भिलसांयं कौ कटक में दिए हैं। एक छन्द में वर्ण क्रम दोषपूर्ण है जो इस प्रकार है–

प्रथम चरण १६+१५=३१ वर्ण अंत में दीर्घ
द्वितीय चरण १६+१७=३३ वर्ण अंत में दीर्घ,
तृतीय चरण १६+१५=३१ वर्ण अंत में दीर्घ,
चतुर्थ चरण १५+१५=३० वर्ण अंत में दीर्घ
यह छन्द निम्न प्रकार है–

"बीर बलवीर रणधीर धर धीर और,
हीर पीर मीर न शरीर सुध प्रान की।
मार धर दौर सक शब्द सुन कान लख
लख बान बरखन्त हरखन्त किरवान की।
भन भैरोलाल घात घाल कै तिपाल तीर,
भालन की मार मची घोर घमसान की।
धीरज कराये भटभीर बराये भट
मीर जल जाय लख बीरता निमान की।

इस छन्द के द्वारा भैरो लाल ने युद्ध क्षेत्र की मार काट, गोली, तलवार, बन्दूक आदि हथियारों का वर्णन किया है। एक स्थान पर दो घनाक्षरियों का एक झूला दिया गया है जिनमें एक ध्रुव पंक्ति अन्तिम चरण में दुहराई गई है। इसमें युद्ध की भयंकरता का स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

३२ किरवान जोगीदास कवित्त किशुनेश किरवान
क्रवान श्रीधर
कृपाण प्रधान कल्याण सिंह मदनेश

किरवान में ८, ८, ८, ८ की यति पर ३२ वर्ण होते हैं तथा अंत में लघु होता है। यह छन्द अत्यानुप्रास की छटा में परिपूर्ण होता है।

एक ध्रुव पंक्ति सभी किरवानों के अन्तिम चरण में दुहराई जाती है। यह शस्त्र शौर्य विशेष रूप से कृपाण की वीरता प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त किया गया है। सम्भवतः कृपाण वीरता के लिए प्रयुक्त होने के कारण ही इसे कृपाण या किरवान नाम मिला।

जोगीदास ने दलपति राव रासा में १३ किरवान छन्द रखे हैं। १० छन्दों की ध्रुव पंक्ति एक ही है, फिर दो छन्दों की ध्रुव पंक्ति एक जैसी है तथा एक छन्द की ध्रुव पंक्ति अलग है। इनके द्वारा प्रयुक्त किरवानों में तीन स्थानों पर ३१ वर्ण वाले चरण[185] एक स्थान पर ३८

वर्ण[196], दो स्थानों पर ३० वर्ण[197], एवं एक स्थान पर २८ वर्ण[198] पाये जाते हैं। जोगीदास ने 'किरवान' को 'कवित्त किरवान' नाम दिया है। इस छन्द द्वारा उन्होंने आश्रयदाता का शौर्य, युद्ध की भीषणता तथा हथियारों की वीरता का अतिरंजित एवं ओजपूर्ण चित्रण किया है।

बिशुनेश ने ३१ स्थानों पर किरवान का प्रयोग किया है। एक किरवान पर छन्द क्रमांक नहीं डाला गया है।[199] छन्दों के पदों में वर्ण-संख्या निर्धारित रखने की ओर कवि की सावधानी दृष्टिगोचर होती है। केवल दो तीन छन्दों की कुछ पंक्तियों में वर्ण संख्या कम या अधिक पाई गई है। एक छन्द के प्रथम चरण में ३१ तथा अन्यत्र एक दूसरे चरण में ३० वर्ण पाये जाते हैं।[200] एक छन्द के तृतीय चरण में ३३ वर्ण हैं[201], एक छन्द के प्रथम चरण में ३१ वर्ण[202] तथा एक छन्द के प्रथम पद में २६ वर्ण पाये जाते हैं।[203] प्रारम्भ में दो किरवानों में शत्रुजीत सिंह की तलवार की प्रशंसा की गई है। फिर १२ करवानों में-- "तहां राखी नरनाही सुभ साही अवगाही, सत्रजीत चित्त चाही वर वाही किरवान॥ ध्रुव पंक्ति रखकर शत्रुजीत सिंह तथा उनकी कृपाण के शौर्य का स्वाभाविक वर्णन किया गया है। पश्चात् १६ छन्दों में "तहां भारी भुज दण्डन सम्हारी असधारी, सतजीत छत्र धारी झुकझारी किरवान", ध्रुव पंक्ति रखकर शत्रुजीत सिंह के शौर्य का, युद्ध स्थल में झुककर तलवार झारने का ओजपूर्ण वर्णन है। अंतिम किरवान में शत्रुजीत सिंह के यश शौर्य का वर्णन किया गया है।

श्रीधर ने इसका नाम क्रवान लिखा है तथा इन्होंने भी इस छन्द में अपने आश्रयदाता महाराज पारीछत के शौर्य एवं उनकी कृपाण वीरता का वर्णन किया है।

प्रधान कल्याण सिंह ने इस छन्द का नाम कृपाण लिखा है। इन्होंने दो स्थानों पर कुल चार छन्दों का प्रयोग किया है, जिनमें एक ध्रुव पंक्ति "तहां रानी मरदानी झुकझारी किरवान, दुहराई गई है। इस कवि ने इस छन्द की वर्ण संख्या में असावधानी की है। दो छन्दों के प्रथम

व द्वितीय चरणो मे ३०-३० वर्ण रखे गये हैं तथा इन्हीं छन्द के शेष चरणो म ३१-३१ वर्ण हैं।[304] अत ये कवित्त के अधिक निकट हैं। दूसरे स्थान पर पहले छद के प्रथम चरण म २६, तृतीय चरण म ३३ तथा शेष चरणो म ३२ वर्ण हैं।[305] आखिरी छन्द म प्रथम चरण म ३२, द्वितीय एव तृतीय चरण मे ३१ तथा चतुर्थ चरण मे ३३ वर्ण सख्या पाई जाती है।[306] इस छन्द द्वारा प्रधान कल्याणसिंह ने रानी लक्ष्मीबाई तथा उनकी कृपाण के शौर्य की प्रशसा का वर्णन किया है।

'मदनेश' जी ने इस छन्द का प्रयोग कुछ अधिक सफलता पूर्वक किया है। इन्होने ३६ किरवान छन्द लक्ष्मीबाई रासो म प्रयुक्त किए हैं। सभी छन्दो म वर्ण क्रम ८, ८, ८, ८=३२ प्रति चरण पाया जाता है। पहले २२ छन्दो मे ध्रुव पक्ति "तह तेज की तमार, कर कोप बेसुमार, वीर विचली जरैया, झुक्कारी किरवान। रखी गई है।[307] इन छन्दो मे रघुनाथसिंह जरैया की कृपाण वीरता तथा युद्ध की मारकाट का स्वाभाविक वर्णन किया गया है। बाद के १४ छन्दो की ध्रुव पक्ति— तह तेज की तमार कर कोप बसुमार, वीर बाई का सवाई झुक्कारी किरवान है। इनम से ११ छन्दा म रानी लक्ष्मीबाई की तोपो की लडाई का वर्णन किया गया है[308] तथा अन्तिम ३ म झाँसी के वीरों के द्वारा किए गए भीषण युद्ध एव नत्थे खाँ द्वारा अपनी सेना को प्रोत्साहित किए जाने का वर्णन है।[309]

अनिश्चित छन्द

३३ हनूफाल गुलाब किशुनेश — (१४ मात्रा अन्त म गुरु लघु)[310] गुलाब कवि ने इस छद मे १२, १३ तथा १४ मात्रायें प्रयुक्त की हैं। इस छन्द म इन्होने युद्ध स्थल की मारकाट के वीभत्स चित्रण किए है।

किशुनेश के द्वारा इस छन्द मे सर्वत्र १२ मात्राओ तथा गुरु लघु का प्रयोग किया गया है। इन्होने छन्द की पद सख्या चार रखी है, पर कहीं-कही केवल दो रह गई है[311], तथा कही ६ तक पहुँच गई है।[312] इस छन्द द्वारा

इन्होंने सेना प्रयाण तथा युद्ध के साधारण वर्णन प्रस्तुत किये हैं।

४ माधुरी विशुनेश। इस छन्द में विशुनेश ने प्रत्येक चरण में १६-१६ यति पर ३२ मात्राएँ तथा अंत में गुरु लघु का विधान किया है। यदि इसमें विराम चिह्नों का उचित प्रयोग किया गया होता तो ८, ८=१६ में मात्रा क्रम के अनुसार मधुभार छंद के अधिक निकट होता। विशुनेश ने इस छंद द्वारा युद्ध का साधारण वर्णन किया है।

१५ छन्द जोगीदाम विशुनेश श्रीधर प्रधान आनन्दसिंह, प्रधान कल्याणसिंह, 'मदनेश गाडर रायसा

जोगीदास ने इसका प्रयोग तीन रूपों में किया है। प्रथम रूप में १२ वर्ण प्रत्येक चरण में रखे गए हैं[213], जो भुजंगी छंद जैसा है। दूसरे प्रकार में प्रत्येक चरण में १० वर्ण[214] एवं तीसरे प्रकार के छंद में प्रति चरण ८, ८ की यति से चरण रखे गये हैं।[215] इस छंद के द्वारा इस कवि ने सेना प्रयाण तथा युद्ध आदि का वर्णन किया है।

शत्रुजीत रासो में किशुनेश ने इसका प्रयोग तीन प्रकार से किया है। प्रथम प्रकार में प्रत्येक चरण में १२ वर्ण रखे गये हैं, जो भुजंग प्रयात के अधिक निकट हैं।[216] दूसरे प्रकार में प्रति चरण ११-११ वर्ण हैं।[217] तीसरे प्रकार के छन्द में वर्ण संख्या का कोई निश्चित क्रम नहीं पाया जाता है। इसमें प्रति चरण ८, ६ अथवा १० वर्ण रखे गये हैं।[218] इन छन्दों के द्वारा इन्होंने समाचार प्रेषण, सेना प्रयाण, तथा युद्ध के साधारण वर्णन और आश्रयदाता की प्रशंसा का वर्णन किया है।

श्रीधर ने भी इस छन्द का कोई निश्चित रूप नहीं रखा। इनके द्वारा प्रयुक्त किये गये इस छन्द में वर्ण संख्या विभिन्न स्थानों पर १०, ११, १२, १३, १४, १५ तथा १६ पाई जाती है। कुछ उदाहरण निम्नानुसार प्रस्तुत किए जाते हैं–

"यही बात मरनाथ सुनिकै अनैसी।
१४ वर्ण
भई वीर घर्घर सुच बुध्य कैसी॥"[219]
१३ वर्ण

'ठाये ठौर ठाइन अठाइन सौं ठानें ठन जाके सग सोहत है ठाकुर ठिकाने का।
भारीसिरदार हरभारीऊ दतल दार अगवन दार अनी स्वामित्त मयान कौ॥
धीर राज धोरी राज धरा कौ धरन हारो पायक मरद मैं विरदवीर बानें को।
लाला सुखदेउ लाहू लागन लराक फौजदार नरदानी सुभसाह मरदानें को॥'[33]

रूपक–

निम्न छन्द म कवि न विवाह का सुन्दर युद्ध रूपक प्रस्तुत किया है। युद्ध क्षेत्र का मारू राग विवाह म गाये जाने वाले मगल राग, सिर पर का झिलम टोप मौर, खडग कंकण, बरछी, खभे ढालें मडप आदि का रूपक है–

रचौरन व्याह मचौ मारू राग मगल ज्यों रचौ रुद्र रह सब धाय सुभगत का।
मामसिर मौर धर पत्त सिर पनरयम कंध मौहे खग विराजे सोभ अत की॥
बरछे सुखम्भ ढाल मडिप अनूप छाप अनीवर आलम री वीर रूप रत की।
स्वामें काम तन को तमोर करौ तगन कौ धन्य धन्य हिम्मत रजील दलपत की॥[339]

अनन्वय–

जहाँ उपमेय की समानता म उपमेय को ही उपमान माना जाये, अनन्वय अलकार होता है। दलपति राव रायसा म कुछ स्थाना पर इस अलकार का प्रयोग किया गया है। एक छन्द देखिये–

'सीता सी सीता लसत राम राम अवतार।
राम सिंघ तिन के प्रथम प्रगटौ राज कुमार॥[340]

'करहिया को रायसो म अलकार सौन्दर्य नही है। या तो कवि इस ओर से उदासीन रहा है या कवि को अलकार शास्त्र का प्रचुर ज्ञान नही रहा होगा। इस सम्बन्ध म डा० टीकमसिंह तोमर का निम्नलिखित मत है– यदि यह कहा जाये कि इस कवि को अलकार शास्त्र का लेश मात्र भी ज्ञान नही था तो इसमें अत्युक्ति न होगी।[341] फिर भी गुलाब कवि के इस काव्य ग्रन्थ मे थोडा बहुत परम्परागत रूप मे अलकार चित्रण देखने को मिल जाता है। इस रचना म अनुप्रास, उपमा उत्प्रेक्षा लोकोक्ति एव सन्देह अलकारो का साधारण प्रयोग किया गया है।

शत्रुजीत रासो म उपमा, उत्प्रेक्षा रूपक अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश तथा प्रतीप आदि अलकारो का प्रयोग किया गया है।

उपमा–

युद्ध के वर्णनों म कवि द्वारा अनूठी उपमायें प्रस्तुत की गई हैं। उदाहरण

'जहाँ टूटैं तरवार गिरें छूटकें कटार।
वीर वगरौ बहार पतझार के समान॥'[342]

उत्प्रेक्षा–

युद्ध के विकराल वर्णनों एवं प्रकृति चित्रणों में कवि ने इस अलंकार को प्रयुक्त किया है। उदाहरण–

'चले बान गोला मचौ घोर घाई।
मनौ राम रावन कीनी लराई॥
किते त धन्त धीस ताप उताली।
मनौ कोपियौ काल कन्या कराली॥'[213]

रूपक–

शत्रुजीत रासो में कवि ने रूपक अलंकार में षड्ऋतु वर्णन किया है। निम्नलिखित एक छन्द में वर्षा का रूपक प्रस्तुत किया गया है– उदाहरण

'जहां घन लौ घुमड दल उमड अनी पै जुरै,
तडता तडप कढौ कढ़ैव कृपान ।।
जहाँ औज साग नज वेझे वेमलो करेजे,
रहे मानौ पौन घेरे छूट धुरवा धुरान।
जहा त्यागौ तन हम श्रौन वरषा लगी है,
जगी चातक लौ वदाजन करत बखान॥'[214] आदि

अनुप्रास–

युद्ध के विकराल एवं वीभत्स वर्णनों का इस अलंकार में अच्छा चित्रण किया गया है। उदाहरण–

'जहाँ जूट जूट जात जोर जवर जमानन के,
छूट छूट गिरत धरा प बिन प्रान।'[215] आदि

पुनरुक्ति–

'जहाँ डार डार मुंड मुंड डार धौरि
त मार मार भाषत है मही प मरन्मान।'[216] आदि

प्रतीप–

उदाहरण–

जर जटित जाहर जौन पोस विछाइ बठौ भूप है।
नहिं राम का छवि काम की अभिराम रूप अनूप है॥'[217]

'पारीछत रायसा' में उपमा, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास, रूपक तथा सन्देह आदि अलंकारों का प्रयोग किया गया है। प्रत्येक अलंकार का उदाहरण आगे प्रस्तुत किया जा रहा है–

उपमा

'सिरी चौंर गजढाल प कंचन फूल अनूप।
रवि ससि सन गुर सौ भजे उपमा लगत अनूप ॥'[348]

उत्प्रेक्षा

घट घोर धुनि ह्वैं रही, सुंदर सीसन धार।
मानो छन मिल बठिकैं, बिज्जुल करत बिहार ॥[349]

अनुप्रास—छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास तथा लाटानुप्रास के लक्षण निम्नांकित छन्द में देखने योग्य हैं—

चपल चलाकी चंचला की गति छीन लेत
छट्टर छलगत छिकारे हात लाज में।
पुरयन पात के गातन समेंट फिर,
थाप दियें जात है समान पछछ राज कैं॥
लोट पोट नैन कुलटान ये लजावत हैं
जरकस जीनस जराउ धरें साज के।
अगन उमग गिरवरन उलघन है
छेंकन कुरगन तुरग महाराज ये ॥[350]

रूपक

वर्षा के एक रूपक में श्रीधर ने युद्ध की विकरालता का चित्रण निम्न प्रकार किया है—

धर परस बुंद गोली समान।
बन्दीजन चातक करत गान॥
चगपत परीछत सुजस छाहि,
बरखोस रूप रन यों मचाइ॥[351]

संदेह

निम्नांकित उदाहरण में महाराजा पारीछत के ऐश्वर्य का वर्णन इस अलंकार के माध्यम से देखिए—

कधों बाडवागिन की प्रगटी प्रचंड ज्वार,
कैंधों ए श्वागिन की उलहत साखा है।
कधों जठरागिन मन्दागिन मिली हैं आइ
कधों अस्ट मूरत इकट्ठा आन राखा है॥
कैंधों जुरहोरी ज्वार छाये है पहारन प,
लगत गढ़ाहिन कौं काल कसे नाखा है।

बाघाइट गन्धप के जरत अवास कैधो,
कधो पारीछत भूप के प्रताप के पताखा हैं ।।'[252]

उपर्युक्त छन्द मे बाघाट के दीवान गन्धव सिंह के जलते हुए महलो को देखकर कवि ने विभिन्न प्रकार के सन्देह किये हैं।

'बाघाइट की राइसो' में प्रधान आनन्द सिंह कुडरा ने अलकारो को बहुत कम स्थान दिया है। इस रायसे मे अनुप्रास, वक्रोक्ति, उत्प्रेक्षा तथा उपमा के कुछ प्रयोग देखने को मिलते हैं।

अनुप्रास

सिव सुत को सुमरहि सदा, सकट हरहि कुबुद्धि।
धन दाता वे हैं सदा, और देत हैं बुद्धि ।।'[253]

उपर्युक्त दोहे म सिव सुत तथा सुमिरिहि सदा म छेकानुप्रास है।।

वक्रोक्ति

वक्ता के अभिप्रेत आशय से भिन्न अर्थ की कल्पना होने पर वक्रोक्ति अलकार होता है।[254] इसमे उक्ति म बाकपन विशेष होता है, कभी-कभी तो कठ की ध्वनि से भी दूसरा अर्थ निकलता है।

उदाहरण

'तावारन हम आजु लौ, उनको भलौ विचार।
बाह गहे की लाज कौ, बडे करें निरधार।।"

(दतिया नरेश महाराज पारीछत के पिता ने ओरछा के महेन्द्र महाराजा विक्रमाजीत का स्वय राजतिलक किया था। इसलिए वे विक्रमाजीत के प्रति ऐसा कह रहे हैं कि– उसी कारण से ही तो हम आज तक उनकी भलाई देखते रहे हैं, क्योंकि आश्रय तथा अभयदान देने के वचन का निर्वाह बडे ही करते हैं)।

उत्प्रेक्षा

"तोप चलै जब होइ अवाज।
परहि मनौ भादव की गाज ।।'[255]

उपर्युक्त उदाहरण म तोप चलने की आवाज से मानो की गाज गिरने की उत्प्रेक्षा की जा रही है।

उपमा

चली समशेरें गिराही भई तेगन मार।
चमक जानी बाजुरी सी कौन सकहि निहारि ।।'[256]

उपर्युक्त छन्द में शमशेर व तलवार की चमक की समता बिजली की चमक से की जा रही है।

'कल्याण सिंह कुडरा कृत 'झाँसी को राइसो' में भी अलकार चित्रण अत्यंत साधारण कोटि का है। केवल उपमा, उत्प्रेक्षा व अनुप्रास अलकारों के साधारण से प्रयोग देखने को मिलते हैं।

उपमा

"घटा सी उठा रन जब सैन धाई। [257]

यहाँ पर सेना के चलने से उठे धूल समूह की समानता काली मेघ घटा से की गई है।

उत्प्रेक्षा

'गोरा तिलगा असवार हर।
गल गाजत है जनु डिलेसेर।।" [258]

अनुप्रास

"चलत तमचा तेग बिच करार जहा
गुरज गुमानी गिर गाज के समान। [259]

यद्यपि 'मदनेश' जी ने अलकार सृष्टि की तरफ बिल्कुल ध्यान ही नहीं दिया है तथापि कुछ स्थल ऐसे हैं जहाँ उत्प्रेक्षा उपमा अनुप्रास, उदाहरण आदि अलकारों के दर्शन हो जाते हैं। कवि की यह रचना प्रौढ है एवं भाव-पक्ष के साथ साथ कवि में कलापक्ष को सुन्दर बनाने की क्षमता भी दिखलाई पडती है। इस धारा के अन्य कवियों की भाँति यह कवि भी अलकारों के प्रति उदासीन ही रहा। यहाँ कुछ अलकारों के उदाहरण दिये जा रहे हैं।

उपमा

"तन कुंदन चपक सो मुलाम। मृगनयनी शुक नासिकी वाम।। [260]

उपर्युक्त छन्द में झाँसी के भुजरियों के मेले के वर्णन में स्त्रियों की शोभा और सजावट का वर्णन किया गया है। शरीर को स्वर्ण और चपक के समान तथा नेत्रों की मृग एव नाक की तोते से उपमा दी गई है।

उत्प्रेक्षा

युद्ध के वर्णनों में, प्रकृति सम्बन्धी वर्णन करते समय कवि ने उत्प्रेक्षा अलकारों का प्रयोग किया है। उदाहरण–

'उत रिपुदल सेना उमड आई। चहु ओर मनो घन घटा छाई।
बरछिन की माल चमक रही। सोउ दामिन मनों दमक रही।। [261]

अनुप्रास

इस धारा के कवियों को अनुप्रास अलकार की योजना में विशेष सफलता प्राप्त हुई। पद्माकर जैसे कवि अनुप्रास सौंदर्य के लिए सर्व प्रसिद्ध हैं। इस कवि

न भी कहीं कहीं इस अलंकार का बहुत अच्छा चित्रण किया है। निम्नांकित छन्द में दास्तखाँ तोपची द्वारा नत्थे खाँ की फौज के एक हाथी पर तोप के गोले के प्रहार का वर्णन देखिए—

"तब तक तान बान लीनी है मिलाय ताय,
झाक झुक जानें आग दीनी जो भडाक है।
घोर घहरात भहरात लौ लपक्की तब,
तमकी तड़ित सी सा तडकी तडाक है।
'मदन महीप जहाँ बठो गढ टोडी को सो,
ता गजगरे पै गोला गडपो गडाक है।
मारी है दीमान जानें जारो है निशान हेरो,
पवत समान पील पटको पडाक है॥'[262]

उपयु क्त छन्द म अनुप्रास के वृत्य, छेका आदि भेदो के साथ ही छन्द में आन्तरिक एवं अत्यानुप्रासो की छटा भी दृष्टव्य है। दोस्त खाँ तोपची का झुक्कर चांकना, निशाना तानना, लौ का लपकना तोप का तडाक से तडकना हाथी के गले पर गोले का गडाक से गडपना और हाथी का पडाक से पटकना आदि में अनुप्रास बडी स्वाभाविकता से आ गये हैं। छन्द पर अलंकारों का आरोप नहीं है।

उपयु क्त अलंकारों के अतिरिक्त उदाहरण[263] अलंकार एवं सन्देह[264] अलंकार भी एकाध स्थल पर देखने को मिलता है।

उपलब्ध वटव एवं 'हास्य रासो ग्रन्थों म अलंकार चित्रण बहुत साधारण कोटि का पाया जाता है। कतिपय स्थलों पर उपमा उत्प्रेक्षा, रूपक एवं अनुप्रास के उदाहरण देखने को मिलते हैं।

उपयु क्त सभी रासो काव्यों मे अलंकार योजना प्राचीन परम्परानुसार ही दिखलाई पडता है।

प्रबन्ध और मुक्तक काव्य की दृष्टि से रासो काव्यो की समीक्षा

श्रव्यकाव्य के अन्तगत पद्य को प्रबन्ध और मुक्तक दो भागो मे विभाजित किया गया है। प्रबन्ध काव्य को महाकाव्य और खण्ड काव्य दो भागो म बाँटा गया है तथा मुक्तक काव्य के भी पाठ्य और प्रगीत दो भाग किय गय।[265] प्रबंध म पूर्वा पर का तारतम्य होता है। मुक्तक में इस तारतम्य का अभाव होता है।'[266] प्रबन्ध में छन्द कथानक के साथ एक सूत्रता स्थापित करते चलते हैं, तथा छन्द अपने स्थान से हटा देने पर कथावस्तु का क्रम टूट जाता है परन्तु मुक्तक काव्य म प्रत्येक छन्द अपने आप में स्वतन्त्र एवं पूर्ण अर्थ व्यक्त करता है। छन्द एक दूसरे के साथ जुड़कर किसी कथानक की रचना नहीं करते। 'मुक्तक छन्द पारस्परिक बन्धनों से मुक्त होते हैं वे स्वतः पूर्ण होते हैं।'[267]

महाकाव्य का स्वरूप

महाकाव्य का क्षेत्र विस्तृत होता है। महाकाव्य में जीवन का समग्र रूप से अभिव्यक्ति की जाती है। व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन के साथ साथ उसमें जातीय जीवन की भी समग्र रूप में अभिव्यक्ति होती है। बाबू गुलाबराय के अनुसार महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षण निम्न प्रकार हैं–

१ यह सर्गों में बँधा हुआ होता है।

२ इसमें एक नायक रहता है जो देवता या उत्तम वंश का धीरोदात्त गुणों से समन्वित पुरुष होता है। उसमें एक वंश के बहुत से राजा भी हो सकते हैं जैसे कि रघुवंश में।

३ शृंगार, वीर और शान्त रसों में से कोई एक रस अंगी रूप से रहता है नाटक की सब संधियाँ होती हैं।

४ इसका वृत्तान्त इतिहास प्रसिद्ध होता है या सज्जनाश्रित।

५ इसमें मंगलाचरण और वस्तु निर्देश होता है।

६ कहीं-कहीं दुष्टों की निन्दा और सज्जनों का गुण कीर्तन रहता है जैसे–कि रामचरित मानस में।

७ एक सर्ग में एक ही छन्द रहता है और अन्त में बदल जाता है। यह नियम शिथिल भी हो सकता है– जैसे कि राम चन्द्रिका में प्रवाह के लिए छन्द की एकता वांछनीय है। सर्ग के अंत में अगले सर्ग की सूचना रहती है। कम से कम आठ सर्ग होने आवश्यक हैं।

८ इसमें सन्ध्या, सूर्य चन्द्रमा, रात्रि प्रदोष, अन्धकार, दिन प्रातःकाल मध्याह्न आखेट पर्वत ऋतु वन, समुद्र संग्राम यात्रा, अभ्युदय आदि विषयों का वर्णन रहता है।[144]

खण्ड काव्य का स्वरूप

जीवन की किसी घटना विशेष को लेकर लिखा गया काव्य खण्ड काव्य है। खण्ड काव्य शब्द से ही स्पष्ट होता है कि इसमें मानव जीवन की किसी एक ही घटना की प्रधानता रहती है। जिसमें चरित नायक का जीवन सम्पूर्ण रूप में कवि को प्रभावित नहीं करता। कवि चरित नायक के जीवन की किसी सर्वोत्कृष्ट घटना से प्रभावित होकर जीवन के उस खण्ड विशेष का अपने काव्य में पूर्णतया उद्घाटन करता है।

प्रबन्धात्मकता महाकाव्य एवं खण्ड काव्य दोनों में ही रहती है परन्तु खण्ड काव्य के कथासूत्र में जीवन की अनेकरूपता नहीं होती।[145] इसलिए इसका कथानक कहानी की भाँति शीघ्रतापूर्वक अन्त की ओर जाता है। महाकाव्य में

प्रमुख कथा के साथ अन्य अनेक प्रासंगिक कथायें भी जुडी रहती है इसलिए इसका कथानक उपन्यास की भांति धीरे धीरे फलागम की ओर अग्रसर होता है। खण्डकाव्य में केवल एक प्रमुख कथा रहती है प्रासंगिक कथाओ को इसमें स्थान नहीं मिलने पाता है।

ऊपर महाकाव्य और खण्डकाव्य के स्वरूप का विवेचन किया गया। इसके आधार पर जब हम विवेच्य रासो काव्यो को परखते हैं तो इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि ये सभी रासो काव्य खण्ड काव्य हैं। सभी रासो ग्रन्थो की कथावस्तु की समीक्षा खण्डकाव्य के आधार पर आगे की जा रही है।

'दलपति राव रायसा' में दतिया नरेश दलपतिराव के किशोरावस्था से लेकर मृत्यु तक के जीवन काल का वर्णन है। दलपतिराव ने मुगलो के अधीन रहकर मुगल शासको का पक्ष लेकर युद्ध किए हैं इसलिए दलपतिराव रायसा का कथानक दो कथा सूत्रो के साथ जुडा हुआ है। एक प्रमुख कथा काव्य नायक 'दलपति राव' के जीवन से सम्बन्धित है। दूसरी कथा मुगल शासको के घराने से सम्बन्धित है। कवि का प्रमुख उद्देश्य महाराजा दलपति राव की वीर उपलब्धियो का वर्णन करना रहा है। 'दलपति राव रायसा' मे बीजापुर गोलकुण्डा, अदौनी, जिन्जी तथा जाजऊ आदि स्थानो पर हुए युद्धो का वर्णन किया गया है। अलग अलग घटनायें किसी निश्चित कथानक का निर्माण भले ही न करती हो, परन्तु इससे कवि के उद्देश्य की पूर्ति अवश्य हुई है। कवि का एकमात्र उद्देश्य दलपतिराव के जीवन काल की सभी प्रमुख युद्ध की घटनाओ का वर्णन करना था, इसलिये किसी एक कथासूत्र का गठन नही हो सका। फिर दलपतिराव मुगल सत्ता के अधीन थे अतः जहा जहा मुगल सेना के अभियान हुए वहाँ वहाँ दलपति राव को युद्ध करने के लिये जाना पडा था इस कारण भी घटना बहुलता स्वाभाविक है।

'दलपति राव रायसा' एक खण्ड काव्य' है। महाकाव्य की तरह न तो यह सर्गबद्ध है और न सन्ध्या सूर्य चन्द्रमा, रात्रि प्रदोष अन्धकार, दिन, प्रात काल, मध्याह्न आखेट, पर्वत, ऋतु, वन समुद्र, सग्राम, यात्रा, अभ्युदय आदि विषयो का वर्णन ही किया गया है। पर इसका नायक क्षत्रिय कुलोद्भूत धीरोदात्त है। 'दलपति राव रायसा' की कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध है। इसमे दलपति राव के सम्पूर्ण जीवन का वर्णन न होकर केवल कुछ घटनाओ का ही वर्णन है इसलिये 'दलपति राव रायसा' एक खण्ड काव्य रचना है। इसमे अनेक घटनाओं के जुडे रहने हुए भी प्रबन्धात्मकता का निर्वाह किया गया है। पर यह अवश्य है कि वस्तुओं और नामो तथा जातियों की लम्बी लम्बी सूचियाँ उपस्थित कर कवि ने कुछ स्थलों पर प्रबन्ध प्रवाह मे शिथिलता उत्पन्न कर दी है।

प्रारम्भ से अन्त तक के सभी युद्धों में विजय श्री दलपतिराव के साथ ही लगी है चाहे दलपति राव का युद्ध अपने पिता शुभकरण के साथ दक्षिण में किशोरावस्था में ही क्या न हुआ हो– 'लरौ सुदक्खिन दक्ष मे, प्रथम दूध के दन्त' [270] रायसे में कई स्थानों पर कवि ने दलपति राव के विजय प्राप्त करने का उल्लेख इस प्रकार किया है–

तहाँ सूर दलपत सुजित्यौ
\+ \+
जीत सूर दलपत अवेजो।
\+ \+
जितौ श्री दलपत सुसूर। [271]

जाजऊ का अन्तिम युद्ध शाह आलम बहादुरशाह और आजमशाह के मध्य लड़ा गया उत्तराधिकार का युद्ध था, जिसमें दलपति राव ने आजमशाह का पक्ष लेकर युद्ध किया था। इसी युद्ध में इन्हें एक घातक घाव लगा तथा श्री हरि मोहनलाल श्रीवास्तव के लेखानुसार कुछ समय पीछे इनका देहावसान हुआ। परन्तु रायसे के द्वारा इस बात की पुष्टि नहीं होती। रायसे में दलपति राव का वीरगति प्राप्त करना ही लिखा है। कवि द्वारा दिये गये प्रमाण इस प्रकार है–

आगे आजम साह के कटौं दल्लपत राव। [272]
\+ \+ \+
'राउ कटौ सुन खेत में सकल प्रजा बिलखाय। [273]
\+ \+ \+
आजमऊ कुरखेत में जिहि दिन कट नप नाथ। [274]

जाजऊ में ही दलपति राव की दाहक्रिया आदि भी की गई थी। रायसे के अनुसार इसका विवरण इस प्रकार है–

चन्द आजमऊ मध्य सु आय सब
जहं चन्दन केस चिता रचिय।।'[275]

तथा–

कट राव के सग ज और सब सामत।
उत्तम चिता बनाय के दीन दाह तुरन्त।। [276]

अतः यह स्पष्ट है कि जाजऊ की लड़ाई में दलपति राव को वीरगति प्राप्त हुई थी।

उपर्युक्त विवरण के अनुसार 'दलपतिराव रायसा' प्रबन्धात्मकता से युक्त एक खण्डकाव्य रचना है।

'करहिया को रायसौ' गुलाब कवि की छोटी सी खण्डकाव्य कृति है।

इसम कवि न अपन आश्रयदाता करहिया के पमारो और भरतपुराधीश जवाहर सिंह के मध्य हुए एक युद्ध का वणन किया है। डा टीकमसिंह न करहिया को रायसो' को खण्ड काव्य बतलाते हुए निम्न प्रकार अपना मत व्यक्त किया है—"गुलाब कवि के 'करहिया कौ रायसौ' नामक छोटे से खण्डकाव्य मे करहिया प्रदेश के परमारो का वणन करन स युद्ध के उत्तम वणन के तो काव्य म दशन हो जाते हैं, पर इसम कथानक की गति मद अवश्य पड गई है।[277] यद्यपि गुलाब कवि को प्रबन्ध निवाह मे सफलता प्राप्त हुई है तथापि परम्परा युक्त वणनो के माह म पडकर इन्द्रान नामा आदि का बार-बार उल्लेख कर कथा प्रवाह म बाधा उपस्थित की है। करहिया कौ रायसा' का कथानक बहुत छोटा है। सरस्वती और गणेश की स्तुति के पश्चात कवि ने आश्रयदाताओ की प्रशसा की है तथा इसके पश्चात युद्ध का वणन किया है जिसम अतिशयोक्तिपूवक करहिया के पमारो की विजय का वणन किया है। इसम केवल एक ही मुख्य कथा एतिहासिक घटना प्रधान है। प्रासगिक कथा को कहीं स्थान नहीं मिलने पाया है। सूक्ष्म कथानक के कारण कथावस्तु वेगपूवक अविति की ओर अग्रसर होती हुई समाप्त होती है।

शत्रुजीत रायसा म महाराजा शत्रुजीत सिंह के जीवन का एक अतिम महत्वपूण घटना का चित्रण किया गया है। घटना विशेष का ही उदघाटन करने के फलस्वरूप शत्रुजीत रायसा' एक खण्डकाव्य रचना है। 'शत्रुजीत रासौ की घटना यद्यपि छोटी ही है परन्तु कवि न वणन विशदता के द्वारा एक लम्बे चौड कथानक की सृष्टि कर दी है।

महाराजा शत्रुजीतसिंह क्षत्रिय कुलोत्पन्न धीरोदात्त नायक है। शत्रुजीत रायसा का कथानक इतिहास प्रसिद्ध घटना पर आधारित है। रायसा म सग विभाजन नहीं किया गया है। जल्दी जल्दी छन्द परिवतन द्वारा कवि न सरसता और प्रवाह को पुष्ट किया है। शत्रुजीत रायसे म कवि का लक्ष्य महाराजा शत्रुजीतसिंह की विजय का वणन करना है। ग्वालियर नरेश महादजी सिंधिया की विधवा बाइयो को महाराजा शत्रुजीत सिंह न सेंवढा के किल म आश्रय दिया था, जिससे रुष्ट होकर सिंधिया महाराजा दौलतराव न शत्रुजीतसिंह पर आक्रमण करन के लिए अम्बाजी इगल के नतत्व म एक विशाल सेना भजी थी[278], पहला ही मुठभेड म अम्बाजी न दतिया नरेश के बल वैभव की थाह लेली और ग्वालियर नरेश के पास और अधिक सना भेजने हेतु सूचना पहुँचाई।[279] सहायताथ फ्रान्सीसी सना नायक पीरू सहित चार पल्टनें भेजी गई। दूसरी बार की मुठभेड म ग्वालियर युद्ध के पश्चात अनिर्णीत ही युद्ध रोककर दोना पक्षा ने अपनी अगली योजनाओ पर विचार किया। यहा महाराजा शत्रुजीत सिंह की विजय का सदय प्राप्याशा म सदिग्ध हो गया। दतिया नरश की सना म अगमो लकवा तथा

खीची दुरजन साल ने सम्मिलित रूप से मोर्चा जमाया। उधर पीरू ने चार पल्ट सात सौ तुर्क सवार तथा पाँच हजार अन्य सेना के साथ कूचकर चम्बल पार भिण्ड होते हुए इन्दुरखी नामक स्थान पर डेरा डाला।[350] अम्बाजी इंगले त पीरू की सम्मिलित सेना का सामना करने के लिये महाराजा शत्रुजीत स्व तैयार हुए परन्तु उनके सलाहकारों ने युद्ध का उनके लिए यह उचित अवसर बताकर उन्हें युद्ध में जाने से रोक दिया। यहाँ शत्रुजीत रासो के कथानक चौथा मोड़ है। महाराजा शत्रुजीत की विजय योजना में फिर एक व्याघात उत्प हो गया। युद्धस्थल में ही विश्राम, शौच, स्नान, ध्यान, पूजापाठ आदि की क्रिया के द्वारा युद्ध की योजनाओं को विलम्बित किया गया है।[351] पीरू ने सिंध न के किनारे बरा गिरवासा ग्राम के कछार में मोर्चा जमाया तथा यहीं पर महारा शत्रुजीत सिंह से निर्णायक युद्ध हुआ। महाराजा शत्रुजीत सिंह विजयी तो हु परन्तु घातक घाव लगने से उनकी मृत्यु हो गई थी।

उपर्युक्त विवरण से शत्रुजीत रासो की प्रबंधात्मकता पर अच्छा प्रका पड़ता है। कवि को कथासूत्र के निर्वाह में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है।

'श्रीधर' कवि का पारीछत रायसा' एक प्रबंध रचना है। इसके नायक दतिया नरेश पारीछत हैं। इस रायसे में एक छोटी सी घटना पर आधारित युद्ध का वर्णन किया गया है। दतिया नरेश के आश्रित कवि ने अपने चरितनायक के बल वैभव और वीरता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है। महाराज पारीछत उच्च क्षत्रिय कुल में उत्पन्न धीरोदात्त नायक है।

'पारीछत रायसा' के कथानक में दतिया और टीकमगढ़ राज्यों के सीमा वर्ती गाँव बाघाट में हुए युद्ध की एक घटना वर्णित है। युद्ध की घटना साधारण ही थी, परन्तु कवि ने कुछ बढ़ा चढ़ा कर वर्णन किया है। श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव के अनुसार– श्रीधर के इस पारीछत रायसा में नरेश के सम्पूर्ण शासनकाल का चित्र तो नहीं है– उनके शासन-काल की एक महत्वपूर्ण घटना बाघाइट का घेरा कुछ विस्तार से वर्णित हुई है।[352] इस प्रकार पारीछत रायसा एक खण्ड काव्य है। टीकमगढ़ राज्य की ओर से बाघाइट के प्रबन्धक दीवान गन्धर्वसिंह ने गर्वपूर्वक दतिया राज्य के सीमावर्ती ग्राम पुतरी खेरा में आग लगवा दी थी और तरीचर गाँव टीकमगढ़ राज्य में मिला लिया जो दतिया राज्य का एक गाँव था। महाराज पारीछत को इसकी सूचना मिलने पर उन्होंने दीवान दिलीपसिंह के नेतृत्व में एक सेना गन्धर्व सिंह को दण्ड देने के लिये भेजी। दतिया की सेना उनाव, बड़े गाँव आदि स्थानों पर पड़ाव करती हुई बेतवा की नौहट घाट पर पारकर बाघाइट के समीप पहुँची। दोनों ओर की सेनाओं में एक हल्की सी मुठभेड़ हुई फिर एक जोरदार आक्रमण में दतिया की सेना ने दीवान गन्धर्व सिंह की सेना को पराजित

किया। बाघाइट म आग लगा दी गई विजय श्री महाराज पारीछत को प्राप्त हुई। कथानक के प्रवाह म सवत्र सरस गतिमयता तो दिखाई देती है, परन्तु सरदारों के नामों और जातियों की लम्बी लम्बी सूचियाँ प्रस्तुत करके कवि ने कथा प्रवाह म बाधा उत्पन्न की है।[333] फिर भी कहा जा सकता है कि श्रीधर को प्रबन्ध निर्वाह म पर्याप्त सफलता मिली है। इस रायसे के कथानक को सर्गों में विभाजित नही किया गया। काव्य नायक के जीवन काल की किसी घटना विशेष का चित्रण ही होने के कारण ऐसे काव्य आकार म इतने संक्षिप्त होते हैं, जितना कि किसी महाकाव्य का एक सग।

अत उपयुक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि 'श्रीधर' कवि द्वारा लिखित 'पारीछत रायसा' प्रबंध प्रवाह से युक्त एक खण्डकाव्य रचना है।

"बाघाइट कौ राइसौ" मे भी दतिया और टीकमगढ राज्यो के सीमा विवाद की घटना पर ही आधारित एक संक्षिप्त सा कथानक है। श्रीधर कवि का पारीछत रायसा एव प्रधान आनन्द सिंह का "बाघाइट कौ राइसौ" एक ही घटना और पात्रो पर लिखे गये दो अलग-अलग काव्य हैं। इन दोनों ग्रन्थों मे मूलत एक ही कथानक समाहित होते हुए भी वणन की दृष्टि मे पर्याप्त अन्तर है। बाघाइट कौ राइसौ के वणन बिल्कुल सीधे सादे अतिशयोक्ति रहित हैं। कवि दरबारी चाटुकारिता से अल्प प्रभावित दिखलाई पडता है। श्रीधर विशुद्ध प्रशसा काव्य लिखने वाले धन, मान, मर्यादा के चाहने वाले राज्याश्रित कवि थे, सभवत इसी कारण पारीछत रायसा के सभी वणन अतिशयोक्ति से पूर्ण है। गन्धर्वसिंह दीवान गनेश तथा महेन्द्र महाराजा विक्रमाजीत सिंह के परामर्श का विवरण बाघाइट कौ राइसौ म कुछ छन्दों म लिखा गया है, जबकि पारीछत रायसा मे लगभग तीन पृष्ठ म यह बात कही गई है। प्रधान आनन्द सिंह न मगलाचरण के पश्चात केवल यह लिखकर आग की घटना की सूचना देदी है– श्री महेन्द्र महाराज नें तरीचर लऊ कौ मनसूबा करो'[334] इसी बात को पारीछत रायसा म महेन्द्र महाराज न काफी वाद विवाद के पश्चात तय किया। पारीछत रायसा म यह साफ लिखा गया है कि दतिया नरेश, न सदव ओरछा के महेन्द्र महाराज की रक्षा की तथा– रज राजतिलक महाराज नें हमको मह उनही दियव।"[335] अर्थात् दतिया महाराज ने ही विक्रमाजीतसिंह को राजतिलक किया था। इसी कारण ओरछा नरेश महाराज पारीछत को सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

दीवान गन्धर्वसिंह के द्वारा पुतरी घेरा ग्राम मे आग लगा दी गई तथा तरीचर ग्राम को अपने अधिकार म कर लिया गया था। लल्ला दौवा नाम के प्रबन्धक ने दतिया नरेश के पास इस घटना की सूचना भेजी, जिसके परिणामस्वरूप दतिया नरेश ने बाघाइट को उजाड़ने तथा दीवान गन्धर्व सिंह को दण्ड देने के लिए

सेना भेजी। पारीछत रायसा में सैनिकों के सजने एवं सेना प्रयाण का बहुत विस्तृत और अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन है[286], किन्तु बाघाइट की राइसौ में सेना तथा युद्ध के सामान का साधारण सा वर्णन किया गया है। सेना के प्रस्थान एवं पड़ाव के स्थानों की केवल सूचना भर कवि ने दे दी है।[287] जबकि 'पारीछत रायसा' में उनाव, बड़े गाँव, नौहट घाट आदि पर सेना के पड़ाव के साथ साथ (उनाव में) दीवान दिलीप सिंह के स्नान, पूजा, शिकार आदि का भी विस्तृत वर्णन किया गया है।[288]

'बाघाइट की राइसौ' में युद्ध की मारकाट का बहुत सूक्ष्म और साधारण वर्णन किया गया है। कवि ने घटनाओं की संक्षेप में सूचना देते हुए कथानक को समाप्त किया है। अतः स्पष्ट है कि महाराज पारीछत के जीवन की घटना विशेष पर आधारित 'बाघाइट कौ रायसौ' एक खण्ड काव्य है।

जिस प्रकार 'पारीछत रायसा' और 'बाघाइट को रायसौ' एक ही घटना पर लिखे गये दो काव्य हैं ठीक उसी प्रकार प्रधान कल्याण सिंह कुड़राकृत 'झासी कौ राइसौ' तथा मदन मोहन द्विवेदी मदनेश कृत 'लक्ष्मीबाई रासो' की कथावस्तु एक ही चरित नायक के जीवन पर लिखे गये दो भिन्न भिन्न काव्य हैं।

वीर काव्यों का नायक किसी स्त्री पात्र का होना एक विलक्षण सी बात है। पर महारानी लक्ष्मीबाई के चरित्र में वे सभी विशेषतायें थीं जो एक वीर योद्धा के लिए अपेक्षित थीं। प्रधान कल्याण सिंह कुड़रा तथा मदनेश जी द्वारा लिखे गए दोनों रायसे प्रबन्ध परम्परा में आते हैं। दोनों में ही रानी लक्ष्मीबाई के जीवन की कुछ प्रमुख घटनाओं का उल्लेख किया गया है। अतः ये काव्य ग्रंथ खंड काव्य की कोटि के हैं। कल्याण सिंह कुड़रा कृत 'झाँसी कौ रायसौ' को श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव ने साहित्यिक प्रबंध बतलाया है।[289] परन्तु प्रधान कल्याण सिंह को प्रबन्ध निर्वाह में विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई क्योंकि ग्रंथारंभ में इन्होंने पहले गणेश सरस्वती आदि की वंदना के पश्चात अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति की सूचना संकेतात्मक ढंग से दी है और इसको यहीं छोड़कर झासी की रानी और नत्थे खाँ के मध्य हुए युद्ध की घटनाओं का ब्यौरेवार वर्णन प्रारम्भ कर दिया है। इसके पश्चात जहाँ नत्थे खाँ प्रसंग समाप्त होता है, वहाँ से फिर कथा सूत्र में विच्छिन्नता आ गई है। कवि ने झाँसी कालपी कोंच तथा ग्वालियर के युद्धों के संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किये हैं। इन सबको पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि कवि द्वारा इस ग्रंथ की रचना टुकड़ों में की गई है। इसी कारण कथा प्रवाह में एकसूत्रता नहीं रहने पाई। फिर भी 'झासी कौ राइसौ' का कथानक इतिहास प्रसिद्ध घटना पर आधारित है और इसमें यथा सम्भव प्रबन्ध निर्वाह का प्रयास किया गया है।

ग्रंथों के आधार पर उपलब्ध विवरण निम्नानुसार दिया जा रहा है।

रासो काव्यों की प्राचीन परम्परा में चन्द वरदाई ने पृथ्वीराज रासो म कई स्थलो पर ज्योतिष सम्बन्धी युक्तिसगत वणन किये गये हैं, परन्तु परिमाल रासो के उपलब्ध अश मे इस प्रकार के वणन अप्राप्य ही है। ज्योतिष वणन की जो परम्परा चन्द ने पृथ्वीराज रासो से प्रारम्भ की वह यूनाधिक रूप मे आधुनिक बुंदेली रासो ग्रथो तक चली आई। 'रेवा तट समया' के एक उदाहरण म ज्योतिष वर्णन निम्न प्रकार किया गया है–

> 'वर मगल पचमी दिन सु दीनो प्रिथि राज
> राहु केतु जप ग्गन दुष्ट टार सुभ काज।
> अष्ट चक्र जोगिनी भोग भरनी सुधिरारी
> गुरु पचमि रवि पचम अष्ट मगल नप भारी।
> कै इद्र वृद्धि भारथ्थ भलक्कर त्रिशूल चक्रावनिय,
> सुभ घरिय राज वरलीन वर चढयौ उदै कूरह वलिय ॥ [190]

(श्रेष्ठ पचमी मगलवार को पृथ्वीराज ने युद्धारम्भ के लिए चुना। राहु और केतु उस दिन पथ्वीराज क लिए अनुकूल हुए क्योकि दुष्टग्रह के हटने पर शुभ की सम्भावना होती है। अष्ट चक्र पर योगिनी स्थिर रहने से तलवार के लिए शुभ के रूप म थी। गुरु (बृहस्पति) और रवि पाचवें स्थान पर इस प्रकार बड़े भारी अष्टम स्थान म मगल ग्रह राजा को थे। केन्द्रीय स्थान पर बुध था जो हाथ मे त्रिशूल चिह्न और मणिबन्ध मे चक्र वाले के लिए शुभ था। ऐसी शुभ घडी में क्रूर और बलवान ग्रह (सूय या मगल) के उदय होने पर महाराज ने आक्रमण किया।)

तथा

> "सो रचि उद्ध अवद्ध अथ उग्गिमहबधि मद
> वर निपिद नप वन्दयौ को न भाइ कवि चन्द ॥ [191]

(जब महान अवधि वाला मद (शनि) ग्रह उदय हुआ तो पथ्वीराज ने अपने हाथ नीचे से ऊपर उठाए (प्रणाम किया) (और) राजा न अत्यन्त निषिद्ध (गुह्य) शनि की वन्दना की। चन्द कवि कहते हैं कि ऐसा किसे न भाएगा ?

जोगीदास के दलपतिराव रायसा में ज्योतिष सम्बधी वणन नहीं किए गए हैं। इसी प्रकार करहिया कौ राइसौ' एवं शत्रुजीत रायसा मे भी इस प्रकार के वर्णन नहीं पाए जाते हैं।

पारीछत रायसा' म श्रीधर न ज्योतिष शास्त्र के आधार पर शकुन वर्णन निम्न प्रकार किया है। सेना प्रयाण तथा युद्ध के समय सरदारो के शुभ शकुनों का इस प्रकार वर्णन किया है–

"तब दिमान सिकदार वरम मन्दिर पग धारे।
नवुल दरस मग भयौ रजक धोइ वस्त्र लिहारे ॥'[393]

तथा

'श्री दिमान सिक्दार देव ब्रह्मा जव परस।
परस च्छछ भुज नैन माद मन म अति सर्सै ॥
मन्दिर बाहिर आइ तहाँ दुजवर विवि दिप्पव।
वर पुस्तक गर माल तिलक मुनिवर सम पिप्पव ॥
तिन दई असीस प्रसन्न हुव सुफल होइ कारज्ज सब।
कीनी जू दण्डवत जोरकर मगवाये हयराज तब ॥'[393]

उपयुक्त छन्दो मे नेवला का दर्शन, वस्त्र धोकर लाता हुआ धोबी, दाहिनी भुजा और नेत्र का फड़कना, मन्दिर के बाहर तिलक लगाय पुस्तक लिए, माला धारण किए दो ब्राह्मणों का आना आदि शकुनो का वर्णन किया गया है। श्रीधर ने एक स्थान पर लिखा है कि जो शकुन राम को लंका जाते समय और पृथ्वीराज को वृज जाते हुए घटित हुए थे वही दिमान सिक्दार को भी हुए–

राम लंक प्रथीराज कौं भए सगुन वृज जात।
श्री दिमान सिक्दार कौं लेई सगुन दिपात ॥'[394]

एक उदाहरण देखने योग्य है–

"सिरी चौंर गज ढाल पैं, कंचन फूल अनूप।
रवि ससि सनगुर मौं भज उपमा लगत अनूप ॥[395]

अर्थात् छत्र, चवर और हाथी की ढाल पर बने सोने के सुन्दर फूल से ऐसा, सौंदर्य उपस्थित होता है जैसा कि रवि, शशि, शनि और गुरु (ब्रहस्पति) के संयोग से महाराज्य योग बनने पर होता है।

बाघाट रासो म ज्योतिष वर्णन नहीं पाया जाता है। कल्याण सिंह कुडरा कृत झाँसी कौ राइसो म झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई और टीकमगढ़ के दीवान नत्थे खाँ तथा लक्ष्मीबाई और अंग्रेजों के साथ हुए युद्धों मे ज्योतिष वर्णन अति न्यून रूप में केवल एक छन्द में देखा जाता है–

'बुद्ध रवि राऊ केत आइ कें दबाई देत,
जानि कैं निकेत ताइ पार देत बाहिरौ।
आगिम अवास अग्नि पृथ्वी पौन पानी मे,
बदन विदित जस जाकौ है जाहिरौ ॥"[396]

ज्योतिष, पूजा पाठ, ब्राह्मण कृत्यों आदि की झलक 'मदनेश' कृत लक्ष्मीबाई रासो म कई स्थानों पर मिलती है। शकुन अपशकुन का वर्णन परम्परागत शैली म किया गया है। इस वर्णन पर रामचरित मानस की पूरी छाप है। जैसा कि

कवि परिचय म परिचय दिया जा चुका है कि श्री मदेश जी को ज्योतिष ज्ञान पूवजो से विरासत मे मिला था एव ज्योतिष की शिक्षा भी उन्होने प्राप्त की थी, इस दृष्टि से कवि की रचनाओ पर ज्योतिष सम्बन्धी प्रभाव होना स्वाभाविक ही था। जहाँ लाभ की सम्भावना हुई, वहाँ कवि ने शुभ शकुनो का वणन किया है एव हानि के समय अपशकुनो का दशन कराया है।

नत्थे खाँ की सेना के ओरछा से झासी प्रस्थान के समय कवि ने अनेक अपशकुनो का वणन किया है सामने छीक होना शृगाल का रास्ता काटकर निकल जाना आदि।[297] इसके पश्चात् माग म सागर को लूटकर जब पुन नत्थे खाँ की सेना झाँसी की ओर अभिमुख होती है तो कवि ने फिर अपशकुनो की झडी लगा दी है।[298] सामने छीक होना, शृगाल का रास्ता काटना हिरणी का बायी ओर जाना, कौओ का चारो ओर शोर करना, कुत्ते का कान फडफडाना बिना स्नान किए हुए ब्राह्मण का मिलना, तरुणी विधवा का मिलना, साप का रास्ता काटना, रोती हुई बुढ़िया, गाडी पर लेटा हुआ रोगी, गिद्ध का उडकर भुजा पर बठना, खाली घडे, लोटता हुआ बिलाव, पेड पर दो उल्लुओ का क्रीडा करना गधे का आकर बोलना, हवा का भयकर रूप म चलना काना जलती हुई लकडी कर पर खाता हुआ भिखारी, नगी लडकी पुरुषो का वामाग फडकना, इधन से भरी पडी गाडी ध्वजा का वायु से फट जाना आदि अनेक अपशकुनो की भीड लगा दी है।

इसके विपरीत कवि ने अपनी काव्य नायिका रानी लक्ष्मीबाई के पक्ष के लिए शुभ शकुनो का वणन किया है जस रानी की वाम भुजा फडकना नीलकण्ठ का दशन होना पानी भर कर आती हुई सुन्दर स्त्रिया ब्राह्मणो का वेद पाठ चील का गुज पर बठना कन्याओ का खेलना, मुन्दर फलो को बचन का दृश्य धूप दीप नैवद्य गाय का बछडे को दूध पिलाना, मगल गान सिर पर दूध का घडा लेकर आता हुआ पुरुष शख झालर दुदुभी का शब्द होना मछली लेकर धीमर का आना धोबी का सिर पर वस्त्र रखे जाना रानी की बायी आँख फडकना, तलवार की मूठ स म्यान का बधन अलग होना आदि।[299]

कवि के द्वारा उपयुक्त शुभ व अशुभ शकुनो को प्रसगानुकूल दुहराया भी गया।[300] पर कही कही ये निरे पिष्ट पषण मात्र लगते है।[301] शुभ अशुभ शकुनो की भरमार म कथानक की सरसता एव प्रवाह म बाधा उत्पन्न हुई है। एक साथ ही कवि सभी प्रकार के शुभ अशुभ शकुनो का दशन कराने बठ गया है जिससे वणन मे कृत्रिमता भी आ गई है।

सन्दर्भ

१ हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर, पृ १४५
२ वही, प १४६
३ जागीदास का दलपति राव रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ४१८, ४१६
४ हिन्दी वीर काव्य–डा० टीकमसिंह तोमर, पृ १५८
५ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ १७३, छन्द २४७
६ वही, प १७४ छन्द २७५ ७ वही प १७४ छन्द २७६
८ वही प १७४ छन्द २७७ ८ वही, पृ १७४ छन्द २७८
१० वही प १७४ छन्द २७६
११ श्रीधर का पारीछत रायसा म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १०४ १०५
१२ वही प ११३ १३ वही प ११६
१४ वही प ११८
१५ वाघाट का रायसा म हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, पृ ८२
१६ वही पृ ८४
१७ वारागना लक्ष्मीबाई–रासो और कहानी श्री हरिमोहन ला श्रीवास्तव प ७१५
१८ वही प २०
१६ लक्ष्मीबाई रासो म डॉ० भगवानदास माहौर भाग ३ प १८
२० हिन्दी वीर काव्य–डॉ० टीकमसिंह तोमर, प १५८
२१ लक्ष्मीबाई रासो म डॉ० भगवानदास माहौर भूमिका प ८१
२२ जोगीदास का दलपति राव रायसा म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४२२
२३ वही पृ ४५१
२४ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, छन्द २६
२५ वही प ३७ २६ वही पृ ४८
२७ वही पृ ७४ २८ वही, प ७८
२८ लक्ष्मीबाई रासो म डॉ० भगवानदास माहौर भूमिका पृ ८
३० श्री धर का पारीछत रायसा म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ६७
३१ वही प ८७
३२ वाघाइट को रायसो–म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव विंध्य शिक्षा फरवरी १८५६ प ६८
३३ वही पृ ६८ ३४ वही, प ६६
३५ लक्ष्मीबाई रासो म डॉ० भगवानदास माहौर भाग २ पृ १० छन्द १३ भाग ८ प ११० छन्द २८ स ३०, पृ १११ छन्द ३१ स ३५ पृ ११२ छन्द ३६ से ४०, पृ ११३ छन्द ४१

३६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवादास माहौर, भाग १ पृ ४ छ० १८ से २०, भाग ३ पृ २८ छ० ४०, भाग ४ प ३१, ३२ छन्द ८ पृ ३३, छन्द ११, भाग ५ प ४६, ४७ छन्द ४० का अश, भाग ६ प ७७ छन्द ५०, ५१
३७ वही, भाग २ पृ १५ छन्द २१ से २३ पृ १५ छन्द २४, २५ भाग ८ पृ १०४ छन्द ६ ७
३८ जोगीदास का दलपति राव रायसा—श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ४२८ छन्द ४६
३९ वही प ४५८, छ द २६१
४० वही पृ ४४६ छ० १६६
४१ वही, पृ ४४६, छन्द १६४
४२ वही, प ४४८, छ० १८७
४३ वही, पृ ४५३ छन्द २६०
४४ नागरी प्रचारिणी पत्रिका नवीन सस्करण भाग १० छ० ८ प २७८
४५ वही, सवत १६८६ छ० ५१
४६ वही, छ० ३८, पृ २८३
४७ वही, छ० ३५ पृ २८३
४८ वही छ० ४५ पृ २८६
४९ शत्रुजीत रासा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १५३ छ० १५७
५० वही, पृ १६३ छ० १६४
५१ वहा पृ १६३ छ० १७२ १७३
५२ वही, पृ १६०, १६१ छ० १३२
५३ वही, प १६०, १६१ छ० १३२
५४ वही, पृ १६६ छ० २५७
५५ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ६४
५६ वही, पृ ६४
५७ वही पृ ७२
५८ वही, पृ ८२
५९ वही, पृ ६८, ६६
६० वही, पृ ६५
६१ वही, पृ ६८
६२ वही, पृ ७६
६३ वीरागना लक्ष्मीबाई—रासो और कहानी स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ १६, १६, २७, ३३–३४
६४ वही, प २३ ३१
६५ वही, पृ २४, २५
६६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर भाग ४, प ३६, भाग ६, पृ ३६–४०
६७ वही, भाग ५ पृ ४५ छ० ३७, भाग ७ पृ ८८ छ० ८ ८ ११ पृ ६५ छ० ४०, प ६६ छ० ४१ स ४५ आदि
६८ वही भाग ३ पृ २२ छ० २१ पृ २३ छ० २२ स २५ पृ २४ छ० २६
६९ वही भाग ५ पृ ३६ छ० २५ पृ ४२–४३ छ० ३२–३३, पृ ४५–४६ छ० ३८
७० वही, भाग ७ पृ ६६–६७ छ० ४७, ५०, प ६८ छ० ५६ भाग ८ पृ १०६ छन्द २३

७१ लक्ष्मीबाई रासो स ।डॉ० भगवानदास माहौर भाग ५, पृ ४४ छ० ३५, पृ ४५ छ० ३६–३७
७२ वही, भाग ३, पृ २३ छ० २३
७३ वही, भाग ५, प ४७
७४ वही, भाग १, प ४ छद १८ से २०, पृ ५ छद २१–२२
७५ वही, भाग ३, पृ १८ छ० ७–८, प १६ छ० ६
७६ वही भाग ४, प ३२–३३ छ० ११
७७ वही भाग ४, प ३१–३२ छ० ७ से १०
७८ वही भाग ४, पृ ३३–३४ छ० १३–१४
७९ वही भाग ६, प ५६
८० वही, भाग ७, प ८६ छद १३ की प्रथम पक्तियाँ
८१ वही भाग ७, प ६१ छद १८ भाग ८, प १०८ छद २२
८२ वही, भाग ७, पृ ६१
८३ वही, पृ ६० छद १४ से १६
८४ वही, भाग ८ पृ १११ छद ३१, ३३, ३५
८५ वही भाग ७ पृ ८० छ० १५ की प्रथम पक्ति
८६ वही, भाग ७ प ६ छद १६
८७ वही, भाग ३ पृ २७ छद ३८
८८ वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी था हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १० स २०, २२ से २७, २८ ३८ स ३५, ३८ स ४०
८९ वही, पृ १२ १४, २१–२२, २६ २८, २९
९० वही प १३, १६, १८, २२ २४, २६ २८, ३३, ३८
९१ वही, पृ ११, १६, २१, २४, २७–२८, ३०, ३३, ३५ ।४०
९२ वही, पृ १४, १९, २५, २९–३०, ३५, ३७
९३ वही, प ३३–३४, ३८
९४ वही प ३६
९५ वही, पृ ३६
९६ वही, प १०, १२–१३, १५ से २१, २३, २५ से ३२ ३४, ३६ से ३९
९७ वही, पृ १६ २१
९८ लक्ष्मीबाई रासो म डा० भगवानदास माहौर भाग ७ प ६० छद १६
९९ वही, प ६०
१०० वही भाग १ पृ २ छद ११वें दोहे के ऊपर की ८ पक्तियाँ
१०१ वही, भाग ५ प ४७ छद ४०

१०२ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर, भाग ५ प ४७ छन्द ४०व दोहे के नीचे की पक्तिया

१०३ वही भूमिका भाग प ८८

१०४ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १०८ छन्द ३१०

१०५ शत्रुजीत रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १५६ छद ८१ से ८३

१०६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर, भाग ३ प २२ छन्द १९ के पश्चात प्रथम पक्ति

१०७ वही, पृ २२, छद १९ के पश्चात आठवी पक्ति

१०८ वही प २८

१०९ जोगीदास का दलपति राय रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४३५ ४३६ छद ८२ मे ८४ तक

११० बाघाइट को राइसौ विन्ध्य शिक्षा फरवरी १८५६ शिक्षा विभाग विन्ध्यप्रदेश रीवा म श्री रामभित्र चतुर्वेदी प ६८ छ० २ से ४ प ६८ छ० ५ प ७२ छ ५५

१११ जोगीदास का दलपतिराव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४३३ छन्द ७४

११२ वही प ४४० छ द ११४

११३ वही, प ४३२, ४३३ छ० ७३

११४ वही, प ४४० छ० ११४

११५ शत्रुजीत रासा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १६६–१६७ छन्द २१८ से २२२ तक

११६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर, भाग १ प २ स ५ ७–८ भाग २ प ९ से १२ तथा भाग ३, प १७

११७ जोगीदास का दलपति राव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४४२ छन्द १२२

११८ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १५५ छ० ७६ प १५६ छ० ७७–७८ प १६३ छ० १६३ स १७३, प १६४ छद १७४ से १८९

११९ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर, भाग ७ पृ ८० छ० १६

१२० जोगीदास का दलपतिराव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४५३ छन्द २२४

१२१ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १५६ छ ११४ स ११७

१२२ लक्ष्मीबाई रासा स डॉ० भगवानदास माहौर भाग ६ प ५०–५१
१२३ वही प ८६
१२४ विध्य शिक्षा स श्री राममित्र चतुर्वेदी एम ए, प ७७ छ० १२०
१२५ लक्ष्मीबाई रासो म डॉ भगवानदास माहौर भाग ५, पृ ३६ छ २३
१२६ वही, भाग ५ प ४३ छ० ३२
१२७ वही, पृ ४६ छ० ४३
१२८ वही, प ४८ छ० ४२
१२९ वही, पृ ४५ छ० ३७
१३० वीरागना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ३६
१३१ लक्ष्मीबाई रासो म डा० भगवानदास माहौर भूमिका प ८६
१३२ वही प १२ छद १३
१३३ वही भाग ८ प ११० छद २७ से ३०, प १११ छद ३४–३५
१३४ वही, प १११ छद ३३
१३५ वही प १११ छद ३२
१३६ वही, प ११२ छद ३६ से ४०, पृ ११३ छद ४१
१३७ जोगीदास का दलपतिराव रायसा श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४१४ छद ६ पृ ४४४ छ द १४१
१३८ वही, प ४२८ छ० ४६
१३९ वही पृ ४३७ छ० ८६
१४० वही, प ४३८–४३८ छ० १०७
१४१ वही, प ४४१–४४२ छ० ११८ स १२१
१४२ वही प ४४६ छ० १७१ प ४५२ छ० २१३
१४३ वही प ४४७–४४८ छ० १७८
१४४ वहा प ४४६ छ० १८३–१८४
१४५ वही ४५५ छ० २४२
१४६ वही प ४६४ छ० ३०२
१४७ वही प ४६४–४६५ छ० ३०४
१४८ वही प ४६५ छ० ३०८
१४९ वही पृ ४४१ छ० ११६
१५० वही प ४५२ छ० २१३
१५१ वही पृ ४५२ छ० २१३
१५२ वही, प ४६४–४६५ छ० ३०४
१५३ शत्रुजीत रासा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १७८ छ० २६६
१५४ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर भाग ७ पृ ८३ छ० २७
१५५ जोगीदास का दलपति राव रायसा श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४३६ ४४० छ० ११२
१५६ वही प ४५१–४५२ छद २१०–२११
१५७ वही पृ ४२७ छद ४०–४१
१५८ वही पृ ४१४–४१५ छद ११ पृ ४१६ से ४१८ छ० १४

१५८ जोगीदास का दलपतिराव रायसा श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४२१ ४२४ छद १६
१६० वही, प ४५०–४५१ छद १८६ म १६८
१६१ वही, पृ ४१४–४१५ छद ११, पृ ४१६ से ४१८ छद १४, पृ ४२१ से ४२४ छद १८ पृ ४३०–४३१ छद ६१ प ४४५ छ० १५१, प ४५०, ४५१ छ० १८६ से १६८ तथा पृ ४५६–४५७ छ० २५०
१६२ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ १६५ छद १८६ से २०१
१६३ वही पृ १६७ छद २२७
१६४ पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव छद ६०
१६५ जोगीदास का दलपति राव रायसा श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४६१, ४६२ छद २८३
१६६ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १५५ छ० ७४
१६७ जोगीदास का दलपति राव रासा श्री हरिमाहन लाल श्रीवास्तव पृ ४३३ से ४३५ छ० ७६ से ७६
१६८ छछूदर रायसा, हस्तलिखित प्रति छ० ४
१६९ *हिंदी वीर काव्य, डॉ० टीकमसिंह तोमर प १४०*
१७० नागरी प्रचारिणी प नवीन सस्करण भाग १० स १६८६ वि० छ० ५७
१७१ वीरागना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ३६–३७
१७२ जोगीदास का दलपतिराव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४१३ छ० क्रमाक रहित प ४४६ छ० १६६ प ४४८ छ० १८७, प ४५७ छ० २५४–२५५ पृ ४५८ छद २६१, पृ ४५८ छ० २६६ पृ ४६१ छ० २७६ एव पृ ४६२ छ० २८४
१७३ वही पृ ४२८ छ० ४१
१७४ वही, पृ ४३६ छ० १११
१७५ वही, पृ ४६५ छ० ३०८
१७६ वही प ४२४ छ० २७
१७७ वही, प ४५८ छ० २५८
१७८ वही पृ ४५६ छ० २४५
१७९ वही, पृ ४५६ छ० २६५
१८० वही, पृ ४५६ छ० २६८
१८१ वही, पृ ४६० छ० २७०
१८२ वही, पृ ४६० छ० २७४
१८३ जोगीदास का दलपति राव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रावास्तव पृ ४१३ व ४२८
१८४ शत्रुजीत रासो सं श्री हरि मोहनलाल श्रीवास्तव, पृ १५ छ ४
१८५ वही, पृ १५ छ० ५

१८६ शत्रुजीत रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ १७० छन्द २५६
१८७ पारीछत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ११७ छन्द ३४१
१८८ विन्ध्य शिक्षा स श्री राममित्र चतुर्वेदी, पृ ७० छ० २८
१८६ वही पृ ७१ छ० ४०
१६० वीरागना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १६
१६१ वही पृ २१
१६२ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर भाग १ पृ ८ छ० ३६ एव भाग ७ पृ ८८ छ० ८
१६३ वही भाग ३ पृ २२-२३ छ० २१ मे २३
१६४ जोगीदास का दलपति राव रासो श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४६२ छ० २८६ तृतीय चरण पृ ४६३ छ० २८८ तृतीय चरण, छ० २८४ द्वितीय चरण
१६५ वही, पृ ४६२ छ० २८७ प्रथम चरण
१६६ वही पृ ४६२ छद २८८ तृतीय चरण, पृ ४६३ छ० २६१ प्रथम चरण
१६७ वही, पृ ४६४ छ० २६७ चौथा चरण
१६८ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १७० छन्द क्रमाक रहित
१६६ वही, पृ १७१ छ० २६५
२०० वही, पृ १७१ छ० २६६
२०१ वही, पृ १७२ छ० २६७
२०२ वही, पृ १७५ छ० २८६
२०३ वीरागना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी श्री हरिमोहन श्रीवास्तव, पृ ३३ ३४
२०४ वही पृ ३८
२०५ वही, पृ ३६
२०६ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर भाग ७, पृ ८५ छ ४०-४१ पृ ८६ स १०१ छ० ४३ से ६३ तक
२०७ वही, भाग ८ पृ १०५ से १०७ छ० ८ से १८ तक
२०८ वही पृ १०६ छ० २३ स २५ तक
२०६ हिन्दी वीर काव्य डॉ० टीकमसिंह तोमर पृ १४३
२१० शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, पृ १५६ छ० ११०-१११, पृ १८० छ० ३१८
२११ वही, पृ १८० छ० ३१६, ३१७ तथा ३१६

२१२ जोगीदास का दलपतिराव रासा श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव प ४१३ ४१४ छन्द ५
२१३ वही, प ४१८ स ४२० छ० १६
२१४ वही, पृ ४३७ छ० ८६
२१५ शत्रुजीत रासा म श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १५४ छ० ६५–६६ प १८१ छ० ३२८ से ३३४ तक
२१६ वही प १८३ छ० ३५१ स ३६४
२१७ वही पृ १८५ छ० ३७३ से ३८३ पृ १८६ छ० ३६८, पृ १८७ छ० ३६६ से ४०६
२१८ पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ६२ छ० १४
२१९ वही, प ८१ छ० १४४
२२० वही, प ६६ छ० ६८
२२१ बाघाइट कौ राइसौ विन्ध्य शिक्षा, फरवरी १९५६ स श्री राममित्र चतुर्वेदी, प ७२ छ० ४७ पृ ७७ छ० ११०
२२२ वही, पृ ७१ छ० ४२ प ७३ छ० ५८
२२३ वही, प ७० छ० ३० प ७६ छ० १०३ प ७५ छ० ६२
२२४ वही पृ ७४ छ० ८०, प ७५ छ० ६१
२२५ वही, पृ ७३ छ० ६८
२२६ वही, प ७४ छ० ७७–७८ प ७६ छ० ८५ प ७७ छ० ११६
२२७ वही, प ७८ छ० १२३
२२८ वही प ७२ छन्द ४५ प ७४ छ० ७०
२२९ वही, प ७२ छ० ५२
२३० वही पृ ७५ छ० ८६, प ७८ छ० १२६
२३१ वही, प ७८ छ० १२७
२३२ वही, प ७८ छ० १३१
२३३ वीरागना लक्ष्मीबाइ रासो और कहानी' श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १०, १८ से २१ २३ २५ स २७
२३४ वही प १७, १६ ३१–३२
२३५ जागीदास का दलपतिराव रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ४२८
२३६ वही, पृ ४१८
२३७ वही पृ ४२६
२३८ वही, पृ ४५६
२३९ वही प ४४६
२४० हिंदी वीरकाव्य डा० टीकमसिंह तोमर, प ११५

२४१ शत्रुजीत रासा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १७३ छ० २७४
२४२ वही, पृ १६७ छ० ८२ २४३ वही, पृ १७४ छ० २७६
२४४ वही, पृ १७३ छ० २७१ २४५ वही, पृ १७२ छ० २७०
२४६ वही, पृ १६४ छ० १८३
२४७ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ६६
२४८ वही, पृ ६७ २४९ वही, पृ ८२
२५० वही, पृ १०५ २५१ वही, पृ ११६
२५२ बाघाट की राइसौ स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, विन्ध्य शिक्षा पृ ६८
२५३ काव्य प्रदीप श्री रामबहोरी शुक्ल, पृ १२६
२५४ बाघाट कौ राइसौ स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, विन्ध्य शिक्षा फरवरी १८/६ पृ ७४
२५५ वही, पृ ७५
२५६ वीरांगना लक्ष्मीबाई–रासा और कहानी स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ २०
२५७ वही, पृ २८ २५८ वही, पृ ३९
२५९ लक्ष्मीबाई रासा स डा० भगवानदास माहौर, भाग १ पृ ४ छ० १८ से
२६० वही, भाग ३, पृ १७, छन्द ६
२६१ वही, भाग ३, पृ २३ छ० २५
२६२ वही, भाग २, पृ ११ छ० ११
२६३ वही, भाग ३ पृ २३ छ० २३
२६४ काव्य के रूप–गुलाबराय आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, छठा संस्करण सन् १९६७ पृ २०
२६५ वही, पृ ८० २६६ वही, पृ ८१
२६७ वही, पृ ८१ २६८ वही, पृ १०६
२६९ जोगीदास का दलपति राव रायसा–श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ४१४
२७० वही, पृ ४२० २७१ वही पृ ४६४
२७२ वही, पृ ४६५ २७३ वही, पृ ४६६
२७४ वही, पृ ४६५ २७५ वही पृ ४६८
२७६ हिन्दी वीर काव्य डा० टीकमसिंह तोमर पृ ४९
२७७ दतिया दर्शन स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १३
२७८ शत्रुजीत रासा–किशुनश भाट कृत स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १५२

२७८ शत्रुजीत रासो–किशुनेश भाट कृत स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १५८
२८० वही, पृ १६२ से १६५
२८१ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, सन् १९५९ पृ ६०
२८२ वही, पृ ६७ से ७० तक तथा प ८२ न ८५ तक
२८३ बाघाइट को राइसो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव विंध्य शिक्षा फरवरी सन् १९५६ पृ ६८
२८४ श्रीधर का पारीछत रायसा, स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ६२
२८५ वही प ६५ से ७१
२८६ बाघाइट को राइसो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव विन्ध्य शिक्षा, फरवरी सन् १९५६ प ७१–७२
२८७ वही प ७६ से ७८
२८८ वीरांगना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ४
२८९ वीर काव्य डा० उदय नारायण तिवारी, पृ १०६
२९० वही, प १०६
२९१ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प ८६
२९२ वही, प ८६ २९३ वही प ८६
२९४ वही, प ६६
२९५ वीरांगना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प २८
२९६ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर भाग २, प १०, छ ६–७
२९७ वही, प १४ छ २१–२२
२९८ वही, भाग २, प १४–१५ छ० २३–२४
२९९ वही, भाग ७ पृ ९४
३०० वही, भाग ८, प १०४

अध्याय नवम्

बुन्देली रासो काव्यो की हिन्दी साहित्य को देन

पथ्वीराज रासो से काव्य की जा परिपाटी चली थी, बु देलखण्ड के रासो काव्यों ने उस हि दी साहित्य म आगे बढाया। प्राचीन काल के रासो काव्यो की मूल प्रवत्तिया के दशन थोडे बहुत हेर फेर के साथ हम बुन्देली रासो काव्यो में भी दिखलाई पड जाते हैं। मेनाओ के प्रयाण, वीर जातिया के वणन, हथियारों और युद्ध स्थला के चित्रण के साथ-साथ भौगोलिक सास्कृतिक एव राजनैतिक स्थितियाँ भी इन रासो काव्यो म स्पष्ट हुइ ह। इन रासो काव्यो मे एक ओर यदि गहन गम्भीर परिस्थितियो का चित्रण ह तो दूसरी ओर स्वस्थ मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से युक्त हास्य रस के रासो ग्रन्थ व्यग्य एव विनोद की अनोखी झाकी प्रस्तुत कर देत हैं।

बु देली साहित्य म प्राप्त 'कटक' नाम क ग्रन्था के रूप मे हि दी साहित्य की एक अद्भुत देन हैं। इन ग्रथो म देश भक्ति, वीर भावनाओ, अपने राजनेता के प्रति सम्मान, अपनी मातृभूमि की रक्षा की भावना शत्रु स बदला लेने की भावना का अनूठा चित्रण ह।

परन्तु इन सभी ग्र था म जो वणन किये गय हैं वे एक चली आती हुई परिपाटी स बुरी तरह प्रभावित हैं। कृतिकार बधे बधाये आदर्शों का चित्रण करन म लगे रहे हैं। उनके काव्य म स्वतत्र चित्रण एव अनुभूति की तीव्रता का पूण अभाव ह। सनाओ वारा, युद्ध क्षेत्रो दौत्य कम तथा युद्ध की घटनायें किसी भी रासो ग्रन्थ म प्राचीन परम्परा स हटकर नही हैं।

पृथ्वीराज रासोकार न सेना प्रयाण के अतिशयोक्ति एव चमत्कारपूण चित्रो का अकन किया। 'पद्मावती समया' का एक वणन इस प्रकार है–

'जग जुरन जानिम जुवार भुज सार भार हुअ।
धर धमकि भजि सेष गगन रवि लुठिय रन हुअ॥[1]

(सग्राम म बडे निन्य और उग्र योद्धा थ। और पृथ्वी पर जिनकी भुजाए लोह के समान कठोर और भारी थी। उस सेना को देखकर धरती डगमगान लगी, शेष भागने लगा, आकाश में सूय छिप गय और रात हो गई।)

उपयु क्त प्रकार क वणना की पृथ्वीराज रासो म तो कमी ही नहीं है

बल्कि उन वणनो को आदश मानकर परवर्ती कवियो ने अपने वणनो म उन्हा सब प्रतीको को अपनाया है।

परिमाल रासो के प्राप्त अश मे सेना प्रयाण के साधारण वणन ह। एक वणन इस प्रकार ह–

सब सामतन सन सह चहू आन नृप बुल्ल।
कीरत सर कह चालिया मम सुमिष्ट लग चल्ल॥
सज्ज सन सामत सब बज्जत घोर निसान।
दिखन कजरिया सम्मरिय नगर महोत्सव जान॥'[2]

'दलपतिराव रासो" म भी सेना वणना म पुराने प्रतीको का ही प्रयोग किया गया है। निम्नाकित उदाहरणो स इस ग्रन्थ का सैन्य वणन स्पष्ट होता है–

"दिन सुयाउयौं भई।
निसा सुजाम ह्वै गई॥[3]

अर्थात सना के उमड कर चलन मे दिन मे रात हो गई। तथा

"चपौ सैन सूवा सब वोउन न उकसत माह।
समि सूरज दोनो छिपे, राहु केतु की छाह॥[4]

अर्थात सेना के (घेरे मे) सम्पूण सूबा एसे चप गए है जस सूय और चन्द्रमा को राहु और केतु की छाया चाप लेती हैं।

तथा–

'दबौ धु ध मे भान मनो भई रन सी।[5]

अर्थात सना के कारण उठी धु ध म सूय दब गया और माना रात हो गई।

तथ। 'दल जासु चाल सब भूम हाले।
उठी धुध धूर रही भान पूर।'[6]

अर्थात् जिसकी सेना के चलने स सम्पूण पथ्वी हिलती है, और धूल की धुध ने सूय को भी ढक लिया।

एक और उदाहरण

'सजत सन ही जबै डगत सेस ही तब।
उडत धुध धूरय, रह्यौ अकास पूरय॥
लस सुसूर चद सौ दिवस रन मद सौ॥[7]

अर्थात सना के सजते ही शेष नाग कापन लगे उडती हुई धूल से आकाश भर गया। सूय इतना मद्धिम हो गया कि चन्द्रमा जसा प्रतीत होता ह तथा दिन म ही रात हो गई।

उपयु क्त उदाहरणो से स्पष्ट होता है कि दलपति राव रायसा के सैन्य

वणन प्राधान परम्परा स कहीं भी मुक्त नही हैं। सभी वणनो मे चमत्कार उत्पन्न करने वाले घिसे पिटे प्रतीक ही हैं।

लघु कलेवर वाले 'करहिया कौ राइसौ' मे सेना के चमत्कारपूण 'वणनो' का अभाव है। फिर भी युद्धस्थल मे मारकाट के कतिपय वीभत्स चित्रण परम्परित शैली मे ही देखने को मिल जाते हैं।

'शत्रुजीत रासो' का सैन्य वणन भी परम्परित प्रतीकों पर आधारित है।

यथा— टर समाधि तिहिवार हरष व ह्रर गढ दिप्पव।
शत्रुजीत रन काज चढव हयराज विपिप्पव।
गवर डार अरधग गग उतमग उतारिय।
इच्छिय भुजन भुजग चद खिचिय त्रिपुरारिय।
गर माल गरल त्यागउ तुरत धौर धवल चड पथ लियव।
उठ चुग तुग चपिय धरन गरद गुग गगनहि गयव॥[8]

तथा—

शत्रुजीत महाराज ढिग बोलौ खिदमतगार।
कछु पीरू की तरफ त, उठत धूरि कौ धार॥'[9]

उपयुक्त वणनो म सेना के चलने स हुई हलचल गद की गुग का गगन को जाना धूलि के बादल उठना आदि सैन्य वणन के उदाहरण 'शत्रुजीत रासो म उपलब्ध होते हैं।

मुगलकाल के बाद के रासो काव्यो मे भी सैन्य वणन पुरानी परम्परा की लकीर पर ही चला। श्रीधर कवि ने अपने पारीछत रासो म सेना सम्बन्धी जो वणन किये है वे इसी प्रकार के हैं। जसे— सेना के चलने स पथ्वी और पवतों का कापना शेषनाग के सिर थरथराना कच्छप का बोझ के कारण कलमलाना कोल की दृढ दाढ करक जाना दिग्गजो का चिग्घाडना इन्द्र का कापने लगना।[10] आकाश का धूल स भर जाना सेना के चपेटो से पहाडो का चूर चूर होना, सूय का प्रकाश चन्द्रमा के समान लगने लगना[11] आदि इसी प्रकार के उदाहरण है।

'बाघाट रासौ' के लघु आकार म थोडा सा जो युद्ध वणन है उसमे सेना का वणन उसी प्राचीन परिपाटी मे किया गया है। जसे फौज की कूच होते समय गद के उडने के कारण सूरज की छवि दब जाना नगाडा की घोर ध्वनि से सब जगह आतक फैल जाना जस वणन इस ग्रन्थ म एकाध ही है।[12]

'कल्याणसिंह कुडरा' ने झासी कौ राइसौ म केवल दो स्थानो पर सूक्ष्म रूप म सैन्य वर्णन किया है, पर वह है उसी प्राचीन परम्परा म— 'घटा सी उठी' रन जब रान धाई[13] एव पुनि अगरेजी दल गयौ उडत दिखानी धूर'[14] आदि वणन परम्परा का निर्वाह ही करते हैं।

मदन मोहन द्विवदी 'मदनेश' कृत 'लक्ष्मीबाई रासो' म सना प्रयाण के समय, सेना का समुद्र की भांति दिखलाई पडना[15], शत्रु सेना मेघ घटा की भांति दिखना[16], एव रात्रि म काली घटा भी उठना[17] आदि वणन प्राचीन प्रतीको से ही युक्त हैं।

''कटक' का शाब्दिक अथ सेना भी होता है, परन्तु उपलब्ध कटक ग्रथो मे सैन्य वणन नही पाया जाता। इसी प्रकार हास्यरस के रासो ग्रथो मे सेना वणन नही है, क्योकि इनम सना आदि के प्रसग भी नही आये हैं।

सैन्य वणन की भाँति ही वीर जातियो का वणन सभी रासो ग्रथो म एक जसा ही मिलता है। इन कवियो न सैनिको और सेनापतियो की युद्ध सज्जा के हेतु जो सूचियाँ प्रस्तुत की है, उनम राजपूतो एव क्षत्रियो की छत्तीसो कुरियो का वणन करना वे नही भूले हैं। चाहे उन सबन उस युद्ध म भाग लिया हो अथवा नहीं। किसी किसी रासो ग्रथ मे तो ऐसी सूचियाँ एकाधिक बार दुहराई भी गई है, जो मात्र पिष्ट पेषण है। कही कही तो ऐसा लगता है कि ये कवि ऐसा लिखने के लिये विवश थे।

परिमाल रासो' का जितना अश उपलब्ध हो सका है, उसम वीर जातियो का अल्प मात्रा मे उल्लेख है। केवल परिहार चदेल चौहान गहरवार, बनाफर, सैयद और पठान आदि जातियो का उल्लेख है।

'जोगीदास' के 'दलपतिराव रायसा म वीर जातियो की लम्बी सूची प्रस्तुत की गई है। युद्ध मे वीरता प्रदर्शित करने वाली जातियों मे धुदला धधेर पमार जज्ज बुहियाबल, भदौरिया। लहारी गौर पिप्परया, खागर, बड गुजर कनौजिया, कछवाहा चौहान सेंगर सोलकी, कटारिया, सरसीवार[18], सिकरवार गौतम, बैंगडी नाहर, लहैल, नदवानी जिरैया, चदेल, टडया, चौदहा, चाहरट, बनौदिया बनाफर गुरलौत या गहलौत, मुराडीय ढूढया लोधा कायस्थ[19] पासवान नाई जाट सैयद, सख मुगल पठान, मरहठा[20], बुदेला[21], राठौर राणा, मलया[22], नाम की जातियो का उल्लेख किया गया है। यही नही, कवि ने पठान जाति की विभिन्न उपजातियों का भी विशद वणन इस रायसे मे किया है।

'करहिया को राइसो' क उपलब्ध अश म पमार, जाट, गूजर, गौर, हुसैलिया, दांगिक आदि वीर जातियो का उल्लेख है।[23]

शत्रुजीत रासो में वीर जातियो के रूप में केवल गहरवार[24], दुगला[25], पमार[26], बुदेला[27], आदि जातियो का ही उल्लेख मिलता है।

'पारीछत रायसा' में धदेला पमार धधेर, सैयद, शेख, पठान, रुहिल्ला, लोधा बगरा, बस जाट तथा चौहान[28] पड़हार, सेंगर और बिसुनातिल[29] आदि

जातियो का नामोल्लेख किया गया है। इनके अतिरिक्त तडैया नागिल, नौतैले गूजर आदि जातिया के नाम भी पाये जाते हैं।

बाघाइट की राइसो म केवल बुन्देला वङगया, तथा मुसलमान जातियो का ही उल्लेख किया गया है।

प्रधान कल्याणसिंह कुडरा कृत 'झासी की राइसौ मे पमार, मराठा बिलाता, बुन्देला अंग्रेज आदि जातियों का उल्लेख किया गया है।

'प० मदन मोहन द्विवेदी मदनश द्वारा लिखित लक्ष्मीबाई रासो मे वीर जातियो के रूप मे भाट पठान[32] बुन्देला पमार गूजर जाट[33] मराठा[34] चौहान[35] बिलाती (अफगान मनिक)[36], खगार[37] आदि का उल्लेख पाया जाता है।

'मिलमाय को कटक' म बुन्देला बघेला धधेरा पमार तथा 'झासी को कटक' मे बुन्दला, पमार, धुनकर, मुसलमान, बिलाती आदि जातियो का वणन किया गया है।

हास्य रासो ग्रन्थो म व्यग्य के रूप मे ऐसी जातिया का वणन किया गया है जिनसे युद्ध का दूर का भी सम्बन्ध नही है। इन ग्रन्था मे वैश्य वग की जाति उपजातियो का विस्तार से वणन किया गया है तथा प्रतिद्वन्दी रूप मे छछून्दर, गाडर धूम जसे निरीह प्राणी रखे गये हैं।

सेना एव वीर जातियो के पश्चात् युद्ध काव्यो मे अस्त्र, शस्त्रो का वणन आता है। बुन्देली रासो काव्यो म अधिकाश स्थला पर हथियारो के नामो की अनुक्रमणिकायें प्रस्तुत कर दी गई है।

'परिमाल रासो के उपलब्ध अश म तीर नेजा, बन्दूक, बरछी तथा कच्छी आदि हथियारो का वणन किया गया है।

'दलपति राव रायसा म तग तोप रहकुल (एक प्रकार की तोप), घुरनाल (घोडे पर लाद कर ल जाने वाली छोटी ताप), सुतर नाल (ऊट पर ले जाने वाली तोप), बाण, कृपाण बन्दूक[38], साग गुज[39] बरछी[40], कटार[41] आदि हथियारों का वणन किया गया है।

करहिया को राइसो के अश म अस्त्र शस्त्रों का अत्यन्त साधारण वणन किया गया है।

शत्रुजीत रासो में बाण, गोला, तोप[42], तलवार[43], बन्दूक[44], बरछी, सांग[45] गुरज या गुज[46], नेजा[47] आदि हथियारा का नामोल्लेख किया गया है।

पारीछत रायसा' में तोप जंबूर बाण तुपक[48], तमचा, तलवार[49] आदि हथियारा का वणन पाया जाता है।

बाघाइट को राइसो म केवल तोप समसेर, सिरोही तेगा[50] आदि अस्त्रों के नाम लिए गए हैं। समसर सिरोही, तेगा आदि नाम तलवार के ही ज्ञात हैं।

प्रधान कल्याणसिंह कुड़रा कृत झांसी कौ रायसौ' में बरछी, तीर कमान कटारी, बन्दूक तोप, कृपाण, गोली गोला[51] ढाल भाला खड्ग, किरच[52], गुर्ज[53] नामक हथियारों का वर्णन किया गया है।

मदनेश जी ने लक्ष्मीबाई रासो में अस्त्र शस्त्रों की लम्बी सूची एकाधिक बार प्रस्तुत की है। इनमें इस ग्रन्थ में बन्दूक[54] तलवार[55], गोली[56], तोप[57] कटारी[58] छुरी[59], शक्ति शूल साग फरसा मुग्दर[60], गदा, गुर्ज, धनुष, परिघ पट्टिस, भाला मुसल, बरछी, कटार गुप्ती, कृपाण, तुपक, तमचा, त्रिशूल चक्र भिन्दपाल[61] आदि हथियारों का उल्लेख किया गया है।

भिलसांय कौ कटक में भी हथियारों की लम्बी सूची गिनाई गई है। इसमें जंजीर, साग, खड्ग, कटार, बाघनखा, तोप तीर भाला कृपाण रामचंगी (सम्भवतः बन्दूक का कोई प्रकार) बन्दूक आदि हथियारों का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार झांसी कौ कटक में भी सैंफ, सती बिछुआ तुपक, ढाल तलवार सिरोही, तोप तीर तमंचा बाण आदि हथियारों का उल्लेख है।

हास्य रासो ग्रन्थों में व्यंग्यात्मक रूप में अस्त्र शस्त्रों के स्थान पर मल्लयुद्ध, लाठी, मूसर आदि का वर्णन पाया जाता है। दर्पोक्तियों के स्थान पर विनती चिरौरी की गई है।

बुन्देली के इन रासो काव्यों में बुन्देलखण्ड की तत्कालीन भौगोलिक जानकारी भी न्यूनाधिक रूप में अब तक सुरक्षित है। यद्यपि समय महारम्य में चार सौ से अधिक वर्षों के इस सुदीर्घ अन्तराल में इन सीमाओं, भूखण्डों रास्तों गाँवों नगरों, नदियों आदि की स्थिति में भौगोलिक दृष्टि से परिवर्तन अवश्य हुए होंगे, तथापि आज भी इन रासो ग्रन्थों के द्वारा हम उस समय की सीमाओं भागों तथा प्रमुख गांवों और नगरों की भौगोलिक दशा की जानकारी प्राप्त होती है।

चन्द वरदाई के परिमाल रासो में महोबा के आसपास के प्रमुख स्थानों का उल्लेख अवश्य किया गया होगा। प्राप्त अंश में महोबा और कीरतसागर तथा महोबा के आसपास के बगीचों का वर्णन किया गया है। दिल्लीश्वर पृथ्वीराज एवं महोबे के परिमाल चन्देल के मध्य इसी कीरतसागर पर निर्णायक युद्ध हुआ था। कीरतसागर के तट पर श्रावण मास में भुजरियों के मेले का विशाल आयोजन किया जाता था।

दलपतिराव रायसा की कथा भूमि भारतवर्ष के कुछ बहुत महत्वपूर्ण स्थानों की जानकारी से जुड़ी हुई है। बीजापुर[62] गोलकुण्डा[63], भावनगर[64], दिल्ली[65] आदौनी सीतापुर[66] दतिया[67] गुलबर्ग[68] कर्नाटक, पट्टन गुजरात, जिंजीगढ़[69] बदरखशाँ आसाम[70] जाजमऊ[71] आदि स्थानों की जानकारी इस

रायसे में उपलब्ध होती है। इनमें से बहुत से स्थान दक्षिण भारत में मुगल सत्ता से सम्बन्धित थे।

'करहिया को रायसो' में गोपाचल की बाउनी कालपी नरवर[72], आदि स्थानों का वर्णन है। जाट राजा जवाहरसिंह ने बुन्देलखण्ड अभियान में कालपी तक के स्थानों को युद्ध से प्रभावित किया था।

'किशुनेश' के शत्रुजीत रासो में भिण्ड माण्डेर[73], चन्हरगढ़[74], इन्दरगढ़, कजौली[75], बरछा[76], सेंवढा[77], चिरगाँव[78] आदि गाँवों और नगरों का वर्णन है।

पारीछत रासो में दतिया राज्य के आसपास के निकटवर्ती क्षेत्रों में चन्हरगढ़, इन्दरगढ़ उनाव[79] तथा एक अन्य छन्द में पठाई, जिगना, नौनैर, उद्गुवा ब्यौना पिरौना सुअरा, करूआ, कुमार्रा नौहटघाट आदि का उल्लेख मिलता है। उनाव पहूज नदी के किनारे पर दतिया शहर से ११ मील पूर्व की ओर है। यहाँ पर बालाजी का प्रसिद्ध सूर्य मन्दिर है।

बाघाट रासो में पुतरी खेरा बाघाट, तरीचर[80], मेंहुटा (चन्हरगढ़)[81] ओरछा उनाव, नौहटघाट[82] आदि स्थानों का उल्लेख किया गया है। बाघाट की प्राचीनता के विषय में कहा गया है।

लक्ष्मीबाई से सम्बन्धित झाँसी को रायसो में झाँसी व झाँसी के आस पास के छोटे छोटे गाँव, पहाड़ पहाड़ियाँ टौरियों, नालों आदि के साथ ही अजयगढ़, पन्ना, चरखारी चन्देरी बानपुर[83] कालपी[84], उनाव, कोंच[85] तथा ग्वालियर[86] आदि के नामोल्लेख किये गये हैं। इसके अतिरिक्त मदनेश' जी कृत लक्ष्मीबाई रासो में कुछ अधिक स्थानों का उल्लेख है। इसमें कालपी कोंच, मऊ, सागर[87], दतिया[88], पन्ना, बिजावर चरखारी[89], गरौठा[90], समथर[91] उनाव[92] आदि के अतिरिक्त झांसी के मन्दिरों जैसे मुरलीधर का मन्दिर[93] आतिया ताल[94], जार पहाड़[95] आदि का नाम लिया गया है।

कटक ग्रन्थों और हास्य रासो में ग्रामों और नगरों की स्थिति का वर्णन नहीं उपलब्ध होता, परन्तु यत्किंचित संकेत तो है ही। पारीछत की कटक में पाठे (पत्थर की बड़ी सी चट्टान) को प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया गया है। पाठे से मन जगत में स्थित पत्थर की बड़ी और कठोर शिलाओं से तात्पर्य है जिनसे झरना भी नहीं झरता। भिलसांय की कटक में अजयगढ़ और लुहरगाय नाम के स्थानों का नामोल्लेख है। हास्य रासो ग्रन्थों में नदी बाहट के रास्ते, गाँव के धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थलों की ओर संकेत किया गया है।

उपर्युक्त वर्णनों में यद्यपि भौगोलिकता न्यून रूप में ही है तथापि इनमें उल्लिखित गाँव नगर तथा अन्य स्थान इस बात के साक्षी हैं कि सब आज भी बने हैं चाहे उनके स्वरूप में थोड़ा बहुत अन्तर आ गया हो।

सन्दर्भ

१ वीर काव्य डा० उदयनारायण तिवारी चदवरदाई, पृ १२२ छन्द ३०१।
२ बुन्देल खण्ड की संस्कृति और साहित्य रामचरण ह्यारण मित्र पृ २४।
३ जोगीदास का दलपतिराव रायसा हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ४२७।
४ वही पृ ४३१।
५ वही, प ४३६
६ वही, प ४४२ ७ वही, प ४५१
८ शत्रुजीत रासो स० श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १६० छ द १३०
९ वही, प १६६ छन्द २१३
१० पारीछत रासो स० श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, छ द १७८
११ वही, छन्द ५६
१२ विन्ध्य शिक्षा म० श्री राममित्र चतुर्वेदी, प ७४ छन्द १२२
१३ वीरागना लक्ष्मीबाई-रासा और कहानी-स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, प० २०
१४ वही, पृ ३५
१५ लक्ष्मीबाई रासो स० डा० भगवानदास माहौर भाग २ प ११
१६ वही, भाग ३, पृ १७ १७ वही, भाग ७ प ८३
१८ जोगीदास का दलपतिराव रायसा हरिमोहनलाल श्रीवास्तव प ४१६
१९ वही, प ४१७ २० वही पृ ४१८
२१ वही, प ४१९ २२ वही प ४५०
२३ वही, प ४५३, ४५४
२४ शत्रुजीत रासो-किशुनेश-स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, प १५७
२५ वही पृ १५८ २६ वही, प १८०
२७ वही, प १८२
२८ श्रीधर का पारीछत रायसा स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव प ९४
२९ वही, प ८५
३० वाघाइट को राइसो-स० हरिमाहन लाल श्रीवास्तव, विंध्यशिक्षा फवरी १९५६ प ७४
३१ वीरागना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, प १५
३२ लक्ष्मीबाई रासा स० डॉ० भगवान दास माहौर, भाग २, प १३
३३ वही, भाग ४, प १८ ३४ वही, भाग ४, पृ ३१
३५ वही, भाग ४, पृ ३५ ३६ वही, भाग ७, प ९२
३७ वही भाग ८, प १०३

३८ जोगीदास का दलपतिराव रायसा स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, पृ ४१८
३९ वही, प ४२६ ४० वही, पृ ४३३
४१ वही, प ४३४
४२ शत्रुजीत रासो–किशुनेश म० हरिमोहनलाल श्रीवास्तव पृ १५७
४३ वही पृ १६१ ४४ वही प १६६
४५ वही, पृ १६६ ४६ वही, पृ १७३
४७ वही प १७४
४८ श्रीधर का पारीछत रायसा स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, पृ ६६
४९ वही, प ११५
५० बाघाइट कौ राइसौ स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, विंध्य शिक्षा, फर्वरी १९५६, प ७४
५१ वीरांगना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी, लें० हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, पृ १२
५२ वही प ३१ ५३ वही, प ३८
५४ लक्ष्मीबाई रासा स० डा० भगवानदास माहौर, भाग २, प ११
५५ वही, पृ १२ ५६ वही, प १३
५७ वही भाग ३, प १७
५८ वही, भाग ४, प ३४
५९ वही भाग ५, प ४७ ६० वही, भाग ६ प ७६
६१ वही, भाग ६ प ७७
६२ जोगीदास का दलपति राव रायसा स० श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ४२८
६३ वही, पृ ४१६ ६४ वही पृ ४३०
६५ वही, पृ ४४३ ६६ वही, पृ ४४५
६७ वही पृ ४४६ ६८ वही, पृ ४४७
६९ वही पृ ४४८ ७० वही प ४४७
७१ वही पृ ४६५
७२ घरहिया कौ रायसौ–नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १० सवत् १९८६, छन्द स० १३
७३ शत्रुजीत रासौ स० श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, प १५३
७४ वही पृ १५४ ७५ वही पृ १५५
७६ वही, पृ १५६ ७७ वही, पृ १५७
७८ वही पृ १०६

राजधानी कालिंजर थी। दिल्लीश्वर पृथ्वीराज का शासन काल स० १२३६ वि० से स० १२५० वि० तक था।[3]

परमर्दि देव का शासन काल स० १२६० वि० तक रहा। इस समय इनकी राजधानी कालिंजर से महोबा जा चुकी थी। ततीय पथ्वीराज चौहान ने परमर्दि देव को स० १२३६ ४० वि० के लगभग परास्त किया था।[4] महोवे के चंदेला और कन्नौज के, गहड़वालो म मित्रता थी। आपस के बर भाव के कारण इन शक्तियो ने शहाबुद्दीन गोरी के विरुद्ध तृतीय पृथ्वीराज चौहान की सहायता नहीं की थी। दिल्ली और कान्यकुब्ज के पराभव के पश्चात् स० १२६० वि० मे शहाबुद्दीन के उत्तराधिकारी कुतुबुद्दीन ने कालिंजर पर आक्रमण किया और परमर्दि देव को परास्त करके कालिंजर और महोवा पर अधिकार कर लिया था।[4]

परिमाल रासो की सभी घटनायें एव पात्र ऐतिहासिक हैं। पथ्वीराज परिमाल आल्हा ऊदल तथा कन्नौज के जयचन्द और इन पात्रों के आधिपत्य के स्थलो दिल्ली महोवा कालिंजर कन्नौज आदि की चर्चा इतिहासों मे पर्याप्त रूप से की गई है। परन्तु परिमाल रासो मे जो तिथियो के सकत दिए गए हैं वे इतिहास की तिथियो से मेल नही खाते हैं जैसा कि ततीय अध्याय मे स्पष्ट किया जा चुका है।

दलपति राव रायसा

इस रायसे मे महाराजा दलपति राव के पिता शुभकरण का भी रायसा सम्मिलित है। शुभकरण का शासन काल १६५६ ई० स १६८३ ई० तक रहा था।[5] सन् १६५७ ५८ ई० मे शुभकरण ने चम्पति राय के साथ औरगजेब और मुराद का पक्ष लेकर दारा के साथ युद्ध किया था।[6] वर्नियर के अनुसार शुभकरण ने अराकान् के अभियान म भाग लिया था। तथा १६६७ ई० से १६८० ई० तक मुगलो की ओर से उन्होने दक्षिण भारत म कई लडाइया लडी। १६८३ ई० म महाराजा शुभकरण का देहावसान हुआ।[7]

दलपति राव का राजत्व काल १६८३ ई० से १७०७ ई० तक रहा।[8] इन्होंने भी दक्षिण भारत में मुगलो की मनसबदारी में कई महत्वपूर्ण युद्धों में भाग लिया। बीजापुर (१६८६), गोलकुण्डा (१६८७), अदौनी (१६८८) और जिंजी (१६६४)[9] तथा मुगल शाहजादे शाह आलम बहादुरशाह और आजमशाह की ओर से युद्ध किया। १६ जुलाई १७०७ ई० को जाजऊ की लड़ाई में घायल होकर दलपतिराव ने शरीर त्याग किया।[10]

दलपतिराव रासो में उल्लिखित सभी घटनायें इतिहास सम्मत हैं। परन्तु रासो म वर्णित घटनाओ की तिथियो का उल्लेख कवि द्वारा नहीं किया गया है। एक बात यह भी हो सकती है कि काव्य की रोचकता एव प्रवाह की रक्षा के

लिए ही सम्भवत कवि ने घटना तिथियां न दी हों। दलपतिराव रासा में केवल दो स्थानों पर जोगीदास ने तिथि का संकेत दिया है। इसमें केवल औरंगजेब एवं महाराजा दलपतिराव की मृत्यु तिथियाँ ही दी गई हैं। ये तिथियाँ इतिहास की तिथियों से मेल खाती हैं।

करहिया को रायसौ

करहिया कौ रायसौ' के पंद्रहवें छंद में कवि ने युद्ध तिथि का उल्लेख किया है जिसके अनुसार करहिया का युद्ध सं० १८२४ वि० भाद्रपद, असित ६, शनिवार तदनुसार १५ अगस्त सन् १७६७ ई० को हुआ था।[11]

मालवा प्रदेश की धारानगरी से आए इन सूर्यवंशीय पमारों के वंशधर धरण राय ने आश्विन शुक्ल ४ सं० १६३२ वि० तदनुसार १५७५ ई० में नरवर नगर से १६ मील उत्तर में करहिया को बसाया था।[12] कुछ विद्वान करहिया के पमार वंश की स्थापना सन् १५६४ ई० में हुई मानते हैं।[13]

करहिया कौ रायसौ के कुछ प्रमुख पात्र निम्नांकित हैं–

जवाहर सिंह जाट–भरतपुराधीश, सूरजमल का पुत्र। पिता के पश्चात सिंहासन पर बैठा। मई सन् १७६८ ई० में इसकी मृत्यु हुई।[14]

रामसिंह–नरवर की कछवाहा शाखा के राजा थे।

करहिया के उपर्युक्त युद्ध के सम्बन्ध में डॉ० टीकमसिंह तोमर का मत इस प्रकार है– जवाहर सिंह १७६७ ई० में जुलाई से सितम्बर तक कालपी नरवर आदि के प्रदेश में अपनी सेना के साथ वर्तमान था। गुलाब कवि के कथनानुसार करहिया के युद्ध की तिथि १५ अगस्त १७६७ ई० आती है अतएव यह युद्ध अवश्य ही इसी अवसर पर हुआ होगा। इसके अतिरिक्त उक्त विवरण से यह भी ज्ञात होता है कि जवाहर सिंह नरवर से पूर्व तक पहुँच गए थे। करहिया राज्य उन दिनों नरवर के ही अन्तर्गत था।[15]

शत्रुजीत रासौ

प्रमुख पात्र निम्न प्रकार है–

महाराजा शत्रुजीत सिंह– इनका राजत्व काल सन् १७६२ से १८०१ ई० तक रहा है।[16] ये इन्द्रजीत सिंह के पुत्र और दतिया राज्य के उत्तराधिकारी थे।

पीरू–एक फ्रांसीसी सेना नायक था, जिसके नेतृत्व में ग्वालियर के महाराजा दौलतराव सिंधिया की सेना ने सेंवढ़ा पर आक्रमण किया था। पीरू सिंधिया की सेना में सन् १८०३ में रिटायर होकर फ्रांस गया।

रघुनाथ राव– सिंधिया की सेना का एक सरदार।

शत्रुजीत रासा में उल्लिखित सेंहुड़ा या कन्हरगढ़ वर्तमान सेंवढ़ा के युद्ध की तिथि रासाकार के अनुसार प्रथम ज्येष्ठ सुदी पंचमी, रविवार, [illegible]

वि० दी हुई है।[17] अर्थात् यह घटना सन् १८०१ ई० की ठहरती है, तथा इसी युद्ध में दतियाधिपति शत्रुजीतसिंह का शरीर पात हुआ।[18] शत्रुजीत के राजत्व काल को दृष्टिगत रखते हुये यह उनके जीवन की अंतिम घटना थी।

पारीछत रायसा

महाराजा पारीछत महाराजा शत्रुजीतसिंह के पुत्र थे। सन् १८०१ ई० में शत्रुजीत सिंह की मृत्यु के उपरान्त दतिया के सिंहासन पर बैठे। इनका शासन काल सन १८०१ ई० से १८३९ ई० तक रहा। महाराजा पारीछत की अंग्रेज भक्ति इतिहास प्रसिद्ध है। इन्होंने १५ मार्च १८०४ को बुंदेलखण्ड के एजी०जी० कप्तेन वेली से नन्नी गाँव में भेंट की तथा कुंजनघाट नामक स्थान पर दतिया राज्य और ब्रिटिश सरकार के बीच संधि स्थापित हुई। पुनः ३१ जुलाई, १८१८ ई० को कालिंजर में राजा पारीछत की ओर से उनके वकील राव शिव प्रसाद और ब्रिटिश सरकार की ओर से जान वाकिफ साहब के बीच दूसरा संधिपत्र लिखा गया।[19] ये संधिपत्र अंग्रेजों के शासन काल की प्रमुख सहायक संधि के अनुसार ही थे। इन सभी घटनाओं से महाराजा पारीछत और अंग्रेजों के मेल जोल तथा सम्पर्क पर प्रकाश पड़ता है। सन् १८१८ ई० में लार्ड हेस्टिंग्स दतिया आए, और सन् १८२४ ई० में राजा पारीछत ने लार्ड एमहर्स्ट से कानपुर में भेंट की। १८२५ ई० में लार्ड कोम्बरमेन के सम्मान में दतिया में एक वृहत् दरबार का आयोजन किया गया। १८२८ ई० में राजा पारीछत कथा विलियम बैंटिंग के दरबार में सम्मिलित हुए। दिसम्बर १८३५ ई० में कर्नल स्लीमान ने दतिया की यात्रा की।[20]

पारीछत रासो में श्रीधर कवि ने दतिया तथा टीकमगढ़ रियासतों के सीमा विवाद सम्बन्धी एक छोटी सी घटना का वर्णन किया है। यह युद्ध रायसो के अनुसार सं० १८७३ वि० को हुआ था। तदनुसार यह घटना महाराजा पारीछत के राजत्व काल में सन् १८१८ में हुई थी।

बाघाट रासो

बाघाट रासो में भी पारीछत रासो के ही पात्र और घटनायें वर्णित हैं ये एक ही घटना पर लिखे गये दो प्रबंध काव्य हैं। इसलिये बाघाट रासो के पात्र और घटनाओं पर अलग से विचार नहीं किया जा रहा है।

झांसी कौ रायसौ

प्रधान कल्याण सिंह कुड़रा ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम १८५७ ई० के झांसी की रानी लक्ष्मीबाई और अंग्रेजों के मध्य हुए युद्ध का वर्णन किया है। कवि के

द्वारा दिया गया युद्ध का समय स० १६१४ वि० है। जो इतिहास की तिथि मे मल खाता है।

कल्याण सिंह की यह रचना स० १८२६ वि० अर्थात् सन् १८५७ के स्वाधीनता सग्राम के कुल बारह तेरह वर्ष के बाद की है, और इस प्रकार इसमे झासी के युद्ध के सम्बन्ध म बहुत कुछ ऐतिहासिक महत्व की सामग्री भी है। अग्रजी राज के आतक और झासी मे अग्रेजो द्वारा किए गए कत्ले आम और दमन का प्रभाव भी कवि पर है।[11] डॉ० माहौर की उपरोक्त पक्तिया 'झासी को राइसौ' के ऐतिहासिक महत्व का भलीभाति अनुमोदन करती हैं।

झासी के इस छोटे से रायसे म झासी कालपी, कोच तथा ग्वालियर मे हुई अग्रजो और रानी लक्ष्मीवाई की लडाइयो का ब्यौरेवार वणन किया गया है। इस रासो के प्रमुख पात्रो पर निम्नाकित रूप मे प्रकाश डाला जा रहा है–

हिन्दू पात्र

स्त्री पात्र–

रानी लक्ष्मीवाई–झासी की रानी।

लिडई सरकार–टेहरी (ओडछा) की शासनकर्त्री।

पुरुष पात्र–

महाराजा जयाजी राव–ग्वालियर के सिंधिया नरेश।

महाराजा विजय बहादुर–दतियाधिपति।

तात्या टोपे–कालपी का शासक– स्वातत्र्य सग्राम म रानी लक्ष्मीवाई का प्रमुख सहायक।

नाना साहब–कानपुर बिठूर का शासक–स्वातत्र्य सग्राम मे रानी लक्ष्मीवाई का प्रमुख सहायक एव बाल सखा।

दीवान जवाहर सिंह–कटीली के पमार। झासी की ओर से युद्ध लडने वाले।

दीवान दलीप सिंह–ओरछा राज्य स सबधित पर झासी की ओर से लडन वाले।

दीवान रघुनाथसिंह–ओरछा राज्य स सम्बन्धित थ पर युद्ध म झासी का पक्ष लिया।

गगा प्रसाद–टेहरी वाली रानी का एक दूत जो दतिया नरेश के यहाँ भेजा गया।

मधुकर–मनपुरा वाले झासी के सहायक।

दशमुख–झासी वाली रानी का विश्वास पात्र सनिक।

राव दरयाव–भसनेह निवासी झासी के सहायक।

खुदी–चार हजार का मनसबदार, झासी की रानी का विश्वासपात्र सेनानायक।

लछमनसिंह–हिरदेश कुमार–झासी के सहायक ।

कासीनाथ–झासी की रानी का सहायक–भाऊ कासीनाथ ।

खूबचन्द–रानी लक्ष्मीबाई के पक्ष का एक बडा मनसबदार ।

जालम पटिया, नीलाधर कोतवाल, झडू, लाल आदि झासी के सनिक ।

पारीछत–पलेरा वाले, मदनसिंह दलरा वाले दोनो झासी के सहायक ।

मुस्लिम पात्र

नत्थे खाँ–ओरछा राज्य का दीवान । ओरछा की लिडई रानी को फुसला कर झासी पर आक्रमण करने वाला तथा पराजित होने पर झासी पर अग्रेजों को चढाकर लाने वाला ।

खुदाबख्श–झासी की ओर से लडने वाला सनिक ।

दोस्त खाँ–झासी का तोपची ।

अग्रेज पात्र

गाडन एक अग्रेज साहब ।

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि झासी को राइसौ ऐतिहासिक घटना एव पात्रो पर पूर्ण प्रकाश डालने वाला ग्रन्थ है ।

लक्ष्मीबाई रासो

यह स्वतत्रता सग्राम १८५७ की झासी की लडाई मे सबधित दूसरा ऐतिहासिक ग्रन्थ है । जसा कि उल्लेख किया जा चुका है इस ग्रन्थ म कवल नत्थे खा प्रसग है क्योंकि प्रति का उत्तराध खण्डित है जिसम रानी लक्ष्मबाई और अग्रेजो क युद्ध का वणन रहा होगा । इस रासो म नत्थे खाँ द्वारा मउ पर आक्रमण की तिथि 'श्रावण सुदी पूर्णिमा रविवार'[23] दी गई है, तथा मउ' के पतन की तिथि भादों वदी चौथ वृहस्पतिवार[24] और झासी पर नत्थे खाँ के आक्रमण की तिथि इस प्रकार दी हुई है–

सवत दस नौ सकरा उपर चौदह साल ।
भादों सुद चौदह दुफर तब यह गुजरी हाल ॥'[25]

अर्थात सवत् १८१४ वि० भादों सुदी चतुदशी दोपहर । उपयुक्त तिथियाँ नत्थे खाँ के मऊ और झासी पर किए गए आक्रमणो की तिथियो म मिलती है जो इतिहास म दी गई है । डॉ० भगवान दास गुप्त पी–एच० डी०, डी० लिट० अध्यक्ष इतिहास विभाग, बुन्देलखण्ड कालेज झासी के अनुसार– '१० अगस्त १८५७ को विक्रमाब्द १८१४ के भाद्रपद कृष्ण पक्ष की पचमी तथा सोमवार था, तथा ३ सितम्बर १८५७ को गुरुवार भाद्रपद शुक्ल १४ थी ।[26] उन्होने यह भी सूचित किया कि इन तिथिवारो म १ दिन आगे पीछे भी हो सकता है । परन्तु डॉ० भगवानदास माहोर एम० ए०, पी-एच० डी० लिखते हैं, कि अब इन तारीखो

का भलीभांति जांच कर ली गई है, वे तिथिवार से ठीक ठीक मिलती है।"[27]

डा० वृन्दावनलाल वर्मा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास "झांसी की रानी" में नत्थे खाँ से हुए युद्ध का संक्षिप्त सा विवरण दिया है।[28]

झाँसी की रानी के अंग्रेजों के साथ हुए युद्ध का राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य संग्राम के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु तत्कालीन विदेशी शासन के दमन एवं आतंक से ऐसे अनेक ऐतिहासिक विवरण नष्ट कर दिए गए। ऐसी अवस्था में जो कवियों द्वारा जनश्रुति के आधार पर लिखे गए इन काव्यों का कम महत्व नहीं है। 'रानी का अंग्रेजी सेना के विरुद्ध हुआ युद्ध यदि देश भक्तों का देश के विरुद्ध उत्पीड़क शत्रुओं के विरुद्ध हुआ युद्ध है तो रानी का नत्थे खाँ के विरुद्ध हुआ युद्ध देश भक्तों का देश द्रोहियों के विरुद्ध हुआ युद्ध है।"[29]

'मदनेश कृत लक्ष्मीबाई रासो' तथा 'कल्याणसिंह कुड़रा' कृत 'झाँसी की रायसो' में लगभग एक जैसे ही पात्र हैं। अन्तर इतना है कि 'मदनेश' जी ने झाँसी के वीरों का अधिक ब्यौरेवार वर्णन किया है। इस रायसे में वर्णित पात्र सभी ऐतिहासिक ही हैं। डॉ० भगवानदास माहौर एम० ए०, पी-एच० डी० के अनुसार 'मदनेश जी के रासो में झाँसी के ऐसे अनेक वीरों का भरा पूरा वर्णन हुआ है, जिनका उल्लेख ऐतिहासिक अभिलेखों में कहीं मिल जाता है।'[30] 'मदनेश' कृत रासो के कुछ पात्रों का विवरण निम्न प्रकार है–

हिन्दू पात्र–पुरुष

पायकर भाऊ–ये झाँसी के अधीन मऊ के शासक थे।[31]

बहादुर सिंह–करारा के निवासी–झाँसी के अधीनस्थ।[32]

धोंधू भैया–सम्भवत धुन्धूपंत पेशवा, जो लक्ष्मीबाई के साथ बचपन में ही रहे और खेले थे तथा उन्हें तलवार बन्दूक आदि की शिक्षा दी थी।[33]

रघुनाथ सिंह–झाँसी की ओर से युद्ध में भाग लेने वाले जरया के पमार क्षत्रिय।[34]

लछमा–रानी का एक प्रमुख सचिव।[35]

महेन्द्र गुरु मुजानसिंह–ओरछे की सेना में एक अधिकारी।[36]

हिन्दूपति–समथर के राजा थे तथा झाँसी के सहायक थे।[37]

नाहरसिंह–झाँसी की सेना का एक मनसबदार।[38]

रघुवर दयाल, मुन्ना मालव, स्याम चौधरी, हरनन, मान पमार, हीरालाल आदि झाँसी की सेना के वीर सेनानी।[39]

रतनधीर–चिरगाँव का रहने वाला तथा इसने ओरछे की तरफ से युद्ध में भाग लिया था।[40]

मोदासिंह–रक्सा का निवासी तथा झाँसी की ओर से लड़ने वाला।[41]

' मजबूतसिंह व म्याव-दोनो मरारी के रहने वाले तथा झांसी की ओर से युद्ध में सम्मिलित थे।[42]

कसी कोतवाल तथा लाहौरी मल्ल आदि झांसी के सनिक।

भाऊ बख्शी-झांसी की सेना का एक प्रसिद्ध गोलन्दाज।[43]

स्त्री पात्र

सुदर, मुदर, मथुरा वेनी, चन्द्रावल तथा रतनकुअर आदि रानी लक्ष्मीबाई की सखियां जो रानी के साथ युद्ध स्थल म वीरतापूवक लडती भी थी।[44]

मुसलमान पात्र

दोस्तखां, गुलाम गौस खां-दोना झांसी के प्रसिद्ध तोपची थ।[45]

रहीमा-दोस्त खा तोपची का जेठा पुत्र। यह भी झांसी की सेना म एक तोपची था।[46]

जवाहर खां-झांसी का एक सनिक।[47]

बजीर खां-झासी का रहने वाला तथा घाडा की चिकित्सा करन वाला व्यक्ति।[48]

उपयुक्त पात्रो मे एक दो को छोडकर वे सभी पात्र नही लिए गए जिनका विवरण 'कल्याण कृत रासो' के अन्तगत दिया जा चुका है। 'मदनेश कृत रासो का एक मात्र महेन्द्र सुत सुजान सिंह' भ्रामक स्थिति म है क्योकि उपलब्ध प्रमाणो के *आधार पर सुजानसिंह का इस युद्ध के समय उपस्थित रहना नही पाया जाता* है। इस सम्बन्ध म डॉ० भगवानदास माहौर का मत इस प्रकार है- १८५७ और नत्थे खां के झांसी पर आक्रमण क समय ओरछा की गद्दी पर हमीरसिह (१८४ से १८७४ तक) थे और उस समय उनकी नाबालिगा मे राजमाता 'लडई सरकार शासन कर रही थी। इम्पीरियल गजेटिर आफ इण्डिया, सेन्ट्रल इण्डिया म सुजानसिंह की मृत्यु १८५४ मे होना बताया गया है। डा० वृन्दावन लाल वर्मा न लिखा है कि सुजानसिंह राजा विक्रमाजीत सिंह के भतीजे थे परन्तु उनकी लडई सरकार से नही बनती थी। लडई' राजा विक्रमाजीत सिंह की विधवा पुत्रवधू थी। सुजानसिंह झांसी मे आकर रहे थ। १८५४ मे उनकी मृत्यु के बाद लडई को गोद लेने की अनुमति मिल गई थी और उसन हमीरसिंह को गोद लिया था। मदनेश जी ने हमीरसिंह का अपन रासा मे कहीं भी उल्लेख नहीं किया है। कहीं मदनेश जी सुजानसिंह और हमीरसिंह इन दो नामो म तो गडबड नही कर गए ?[49]

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि इन सभी रासो काव्यो मे जिन पात्रों एव घटनाओ पर प्रकाश डाला गया है वे अधिकाशत इतिहास क अनुसार ही हैं यद्यपि कुछ अशो म रचनाकारो ने कल्पना का भी सहारा लिया है। यह तो स्पष्ट ही है कि य रासा काव्य जिन राज्यो एव राजाओ म सम्बन्धित हैं

उनका तत्कालीन इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है एव न्यूनाधिक रूप म उनका भी विवरण अन्यान्य ग्रन्था में प्राप्त होता ही है।

विवेच्य रासो काव्यो की सामाजिक उपलब्धि उनके रचनाकारो के आश्रयदाता राजाओ के ऐश्वय वभव, दरबार प्रासाद, वपभूपा आदि से सम्बन्धित है। रासो ग्रथा म सम्बन्धित शासको एव काव्य नायको के बल वभव आदि के अतिरजित एव चाटुकारितापूण वणन भरे पडे हैं[50] जो चारण परम्परा से पूणतया प्रभावित हैं। इन ग्रन्थो म जिस समाज का वणन किया गया है, वह समाज राजाओं रजवाडो के आसपास का समाज है। यह समाज स्वतन्त्र रूप से रचनाओ में स्पष्ट भले ही न हो पाया हो परन्तु उसका बिखरा हुआ रूप हमे विवेच्य रासो ग्रन्थो में देखने को मिल जाता है।

युद्ध किसी भी समय मे लडे गए हो, वे समाज मे अस्तव्यस्तता पैदा करते हैं। लडाइयाँ सामान्य जनता के लिए कभी भी उपयोगी नही हुई है। विवेच्य ग्रन्था मे वर्णित युद्ध किसी न किसी आन' को लेकर के हुए हैं, जिससे सामान्य प्रजा का महगाई से जूझना पडा है।[51] युद्ध के कारण आर्थिक अभाव का होना स्वाभाविक ही है और खजाने खाली हो जाने तक के प्रमाण हमे इन ग्रन्थों से प्राप्त होते हैं।[52] यह समाज वण-व्यवस्था को सम्पूण आस्था से स्वीकार करता था जातिया की अपनी-अपनी परम्परायें थीं। कुछ जातियाँ अपने शौय प्रदशन के लिए पीढियों से ख्याति अर्जित कर चुकी थी और उस ख्याति के बदले में तथा शौय प्रदशन और उत्सग के पुरस्कार स्वरूप कोई न कोई पद अथवा जागीर अनेक वशो को प्राप्त था। शासको द्वारा प्रदत्त जागीरें सनदें और पदवियाँ मात्र पूर्वजो की प्रतिष्ठा ही नही थी वरन् आगे आने वाली पीढी के लिए प्रेरणा का काय भी करती थी। शासक बल वभव से सयुक्त थे। जीवन वेद विहित कर्मों को प्रधानता देता था।[53] विजय के बाद के अग्निकाण्ड प्रजा मे विपन्नता और अभाव की स्थिति पदा करते थे।[54] इसी तरह इस समाज मे भावातिरेक म सती प्रथा की परम्परा का अवशेष भी देखने को मिल जाता है।[55] रासो ग्रन्थो म वर्णित समाज विविधताओं स परिपूण समाज है। इस समाज म हर स्थान पर पृथकता और अलगाव की प्रवृत्ति पाई जाती है परन्तु राजवश की मर्यादा के लिए प्रजा का बलिदान हर स्थान पर सगठित और बलिदानी मुद्रा लिए हुए हैं।

(ब) धार्मिक एव सास्कृतिक उपलब्धियाँ

विवेच्य रासो ग्रन्थो म समय की परिधि दो ढाई शताब्दियो तक फैली हुई है। इसी से इन ग्रन्थो म वर्णित समाज की धार्मिक मान्यताये अनेक स्वरूप लिए हुए हैं तथा सस्कृति का परिवेश भी विविधताओ को लिए हुए हैं। दलपतिराव

रायसो का समाज साम्प्रदायिक संकीर्णता, जातिगत विद्वेष और धार्मिक विभाजन वाला समाज है। अनेक युद्ध उत्तराधिकार के उलझे प्रश्न को सुलझाने के लिए लड़े गए, हैं और इन लड़ाइयों में धार्मिक संकीर्णता स्पष्ट परिलक्षित होती है।

धर्म का बाह्यस्वरूप आडम्बरपूर्ण और दिखावा प्रिय था। राजा लोग स्नान ध्यान करके गंगाजल अर्पित करते थे। कुशासन पर बैठकर पीताम्बर ओढ़ कर अरिष्ट नाशक मंत्र का जाप करते थे। चन्दन गोरोचन आदि का तिलक छाप करने की प्रथा थी। बुन्देलखण्ड के अधिकांश नरेश मधुकर शाही तिलक लगाया करते थे।[56] शत्रुजीत रासो में एक स्थान पर शिव के अर्चन का वर्णन पाया जाता है, जिससे यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि इन राजाओं पर शैवमत का भी पर्याप्त प्रभाव था।

'पारीछत रायसा' में 'उनाव के बालाजी' का माहात्म्य वर्णित है। इसी क्रम में ईश्वरावतारों का वर्णन किया गया है।[57] इससे स्पष्ट होता है कि धर्म में अवतार वाद को प्रमुख स्थान प्राप्त था। ब्राह्म मुहूर्त में जागरण, स्नानध्यान, सन्ध्या जप, मन्त्रोच्चारण, पूजापाठ, शिवलिंग पर जल, चन्दन, अक्षत आदि चढ़ाना जैसी क्रियाओं का इस रासो में विस्तृत वर्णन किया गया है।[58]

'मदनेश कृत लक्ष्मीबाई रासो' में 'दशहरा पूजा' का विस्तारपूर्वक वर्णन है। युद्ध की भयंकर स्थिति में शत्रु समूह से घिरे होने पर भी धार्मिक पूजा अनुष्ठान आदि की परम्परा का निर्वाह करना राजाओं की आन बान थी।[59] महारानी लक्ष्मीबाई के द्वारा खण्डेराव की पूजा महाराष्ट्र की पूजा विधि द्वारा सम्पन्न किए जाने से महाराष्ट्रियन धार्मिक कर्मकाण्ड पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।[60]

'लक्ष्मीबाई रासो' में वर्णित *टेंकुर की पूजा*[61] तथा *हास्य रासो* (छछूंदर रायसा) में आसों की पूजा उतार कर रखना 'गुरयां माता को रोट चढ़ाना' गा बजाकर सती को पूजना आदि प्रसंगों से तत्कालीन लोकजीवन के धर्म एवं संस्कृति की आंचलिकता स्पष्ट होती है।

तत्कालीन नरेश शिकार[62] संगीत आदि क्रियाओं द्वारा अपना मनोरंजन करते थे। शत्रुजीत रासो में युद्ध रूपकों द्वारा बसंत, वर्षा, ग्रीष्म, होली आदि ऋतुओं का वर्णन किया गया है।[63] पारीछत रायसा में हाथी व घोड़ों की सजावट का वर्णन विस्तृत रूप में किया गया है। हाथियों की सजावट के उपकरण जरकस, झूल, रत्नजड़ित हौदा, मिरी चौंर, स्वर्ण के फूलों से जटित गजढालें एवं घोड़ों की साज सामग्री जरकसी जीन खासर तथा जड़ाऊ सामान के वर्णन से तत्कालीन सांस्कृतिक परिवेश पर प्रकाश पड़ता है।[64] हाथियों और घोड़ों की सजावट के अतिरिक्त राजा और सरदारों की वेशभूषा का वर्णन भी इन रासो ग्रन्थों में कुछ न कुछ किया ही गया है। पाग पर कलगी तोरा मोतियों का हार, कानों में

चौकडा, भुजाओ मे बाजूवद, कलाइया मे सोने के गजरा, दुपट्टा कतैया सूथना, फेंट आदि पोशाक थी।[65]

लक्ष्मीबाई रासो मे स्त्री व पुरुषो का शृगार वणन विस्तारपूर्वक किया गया है। स्त्रियाँ जरी का लहगा व कचुकी पहनती थी। स्त्रियो के आभूषणो में दौरिया बदिया, वदा कणफूल, पान, गलठुमी, बिचौली गुतूबद मुहरो की माला, बाजूबन्द, दुलरी तिलरी चपो, चिचपिटी (गले का एक आभूषण) सतलरी लल्लरी चन्द्रहार ककना दोरी बगलिया, गुज, छला, हाथ फूल कधनी, शीश-फूल, तोरबदिया गुच्छा पायजेब, गूजरी जेहर, पायल, पैजना, बिछिया अनौटा मेंहदी आदि का वणन है।[66] पुरुष धोती जरकसकी फेंटें, वधनी कतैया कसीदा के काम के वस्त्र सितारों से जडे वेलबूटेदार वस्त्र, बजुल्ला, ककण, पाचिया, मुदरी छला गुज गोप कठा, सेली पवाई, गलबद तथा मखमल के जूते धारण करते थे।[67] राजाओ के राजदरबारो की साज सज्जा का भी अति शयोक्तिपूण वणन किसी किसी रासो म उपलब्ध होता है।[68] इसी रासो म मदनेश' जी ने हाथी, घोडा ऊँटो व बर्लो आदि की सजावट के वणन मे जिस सामग्री को लिया है उससे उस समय की सस्कृति की झलक मिलती है।[69] इन रासो ग्रथो मे हाथी, घोडे ऊँट बैल आदि को सजाने की प्राचीन परम्परा का स्वरूप सुरक्षित है।

विवेच्य रासो काव्यो में शकुन, अपशकुन वणन मे पुरानी रीति का आलम्बन लिया गया है युद्ध के लिए प्रयाण के समय कवियो ने अपने काव्य नायको के लिए शुभ शकुनो का अवश्य वणन किया है। दाहिनी भुजा और नेत्र फडकना, हाथ में पुस्तक और गल मे माला धारण किए दो ब्राह्मणो के दशन होना शुभ सूचक है।[70] पण्डित मदन मोहन द्विवेदी मदनेश ने लक्ष्मीबाई रासो मे शकुन अपशकुन का विशद वणन प्रस्तुत किया है।[71] उन्होंने प्राचीन परम्परागत शुभ शकुन अपशकुनो की सूची के साथ-साथ कुछ नये शकुन अपशकुन भी दिए हैं।

(ग) साहित्यिक उपलब्धि

युद्ध रासो काव्यों का मूल तत्व है। प्रत्येक युद्धकामी नरेश युद्ध म विजय की महत्वाकाक्षा से प्रवृत्त होता था। युद्ध तत्कालीन नरेशो के लिए बठे ठाले का व्यापार बन गया था। राजा अपनी कीर्ति का वर्णन सुनने के आदी हो गये थे। इन राजाओं के द्वारा लड गय छोटे बडे युद्धो के वर्णन चारण, भाट तथा अन्य जाति के दरबारी कविया द्वारा रासो काव्यो के रूप म सुरक्षित रख गये। इनाम और जागीरें आदि प्राप्त करने के लोभ म कवियों ने अपन आश्रयदाताओं की वीरता का बखान बहुत बढा चढा कर किया। इसलिए इन रासो काव्यो म

ऐतिहासिकता तो अल्प परिमाण में आई है, परन्तु कल्पना की ऊँची उड़ान अवश्य देखने को मिल जाती है।

उस काल के राज्यतन्त्र ने जन मानस को राष्ट्रीयता के सीमित दायरे में बन्द कर दिया था। पडोसी राज्य एक दूसरे से किसी न किसी विवाद पर उलझते ही रहते थे तथा युद्ध करके आपस में कटते रहते थे। इन रासो काव्यों द्वारा सीमा विवाद तथा राज्य छीनने के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। पारीछत रायसा तथा 'बाघाट रायसा' में दतिया और टीकमगढ राज्यों के सीमा विवाद की घटना का ही उल्लेख है। 'झाँसी को राइसो' कल्याण सिंह कुड़रा कृत तथा 'मदनेश' कृत 'लक्ष्मीबाई रासो' में झाँसी तथा टीकमगढ राज्य के उस आपसी विवादजन्य युद्ध की भी घटना का उल्लेख है जिसमें कि टीकमगढ राज्य के दीवान नत्थे खाँ के द्वारा उकसाये जाने पर ओरछा की रानी लिडई सरकार ने झाँसी का राज्य छीनकर टीकमगढ राज्य में मिला लेने की नियति से झाँसी पर आक्रमण करवाया था। बहुत कम राज्यों के आपसी सम्बन्ध मधुर पाए जाने के विवरण प्राप्त हुए हैं। 'शत्रुजीत रासो' में ग्वालियर के सिंधिया महाराजा एवं दतिया नरेश शत्रुजीतसिंह के बीच आपसी सम्बन्धों की एक छोटी सी घटना को लेकर ही भयानक युद्ध छिड़ गया था। उपर्युक्त सभी विवरणों से तत्कालीन भारत के छोटे बड़े राज्यों की सीमित राष्ट्रीय भावना उजागर होती है।

विवेच्य रासो काव्यों में भारत में मुगल सत्ता के उत्कर्ष युग से लेकर अंग्रेजी सत्ता के पाँव जमने तक का काल आता है। अतः भारतीय नरेशों और मुगलों के तथा भारतीय नरेशों और अंग्रेजों के बीच विचारों के आदान प्रदान तथा आपसी सम्बन्धों का भी विशेष विवरण इन रासो काव्यों में सुरक्षित है। विदेशी धर्म और संस्कृति का प्रभाव भारतीय जनमानस पर भी पडा, जिसके परिणामस्वरूप हिंदू, मुसलमान और अंग्रेज एक दूसरे के निकट सम्पर्क में आए। इन कवियों ने जहाँ अपने आश्रयदाता राजा की प्रशंसा की है वहीं उस राजा से सम्बन्धित मुगल शासक की प्रशंसा भी स्वयमेव हो गई है। दतिया राज्य में शुभकरण और दलपतिराय के सम्बन्ध मुगल शासकों से अत्यन्त घनिष्ट रहे थे। महाराजा पारीछत अंग्रेज भक्त थे और इनकी तरह महाराजा विजयबहादुर भी अंग्रेजी सत्ता से जुड़े रहे। स्पष्ट होता है कि दतिया के नरेश पहले मुगलों से और बाद में अंग्रेजों से मित्रता स्थापित किए रहे। परन्तु झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने विदेशी शासन का घोर विरोध किया। झाँसी के जनकवियों ने जनमानस में देश प्रेम की भावनायें उत्पन्न करने की प्रेरणा देते हुए विदेशी शासकों से टक्कर लेने का साहस भी जागृत किया।

प्रधान कल्याण सिंह ने अंग्रेजों के मित्र दतियाधिपति विजय बहादुर के

राज्य म निवास करत हुए, अंग्रेजी सत्ता का विरोध करने वाली झाँसी की रानी का प्रशसा म झांसो को रायसौ लिखकर स्वदेश प्रेम का परिचय दिया। प० मन्न माहन द्विवेदी 'मदनेश' तथा भगी दाऊज श्याम ने महारानी लक्ष्मीबाई की वीरता एव देश रक्षा हित युद्ध का वणन करते हुए अपन काव्य म जन चेतना को देश हित की ओर आकृष्ट करन का आह्वान किया है।

आलोच्य रासो काव्यो म रस चित्रण के अतगत वीर रस को ही प्रधानता दी गई है। वीभत्स, भयानक रौद्र, करुण, शात आदि रसो के उदाहरण भी इन ग्रथो म पाये जाते हैं। अपने आश्रयदाता चरित नायक के बल-वैभव, वीरता आदि का बढा चढा कर वणन करन के लिए इन कवियो ने ओजपूण शब्दावली मे वीरता के स्वाभाविक वणन प्रस्तुत किए हैं। इन वीर प्रसगो मे युद्ध क्षेत्र म मारकाट आदि के वणनो म कुछ कवियो न सयुक्ताक्षर एव वर्णद्वित्व वाली 'टकार एव 'डकार युक्त शब्दावली का प्रयोग करके रस प्रवाह म किचित बाधा उपस्थित की है। करहिया को राइसो, पारीछत रायसा तथा 'मदनेश कृत 'लक्ष्मीबाई रासो में द्वित्व वण युक्त एव सयुक्ताक्षर शब्दावली का प्रयोग किया गया है। छछूदर रायसा, गाडर रायसा एव घूस रायसा म हास्य एव व्यग्य की सुदर याजना की गई है।

प्रकृति चित्रण इन रासो काव्यो म प्राय उपेक्षित रहा है। यदि किसी कवि न प्रकृति का वणन किया भी है ता केवल उसक उद्दीपन रूप का ही। इन कवियो न उत्प्रेक्षा के रूप म अत्यत सूक्ष्म परिमाण म सेना प्रयाण अथवा युद्धस्थल मे मारकाट क अवसर पर प्रकृति का साधारण वणन किया है। इस धारा के कविया म इस दृष्टि स स्वतन्त्र चितन का प्राय अभाव देखा जाता है व एक बँधी बधाई परिपाटी के अनुसार हा काव्य रचना म प्रवत्त रह ह।

भावात्मक दृष्टि स आलाच्य धारा के कवि चाहे भले ही अधिक सफल न रहे हो पर कलात्मक दृष्टिकाण से उन्ह बहुत सफलता प्राप्त हुई है। इन बुदेली रासो काव्या की यह उल्लखनीय विशेषता है कि ये सबके सब बुन्देलीबोली म लिखे गय हैं। वीर रस के काव्यो को बुदली जसी मधुर बोली म लिखने का कविया न सुदर प्रयास किया है। बुदली बाना क समृद्धिशाली स्वरूप का परिचय इस बात स और मुखर होना है कि इन कविया की इस योगा म अंग्रेजी उदू आदि विदेशी भाषाओं को भी स्वाभाविक रूप से आत्मसात किया गया है। ग्रामीण आचलिक शब्दावली स य रासो काव्य भरपूर है। पद्य ही नही बाघाइट को राइसो म बुदेली के गद्य का सुन्दर नमूना भी देखने का मिलता है। व्यग्य प्रधान हास्य रस क रासो ग्रथा म भाषा के बुन्देली प्रतीको का प्रयोग बहुत सुदर ढग स किया गया है।

छद विधान क क्षेत्र में बुदेली रासा काव्यो की एक विशिष्ट उपलब्धि

है। इन रासो काव्यों में कवियों द्वारा कुल मिलाकर ३८ प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया गया है। वीर काव्यों के लिए पृथ्वीराज रासो से जो दूहा, गाथा, कवित्त छप्पय, पद्धरी आदि छन्दों के प्रयोग की परम्परा रूढ़ सी हो गई थी, बुन्देलखण्ड के इन कवियों ने छन्द शैली में कुछ नवीनता उत्पन्न करते हुए अपने रासो काव्यों में कुछ और नये छन्दों को स्थान दिया है। बुन्देलखण्ड में लिखे गये रासो काव्यों में सर तथा मज जैसे कोमल छन्दों का भी प्रयोग किया गया है जो कि शृंगार अथवा माधुर्य पूर्ण भावों के काव्य में ही प्रायः प्रयुक्त किए जाते हैं। 'साखी' भी इसी प्रकार का छन्द है। पण्डित मदन मोहन द्विवेदी मदनेश' ने लक्ष्मीबाई रासो में साखी' का प्रयोग किया है। मज का प्रयोग भरोलाल' एवं 'भग्गी दाऊजू श्याम' ने अपने कटक ग्रन्थों में किया है। 'सर छन्द मदन मोहन द्विवेदी मदनेश ने बड़ी सफलता के साथ प्रयुक्त किया है। ये सर मज और साखी छन्द बुन्देलखण्ड के आधुनिक क्षेत्रों में ग्रामीणों द्वारा आज भी बड़ी मधुरता के साथ गाये जाते हैं। इस प्रकार के छन्दों के प्रयोग से बुन्देली रासो काव्यों की शोभा में वृद्धि ही हुई है।

बुन्देलखण्ड के कवियों द्वारा अपने इन रासो काव्यों में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण छन्द का प्रयोग किया गया है जो पहले के किसी भी कवि की वीर रचना में देखने को नहीं मिलता। यह छन्द 'किरवान या कृपाण नाम का है। इस छन्द के द्वारा जोगीदास किशुनेश श्रीधर, प्रधान कल्याणसिंह कुडरा तथा मदनेश ने अपने रासो ग्रन्थों में युद्ध क्षेत्र की मारकाट व वीभत्स तथा भयानक चित्र अत्यन्त स्वाभाविक रूप से अंकित किए हैं। 'किरवान को पढ़कर वीर हृदय में स्वाभाविक जोश उमड़े बिना नहीं रहता अतः यह छन्द रासो काव्यों की प्रकृति के पूर्णतः अनुकूल है।

विवेच्य रासो काव्यों में अलंकारों का विशेष प्रोत्साहन नहीं मिला। उस प्राचीन परम्परा के अनुसार ही उपमा उत्प्रेक्षा रूपक अनुप्रास अनन्वय प्रतीप, सन्देह तथा वक्रोक्ति आदि अलंकारों का ही प्रयोग इन कवियों के द्वारा किया गया है। परन्तु इस धारा के कवियों द्वारा अलंकारों का चमत्कारिक प्रयोग नहीं किया गया तथा अलंकारों की छटा में काव्य की रसवत्ता कहीं भी नष्ट नहीं होने पाई। प्रधान कल्याणसिंह कुडरा मदनेश, द्विज किशोर', भरोलाल आदि कवियों द्वारा अलंकारों का साधारण प्रयोग किया गया है। हास्य रासो काव्यों में भी अलंकारों को अत्यन्त साधारण रूप में अपनाया गया है।

उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट होता है कि बुन्देलखण्ड के रासो काव्यों द्वारा तत्कालीन ऐतिहासिक एवं सामाजिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक तथा साहित्यिक स्वरूप पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

सदभ

१ वीर काव्य डॉ० उदय नारायण तिवारी, भूमिका भाग, पृ २२

२ हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास, प्रथम भाग, स डॉ० राजबली पाण्डेय, ना प्र स काशी प्रथम स २०१४ पृ ५६

३ वही पृ ६३   ४ वही पृ ६३

५ दतिया दशन श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ६

६ वही, पृ ६   ७ वही, प ६

८ वही प ६   ९ वही, प १०

१० वही, प ११

११ हिंदी वीर काव्य डॉ टीकमसिंह तोमर, पृ ३३३

१२ वही, प ३३३   १३ वही, पृ ३३३

१४ वही, प ३१४   १५ वही, पृ ३३४

१६ दतिया दशन, स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १२

१७ शत्रुजीत रासो–किशुनेश भाट कृत स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य वष ५ जनवरी सन् १९६०, प १६३ छ० १६२

१८ वही, पृ १८५ छ० ३८४

१९ दतिया दशन स श्री हरिमोहन लाल पृ १३

२० वही, पृ १३

२१ वीरागना लक्ष्मीबाई 'रासो और कहानी' स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १०

२२ लक्ष्मीबाई रासो स श्री भगवानदास माहौर डाक्टर, एम० ए०, पी एच० डी०, भूमिका पृ १३

२३ वही, भाग २ प १०

२४ वही, पृ २२   २५ वही भाग ३ पृ २१ छ० १७

२६ वही, भूमिका प ६२   २७ वही, भूमिका टिप्पणियाँ पृ १३१

२८ झाँसी की रानी–उपन्यास डॉ० वृन्दावन लाल वर्मा, पृ ३११

२९ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर, भूमिका पृ ६२

३० वही पृ ६३   ३१ वही भाग २ पृ १०

३२ वही प १२   ३३ वही, प १५

३४ वही, पृ १५   ३५ वही, भाग ३ पृ १९

३६ वही, पृ २४   ३७ वही, पृ २९

३८ वही भाग ४ पृ ३५   ३९ वही, पृ ३७–३८

४० वही भाग ५ पृ ४२   ४१ वही पृ ४९

४२ लक्ष्मीबाई रासो स डॉ० भगवानदास माहौर, भाग ५ पृ ५०
४३ भाग ३ पृ १७   ४४ वही, भाग ५ पृ ४६
४५ वही, भाग ३ प १७   ४६ वही, प २४
४७ वही, भाग ५ पृ ३८   ४८ वही, प ४८
४६ वही, भूमिका पृ ६४
५० जोगीदास का दलपति राव रायसा, श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ४३६–४४० छन्द १११–११२
५१ वही, ना प्र पत्रिका, नवीन स भाग १० १६८६ वि ७८ छन्द ५ से ८ प ४२५ व ४२८प २७७
५२ शत्रुजीत रासो स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव प १८४
५३ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ७४
५४ वही पृ ११८   ५५ वही प ११८
५६ शत्रुजीत रायसा स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प १६३
५७ श्रीधर का पारीछत रायसा स श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव पृ ७६ से ७८
५८ वही, प ८० व ६२
५६ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर भाग ४ पृ ३३–३४
६० वही पृ ३६   ६१ वही, पृ ३७
६२ श्रीधर का पारीछत रायसा स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ७८
६३ शत्रुजीत रासो स हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, प १७३ से १७५
६४ श्रीधर का पारीछत रायसा स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, प ८१–८२
६५ शत्रुजीत रासो स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ १६३–१६४
६६ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर भाग १ पृ ४
६७ वही, भाग ३, पृ ३३
६८ वही, भाग ३, पृ १८–१६
६६ वही, पृ ३१–३२
७० श्रीधर का पारीछत रायसा स हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, पृ ८६
७१ लक्ष्मीबाई रासो स डा० भगवानदास माहौर, भाग २ पृ १०, १४, भाग ७ प ६४, भाग ८, प १०४

परिशिष्ट—एक

'बुन्देलखण्ड के रासोकाव्य' शीर्षक शोध प्रबन्ध मे विवेचित रासोकाव्यो के अतिरिक्त कुछ और रासोकाव्य उपलब्ध हुए हैं। 'जनन्य ग्रन्थागार सेंवढा' से 'भगवन्त सिंघ रासो नवाब पुरदल खां कौ समय' तथा बाघाट कौ समयो दो रासोकाव्य प्राप्त हुए हैं। ग्राम भोबई जिला दतिया, म० प्र० के श्री द्वारिका प्रसाद राना से साहिबराय कृत शत्रुजीत रासो प्राप्त हुआ है। इन रासो ग्रथो की पाण्डुलिपियाँ इन्ही स्थानो पर सुरक्षित हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण रासो खण्डेराय रासो' की सूचना भी मिली है। इन रासो काव्यो का सक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जा रहा है।

खण्डेराय रासो

खण्डेराय रासो की पूर्ण प्रति देखने को नहीं मिल सकी। उपलब्ध सूचना के अनुसार खण्डेराय रासो की मूलप्रति ग्वालियर राज्य के सरदार फालके के यहाँ है। यह रचना अभी तक अप्रकाशित है। ४८ समयो मे इस रासो की कथा वर्णित है। एक समय' का शीर्षक जग जसो महाकाव्य दिया गया है। इसमे १७ सर्ग हैं। इस प्रकार सहज अनुमान है कि यह एक विशालकाय रासोकाव्य है। इसमे खण्डेराय के द्वारा लड़े गये पच्चीस युद्धो का वर्णन सुरक्षित है। खण्डेराय नरवर के राजा अनूपसिह, गजसिह और छत्रसिह के सेनापति रहे थे। खण्डेराय रासो की रचना मे कृष्ण कवि, उदोत धमपाल, नौन, प्रेम भानराउ, जदुनाथ स्वरूपराम, सन्तोषराइ, बखतराव, माधौ खेम, मल्ल, करन चूरनराय रतन कविदास सुखराम, गग भूधर, गुमानराय, अनूप केसौराय और धीर आदि चौबीस कवियों का योगदान है। इसकी रचना सवत् १८०५ मे पूर्ण हुई। इसमे चालीस से अधिक छन्दों के प्रकार हैं। इस रचना से अठारहवी सदी की एतिहासिक घटनाओ पर प्रकाश पड़ता है।

'भगवन्त सिंघ रासो नवाब पुरदल खां कौ समय'

पाण्डुलिपि का आकार लगभग २० सेमी० × १० समी० है। इसमे दोनो ओर लिखे हुए चौदह पन्ने या २८ पृष्ठ हैं। काली व लाल स्याही का व्यवहार है। कुल छन्द सख्या ७५ है। छन्द क्र २७ तथा ३५ मे एक एक पक्ति कम है। कुछ पन्ने नीली स्याही मे भी लिखे गय हैं। छन्द क्रमाक लाल स्याही [illegible] गय हैं।

प्राप्त पाण्डुलिपि मे रचनाकार के नाम का स्पष्ट उल्लेख नही पाया जाता है। पाण्डुलिपि के प्राप्ति स्थान तथा प्रधान बाजूराय के वंशजो से इदुरखी के गौरो से सतत सम्पर्क से अनुमान है कि यह कृति प्रधान बाजूराय की है। इस प्रति की समाप्ति पुष्पिका म मुकाम सहुडौ सवत १८७४ दिया हुआ है। यह समय प्रधान बाजूराय की कविता का है। बाजूराय की एक अन्य रचना दफ्तर नामा' की समाप्ति पुष्पिका मे 'इदुरखी की उल्लेख होने से भी यह स्पष्ट है कि प्रधान बाजूराय ने इदुरखी के गौरा मे सम्बंधित रचनायें लिखी। परन्तु श्री गगाराम शास्त्री भाषा, क्रियापद, नामवणन शैली, युद्ध व सेना वणन, समयोल्लेख प्रणाली आदि म भिन्नता दर्शाते हुए इस कृति को सबसुख (सवत् १७५४ वि) की मानते हैं। सबसुख इदुरखी के गौरो के आश्रित कवि रहे और वे सवत १७५४ वि० म विद्यमान थे।

भगवत सिंघ रासा नवाब पुरदल खाँ की समय मे इदुरखी के गौर राजा भगवत सिंह तथा सम्राट औरगजेब की ओर से कालपी म नियुक्त फौजदार पुरदल खा के मध्य हुए युद्ध का वणन है। यह युद्ध रासा के अनुसार सवत १७४२ वि० तदनुसार सन् १६८५ ई अक्टूबर मास मे पाडौरी (भाण्डेर जिला ग्वालियर के निकट) नामक स्थान पर हुआ था। इस युद्ध म पुरदल खाँ मारा गया था। पुरदल खाँ के स्थान पर गरत खा की नियुक्ति हुई थी।[1] भगवत सिंघ रासा म इदुरखी के गौरों द्वारा हतिकान्त के राजा को मारने और बदी व अनिरुद्धराव हाडा को पराजित करने वाले दो युद्धो की भी सूचना दी गई है—

प्रथम जुध्ध जुरि गौर हन्यौ हथिकायनाथ वर।
दुतिय जुध्ध अनिरुद्ध राव हाडा प्रचड वर॥

इस रासो म सेना प्रयाण तथा युद्ध वणन पारम्परिक शैली म होने हुए भी स्वाभाविक बन पडे हैं। गौरो की सेना के प्रमुख वीरो व युद्ध कौशल और शौय की प्रशसा अच्छी की गई है।

भगवत सिंघ रासो की भाषा बुदेली है। पर इस रचना म कवि ने सस्कृत, उर्दू, अरबी तथा फारसी की शब्दावली का भी प्रयोग किया है। बुदेली कोमलता और मिठास के लिए प्रसिद्ध होने पर भी कवि को इस भाषा म वीररस व्यजक वणना म पूण सफलता प्राप्त हुई है। सयुक्ताक्षर, वण द्वित्व और अनुस्वार प्रयोग द्वारा भाषा मे ध्वन्यात्मकता और प्रभावोत्पादकता पैदा की गई है। 'मध्धि', अद्द', प्रस्यौ जैसे शब्दो म अपभ्रशाभासत्व है तो सज्जव, घुध्घरिग जैसे शब्द प्रयोग डिंगल का प्रतिनिधित्व करते हैं। भाषा के स्तर पर कवि ने इस रासो म अयथ्याप्ति के अनोखे प्रयोग किए हैं। भाषा को शक्ति सम्पन्न बनाने के लिए मुहावरा का प्रयोग भी किया गया है।

भगवत सिंघ रासा मे दोहा, मोतीदाम, पद्धरी, छप्पय, त्रिभंगी, भ्रामवल्ली आदि छ प्रकार के छन्दो का प्रयोग हुआ है। कवि ने मोतीदाम को बडा छन्द कहा तथा भ्रामवल्ला को भ्रमावली और दोहा को दोहरा के रूप मे भी प्रयोग किया है। अलकारो मे उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा के कतिपय प्रयोग हैं। प्रकृति चित्रण आलम्बन और उद्दीपन रूप मे पाया जाता है।

इदुरखी के गौर राजवश से सम्बन्धित तीन पुरानी वशावलियाँ भी उपलब्ध हुई हैं जिनके अनुसार वाघराज–वच्छराज की सातवी पीढी मे कृपाराम गौर इदुरखी के प्रथम शासक हुए और सवत् १८४० वि० मे हेतसिह गौर के समय इदुरखी ग्वालियर के सिंधिया राज्य मे विलीन कर ली गई थी। हेतसिह गौर दतिया राज्य म आ वसे थे। सम्राट जहाँगीर के द्वारा गौरो को इदुरखी का इलाका प्रदान किया गया था और सवत् १८४० तक लगभग १०० वर्षों से अधिक इदुरखी पर गौरों का आधिपत्य रहा। सक्षेप म यह कहा जा सकता है कि भगवत सिंघ रासो नवाब पुरदल खाँ के समय की घटनावली और पात्र पूणत इतिहास सम्मत हैं। यह एक ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूण कृति है।

साहिबराय कृत शत्रुजीत रासो

इस रासो की पाण्डुलिपि १२ इच लम्बी और ६ इन्च चौडी है। इसमे कुल चौन्ह पन्ने हैं। हासिया तीन तरफ एक एक इच। सवत्र काली स्याही का प्रयोग गया किया है। छन्द सख्या लाल स्याही स डाली गई है। बीच मे छन्द सख्या का क्रम भग हुआ है। छन्द क्र ५५ के पश्चात् पुन ४५ से छन्द क्रम प्रारम्भ हुआ है। तालव्य 'श' का प्रयोग नही किया गया है।

कवि साहिबराय दतिया जिले की सीमा से सटे हुए डबरा क्षेत्र के जटवारे म ग्राम वनवार के निवासी थे और जाट चौरासी के मुख्यालय इन्दरगढ़ म आकर बस गय थे जो दतिया रियासत म था। इनके पुत्र का नाम बकट राना था और बकट राना के पुत्र घमन्डी लाल थे जो सुकवि लाल के नाम से कविता करते थे। कवि साहिब राय की तीन कृतिया उपलब्ध हुयी हैं–भुवन पचीसी, शत्रुजीत की रासो तथा कुरुक्षेत्र तरग। भुवन पचीसी का प्रतिलिपि काल सवत् १८२३ तथा कुरुक्षेत्र तरग का रचनाकाल सवत् १८७४ वि० दिया हुआ है। शत्रुजीत रासो में वर्णित घटनायें सवत् १८५५ वि० स लेकर स० १८५८ वि० तक की हैं। इससे ज्ञात होता है कि कवि साहिबराय दतिया नरेश शत्रुजीत के समकालीन और आश्रित कवि थे। इनका रचनाकाल सवत् १८२० वि० स सवत् १८७४ तक रहा होगा।

साहिबराय कृत शत्रुजीत रासो में ग्वालियर के सिंधिया दौलतराव और

दतिया नरेश शत्रुजीत के मध्य हुए युद्धा का वर्णन किया गया है। इस रासा के अतिरिक्त किशुनेश द्वारा प्रणीत शत्रुजीत रासा का विवेचन इस शोध प्रबंध में किया जा चुका है। दतिया नरेश और दौलतराव सिंधिया के मध्य युद्ध का प्रमुख कारण महदजी सिंधिया की विधवा पत्नियो (भागीरथीबाई यमुनाबाई लक्ष्मीबाई) को दतिया राज्य मे सेवढा दुर्ग मे आश्रय देना था। साहिबराय कृत शत्रुजीत रासो मे मुख्य रूप से इन्दरगढ के निकट कजौली और सेवढा के निकट ग्राम बरहा जिला भिण्ड मे हुए दो युद्धो का वर्णन किया गया है। इस संग्राम की स्मृति मे बरहा के खाद मे निर्मित हाथीवान के चबूतरा का भग्नावशेष आज भी है। इस भीषण युद्ध मे सिंधिया का फ्रासीसी सेना नायक पीरू बुरी तरह घायल होकर लौट गया था। दतिया नरेश शत्रुजीत घायल होकर स्वर्ग सिधारे थे। महदजी का विश्वस्त सेनानायक लकवा दादा घायल होकर नौ माह बाद मर गया था। अवाजी इगले ने दतिया को तब तक घेरे रखा था जब तक उसे कुछ धन नही मिल गया था। पर दतिया रियासत इतनी शक्ति सम्पन्न तो थी ही कि सिंधिया उसे मराठा राज्य मे मिला नही सके।

साहिबराय की काव्य भाषा बुंदेली है। उर्दू शब्दो का बुंदली सस्करण बहुत स्वाभाविक रूप से आया है। मसलति जालिमि लाइक हुस्यार हुसियार जिहान आदि ऐसे ही शब्द हैं। वर्णद्वित्व और अनुस्वारात प्रयोगो ने भाषा को रासो के अनुरूप बनाया है। साहिबराय ने छप्पय कवित्त पध्धरी दोहरा महान राच, लघुनराच त्रिभगी, भुजगी, चौपही, मोतीदाम, अरिल्ल आदि छन्दो का प्रयोग किया है। कवि ने मुरिल्ल नाम के एक छन्द का भी प्रयोग किया है जो अरिल्ल जसा ही है। कवि को रासो के अनुरूप वीर वीभत्स, रौद्र और भयानक रसा के चित्रण मे सफलता प्राप्त हुई है। सेना प्रयाण तथा युद्ध वर्णना मे प्रकृति का उद्दीपन रूप मे चित्रण किया गया है। उपमा रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलकारो का सीमित पर स्वाभाविक प्रयोग साहिबराय ने किया है। रासो का एक छन्द इस प्रकार है–

'आयौ साजि दल सौ समह रघुनाथ राइ।
छ हजार असवार ल निवर क।
सामन महीना कसी फौजन की घटा ऊभी।
धाए धुरवा से घोरे खग खटकेर के॥
पज कौ पहार है जवाहर सीघ चहुवान।
ज्यौ रनभूम जहा स्यार सटकेर क।
जसे पवगनि मे बागनि के पौधा उठे।
भादा कस कौधा तेगा कौंधें घघेरे के॥'

संक्षेप में यह स्पष्ट है कि कवि ने इस कृति में चमत्कार प्रदर्शन नहीं किया। इस रासो के पात्र और घटनायें इतिहास सम्मत हैं।

बाघाट कौ समयौ

बाघाट कौ समयौ प्रधान बाजूराय की काव्य कृति है। इसकी पाण्डुलिपि 'जनय ग्रन्थागार सेवढ़ा में सुरक्षित है। पाण्डुलिपि का आकार ८ × ६' है। इस पाण्डुलिपि में ११ पत्र दोनों ओर लिखे हुए तथा एक पृष्ठ एक ओर लिखा कुल २३ पृ हैं। कुल छन्द संख्या १२३ है। रचना में छन्द क्र १२१ तथा १२२ में रचनाकार बाजूराय श्रीवास्तव कायस्थ कन्हरगढ़ (सेंवढ़ा) तथा छन्द क्रमांक १२३ में रचना तिथि संवत् १८७६ वि० का उल्लेख किया गया है।

प्रधान बाजूराय का जो वंशवृक्ष प्राप्त हुआ है उसके अनुसार इनके पिता का नाम ननसुख (शक्तिसिंह) था। इनके बड़े भाई सनसुख भी कविता करते थे। सेंवढ़ा के चौकीनवीस अछरजू का कन्या दवकुंवरि से इनका विवाह हुआ था। अछरजू ने इन्हें कमठाना (लोकनिर्माण विभाग) दान में दिया था और बाजूराय को संवत् १८४८ में दतिया से सेवढ़ा बुलवा लिया था। महाराजा पारीछत के शासनकाल में प्रधान बाजूराय ने सेंवढ़ा दुर्ग का तीसरा कोट धूरकोट बनवाया था। प्रधान बाजूराय की जो रचनायें उपलब्ध हुई हैं— (१) कृष्ण चन्द्रिका (भागवत दसम स्कंध का पद्यानुवाद) २ बाघाट कौ समयौ ३ स्फुट कवित्त ४ नवप्रकास और ५ दफ्तरनामा हैं।

दतिया के बुन्देला नरेशों में महाराजा पारीछत ने सर्वाधिक प्रसिद्धि पाई। अपने पिता महाराजा शत्रुजीत के समय से मुगलों मराठों और अंग्रेजों के मध्य राजनैतिक गतिविधियों में महाराजा पारीछत अग्रणी रहे। अपने शासनकाल में अंग्रेजों से इन्होंने हर सम्भव मधुर सम्बन्ध बनाये रखे। इनके शासन के समय में ही बाघाट की घटना घटित हुई जिसके सम्बन्ध में चार कवियों ने चार रासो रचनायें लिखकर महाराजा पारीछत की शक्ति एवं वैभव की प्रशंसा की।

बाघाट समयौ में मुख्य घटना दतिया तथा ओरछा राज्यों के सीमा विवाद के कारण हुई एक छोटी सी झड़प है। बाघाट स्थित ओरछा के दीवान गन्धर्वसिंह ने दतिया राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र का हड़पने की नियति से दतिया के एक गाँव पुतरायेरा में आग लगवा दी और वहाँ के निवासियों को परेशान किया। तरीचर गाँव में दतिया राज्य की ओर से नियुक्त किलेदार लल्ला दुआ ने एक पत्र लिख कर घटना की सूचना दतिया नरेश को दी। तब सेंवढ़ा के दीवान अमानसिंह और दतिया के दीवान दिलीपसिंह के नेतृत्व में दतिया की सेना ने बाघाट पर चढ़ाई की। बाघाट का गन्धर्वसिंह पमार पराजित हुआ उसने म्यारह गाँव कारे

गये। अंग्रेजों के बुन्देलखण्ड स्थित पौलीटिकल एजेन्ट ने घटना की सूचना दो पत्रो मे अंग्रेजो को दी थी। झांसी के गोपाल भाऊ न ओरछा और दतिया के बीच इस तनाजे म मध्यस्थता की थी। दतिया नरेश न गन्धर्वसिंह पमार मे दतिया राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र को मुक्त कराकर वाघाट का क्षेत्र ओरछा के लिए यथावत छोड दिया था।

इस छोटे से रासो म बुन्देलखण्ड मे अंग्रेज मराठा और बुन्देला नरेशो के परस्पर राजनीतिक और सांस्कृतिक आदान प्रदान का परिदृश्य स्पष्ट होन के साथ साथ ऐतिहासिक तथ्यों की प्रामाणिकता भी है।

सन्दभ

१ महाराजा छत्रसाल बुन्देला—डा० भगवानदास गुप्त शिवलाल एण्ड कम्पनी, आगरा सन् १९५८ ई०।

परिशिष्ट-दो

सहायक ग्रन्थ

१ अक्षर अनन्य-श्री अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद भोपाल, सन् १९६६ ई० ।

२ काव्य प्रदीप-श्री रामबहोरी शुक्ल, हिन्दी भवन, इलाहाबाद, सन् १९५२

३ केशव ग्रन्थावली, खण्ड ३-श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद, प्रथम सस्करण सन् १८५९ ई० ।

४ छत्रप्रकाश-डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह पटल प्रकाशन, नई दिल्ली-१८, सन् १९७३ ई० ।

५ जोगीदास का दलपति राव रायसा-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव भारतीय साहित्य, कन्हैयालाल मुशी विद्यापीठ, आगरा जनवरी १९५८ ई० ।

६ डिंगल म वीर रस-श्री मोतीलाल मेनारिया, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, चतुर्थ सस्करण, सवत २००८ वि० ।

७ दतिया दर्शन-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, विंध्यप्रादेशिक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन स्वाधीन प्रेस, झासी, फरवरी १९५६ ई० ।

८ द मुगल अम्पायर (१५२६-१८०३)-ले० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, चतुर्थ सस्करण ।

९ दैनिक मध्यदेश-दीपावली विशेषाक सन् १९७१ ई०, झासी ।

१० नागरी पत्रिका-भाग १० सवत् १९८६ वि०, नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

११ पद्माकर ग्रन्थावली-श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र नागरी प्रचारिणी सभा काशी सवत २०१६ वि० ।

१२ बाघाट रासो-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, कन्हैयालाल मुशी हिन्दी विद्यापीठ आगरा, अक्टूबर १८६१ ।

१३ बुन्देलखण्ड की सस्कृति और साहित्य-श्री रामचरण हयारण मित्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली सन् १९६६ ई० ।

१४ बुन्देल खण्ड का सक्षिप्त इतिहास-श्री गोरेलाल तिवारी, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सवत १९९० वि० ।

१५ बुन्देल वैभव, भाग १ २-श्री गौरीशकर द्विवेदी शकर,' शान्ति प्रेस, आगरा, सवत् १९९० वि० ।

गये। अग्रेजो के बुन्देलखण्ड स्थित पौलीटिकल एजेन्ट ने घटना की सूचना दो पत्रो मे अग्रेजो को दी थी। झाँसी के गोपाल भाऊ ने ओरछा और दतिया के बीच इस तनाजे मे मध्यस्थता की थी। दतिया नरेश ने गन्धर्वसिह पमार से दतिया राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र को मुक्त कराकर बाघाट का क्षेत्र ओरछा के लिए यथावत छोड दिया था।

इस छोटे से रासो म बुन्देलखण्ड मे अग्रेज मराठा और बुन्देला नरेशो के परस्पर राजनीतिक और सास्कृतिक आदान प्रदान का परिदृश्य स्पष्ट होने के साथ साथ ऐतिहासिक तथ्यो की प्रामाणिकता भी है। ●

सन्दभ

१ महाराजा छत्रसाल बुन्देला—डा० भगवानदास गुप्त शिवलाल एण्ड कम्पनी, आगरा, सन् १९५८ ई०।

परिशिष्ट-दो

सहायक ग्रन्थ

१ अक्षर अनन्य-श्री अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव, मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद भोपाल, सन् १६६६ ई०।

२ काव्य प्रदीप-श्री रामबहोरी शुक्ल हिन्दी भवन, इलाहाबाद, सन् १६५२

३ केशव ग्रथावली, खण्ड ३-श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद, प्रथम सस्करण सन् १८५६ ई०।

४ छत्रप्रकाश-डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह, पटल प्रकाशन, नई दिल्ली-१८, सन् १६७३ ई०।

५ जोगीदास का दलपति राव रायसा-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव भारतीय साहित्य, कन्हैयालाल मुशी विद्यापीठ, आगरा, जनवरी १८५८ ई०।

६ डिंगल मे वीर रस-श्री मोतीलाल मेनारिया, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, चतुथ सस्करण, सवत २००८ वि०।

७ दतिया दशन-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, विंध्यप्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, स्वाधीन प्रेस, झासी, फरवरी १६५६ ई०।

८ द मुगल अम्पायर (१५२६-१८०३)-ले० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, चतुर्थ सस्करण।

६ दैनिक मध्यदश-दीपावली विशेषाक सन् १६७१ ई०, झासी।

१० नागरी पत्रिका-भाग १० सवत् १६८६ वि०, नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

११ पद्माकर ग्रथावली-श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र नागरी प्रचारिणी सभा काशी सवत २०१६ वि०।

१२ बाघाट रासो-श्री हरिमोहन लाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, कन्हैयालाल मुशी हिन्दी विद्यापीठ आगरा अक्टूबर १८६१।

१३ बुन्देलखण्ड की सस्कृति और साहित्य-श्री रामचरण हयारण मित्र, राजकमल प्रकाशन दिल्ली सन् १६६६ ई०।

१४ बुन्देलखण्ड का सक्षिप्त इतिहास-श्री गोरेलाल तिवारी नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सवत १६६० वि०।

१५ बुन्देल वभव, भाग १, २-श्री गौरीशकर द्विवेदी 'शकर,' शान्ति प्रेस, आगरा, सवत् १६८० वि०।

१६ भाषा विज्ञान–डा० श्यामसुन्दर दास, नवम् संस्करण, सं० २०२४ वि० लीडर प्रेस, प्रयाग।

१७ महाराजा छत्रसाल बुन्देला–डॉ० भगवान दास गुप्त शिवलाल एण्ड कम्पनी, आगरा सन् १८५८ ई०।

१८ मधुकर पत्रिका–वर्ष १, अंक १२, १६ मार्च १८४१ ई०।

१९ मधुकर पत्रिका–वर्ष २ अंक १४, अप्रैल १८४२ ई०।

२० म आसिर–उल उमरा–हिन्दी भाग १ श्री बृजरत्न दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, संवत १८८८ वि०।

२१ मध्य प्रदेश संदेश–मई, १८७५, लोक संचालनालय, मध्य प्रदेश भोपाल।

२२ मासिर ई आलमगीरी–सरजदुनाथ सरकार।

२३ राजस्थानी भाषा और साहित्य–मोतीलाल मनारिया, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग संवत् २००८ वि०।

२४ रामचरित मानस–तुलसीकृत गीताप्रेस गोरखपुर सत्तरहवां संस्करण, संवत २०३० वि०।

२५ रासा समीक्षा–श्री सदाशिव दीक्षित प्रकाशक आचार्य मथुरा प्रसाद दीक्षित संस्कृत पुस्तकालय वाराणसी।

२६ रासा साहित्य विमर्श–डा० माताप्रसाद गुप्त, साहित्य भवन प्रा० लि० इलाहाबाद, प्रथम संस्करण सन् १८६२ ई०।

२७ रेवालट समया–डॉ० ईश्वर दत्त शील अनुसधान प्रकाशन कानपुर।

२८ लक्ष्मीबाई रासो–डा० भगवान दास माहौर प्रथम संस्करण सन् १८६६, झांसी।

२९ विन्ध्य भूमि–वर्ष २ अंक ३, शरद संवत् २०११ विक्रमी।

३० विन्ध्य शिक्षा–श्री रामसिंह चतुर्वेदी रीवा फरवरी सन् १९५६ ई०।

३१ वीरकाव्य–डा० उदयनारायण तिवारी, भारती भण्डार लीडर प्रेस प्रयाग, संवत् २०२१ वि० दिनांक १६–५–६४।

३२ वीरांगना लक्ष्मीबाई रासो और कहानी–श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव सहयोगी प्रकाशन मन्दिर, साहित्य पुस्तकालय, दतिया सन् १८५३ ई०।

३३ बीसल देव रासो–श्री सत्य जीवन वर्मा, एम० ए०, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, चतुर्थ संस्करण, संवत् २०१६ वि०।

३४ शत्रुजीत रासो–किशुनेश, हरिमोहनलाल श्रीवास्तव भारतीय साहित्य, कन्हैयालाल मुंशी हिन्दी विद्यापीठ, आगरा, जनवरी सन् १८६० ई०।

३५ श्रीधर का पारीछत रासो–श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव, भारतीय साहित्य, क० मु हिन्दी विद्या० आगरा, अप्रैल १८५९ ई०।

३६ हिन्दी भाषा का इतिहास–डा० धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग, पंचम संस्करण, सन् १९५८ ई० ।

३७ हिन्दी वीर काव्य–डा० टीकमसिंह तोमर, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण सन् १९५४ ई० ।

३८ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास–डा० रामकुमार वर्मा, रामनारायण लाल एण्ड संस, प्रयाग, सन् १९४८ ई० ।

३९ हिन्दी साहित्य का इतिहास–श्री रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

४० हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, प्रथम भाग राजबली पाण्डेय नागरी प्रचारिणी सभा काशी, संवत् २०१४ वि० ।